HM-07

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

Communication Management:EXTENSION EDUCATION

संचार प्रबन्ध: प्रसार शिक्षा

HM-07

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

Communication Mangement:EXTENSION EDUCATION

संचार प्रबन्ध:प्रसार शिक्षा

HM-07

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

पाठ्यक्रम अभिकल्प समिति

संरक्षक
प्रो. अशोक शर्मा
कुलपति
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

अध्यक्ष
प्रो. एल.आर. गुर्जर
निदेशक (अकादमिक)
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

संयोजक एवं सदस्य

संयोजक
प्रो.(डॉ.) एच.बी.नन्दवाना
निदेशक,सतत शिक्षा
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

समन्वयक
डॉ. क्षमता चौधरी
सहायक आचार्य, अंग्रेजी
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

सदस्य

प्रो. नीलिमा वर्मा
आचार्य,
महारानी लक्ष्मीबाई स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
भोपाल(म. प्र.)

प्रो.शशि जैन
आचार्य,
एम.पी.यू.ए.टी. उदयपुर,

प्रो. सुमन सिंह
आचार्य,
एम.पी.यू.ए.टी. उदयपुर

श्रीमती अंजली सक्सेना
व्याख्याता ,
माँ भारती पी.जी.कॉलेज,कोटा

पाठ्य लेखन
समन्वयक
डॉ. क्षमता चौधरी
सहायक आचार्य, अंग्रेजी
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

सम्पादक (भाषा)
डॉ. मीता शर्मा
सहायक आचार्य, हिन्दी
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

पाठ्यक्रम लेखन

1 **प्रो. नीलिमा वर्मा**
आचार्य, महारानी लक्ष्मीबाई
स्नातकोत्तरमहाविद्यालय,आचार्य,
भोपाल(म. प्र.)

2 **डॉ. बिंदु चतुर्वेदी**
व्याख्याता,
जे.डी.बी. कॉलेज, कोटा

3 **सुश्री मीनाक्षी यादव**
व्याख्याता,
एस.के. टी.टी. कॉलेज, कोटा

4 **सुश्री रेनू शर्मा**
व्याख्याता,
शिव ज्योति कॉलेज, कोटा

5 **श्रीमती लता हुड्डा**
शोद्यार्थी, (जे.आर.एफ)
गृह विज्ञान
जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय,जोधपुर

6 **श्रीमती अंजली सक्सेना**
व्याख्याता ,
माँ भारती पी.जी.कॉलेज,कोटा

7 **सुश्री वीनू यादव**
व्याख्याता (अतिथि संकाय)
डी.ए.वी. कॉलेज, दिल्ली

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो. अशोक शर्मा
कुलपति
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

प्रो. एल.आर. गुर्जर
निदेशक)अकादमिक(
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

प्रो. करण सिंह
निदेशक
पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण प्रभाग
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

डॉ. सुबोध कुमार
अतिरिक्त निदेशक
पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण प्रभाग
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

उत्पादन 2016

इस सामग्री के किसी भी अंश को व.म.खु.वि.वि., कोटा, की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है। व.म.खु.वि.वि., कोटा के लिए कुलसचिव, व.म.खु.वि.वि., कोटा (राजस्थान) द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित ।

HM0-8

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

अनुक्रमणिका

इकाई संख्या	इकाई का नाम	पृष्ठ संख्या
इकाई1-	गृह विज्ञान का विषय परिचय	1
इकाई2-	प्रसार शिक्षण	14
इकाई3-	प्रसार शिक्षा : दर्शन, सिद्धान्त एवं विशेषताएं	25
इकाई 4-	प्रसार एवं संचार सम्पर्क विधिया व्यक्तिगत सम्पर्क विधियां	43
इकाई5-	संचार	58
इकाई6-	सामुदायिक विकास	71
इकाई7-	संचार प्रक्रिया के तत्व	88
इकाई8-	संचार के क्षेत्र एवं कार्य	100
इकाई9-	गैर सरकारी संगठन	113
इकाई10-	सरकारी संगठन	132
इकाई11-	कार्यक्रम नियोजन	149
इकाई12-	कार्यक्रम	167
इकाई13-	मूल्यांकन	180
इकाई14-	जन एवं सामुदायिक संचार	199
इकाई15-	कम्प्यूटर के उपयोग	211

इकाई 1

गृह विज्ञान का विषय परिचय

1.0 उद्देश्य
1.1 प्रस्तावना
1.2 गृह विज्ञान की परिभाषा
1.3 गृह विज्ञान के क्षेत्र
1.4 विभिन्न क्षेत्रों में गृह विज्ञान का योगदान
1.5 गृह विज्ञान में रोजगार
1.6 गृह विज्ञान का अन्य विषयों से पारस्परिक सम्बन्ध
1.7 गृह विज्ञान का महत्व
1.8 सारांश
1.9 अभ्यास प्रश्न
1.10 संदर्भ ग्रन्थ

1.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययनोंपरांत विद्यार्थी -

1. गृह विज्ञान की परिभाषा समझ सकेंगे ।
2. विभिन्न क्षेत्रों में गृह विज्ञान के योगदान की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
3. गृह विज्ञान में रोजगार की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
4. गृह विज्ञान के विविध क्षेत्र की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे
5. गृह विज्ञान के विषयों में पारस्परिक सम्बन्ध की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे
6. गृह विज्ञान के महत्व को रेखांकित कर सकेंगे ।

1.1 प्रस्तावना

देश तथा राष्ट्र का विकास मानव मात्र का विकास ही है और मानव परिवार में जन्म लेता पलता है ।उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास भी यहां से आरंभ होता है। व्यक्ति के जीवन में जितना परिवार का महत्व है उतना किसी भी अन्य व्यक्ति अथवा संस्था का नहीं है। घर की मुख्य धुरी होती है - गृहिणी । गृहिणी के अभाव में घर की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। स्त्री एवं पुरूष परिवार रूपी गाडी के दो पहिये हैं । पुरूष सामान्यत: घर के बाहर के दायित्वों को पूर्ण करता आया है और स्त्री गृहस्थी का संचालन, बच्चों का पालन पोषण, घर के प्रत्येक की सुख सुविधाओं का प्रबंध भोजन, वस्त्र की आपूर्ति, स्नेह, सहयोग तथा सुरक्षा प्रदान करती रही है। घर एक ऐसा स्थान है जहां बच्चे बड़े हेकर सुयोग्य नागरिक बनते हैं। उनके चरित्र का निर्माण होता है। उनमें प्रेम, सहयोग, स्नेह, इत्यादि गुणों का विकास होता है । उनके संस्कार भी वहीं निर्मित होते हैं। एक आदर्श घर पृथ्वी पर स्वर्ग समान है। भारतीय संस्कृति में वंश, परिवार तथा परिवार में गृहिणी का अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान है। वह बच्चों को न केवल जन्म देती है वरन् उनका पालन पोषण भी करती है। उसे परिवार की धुरी कहा जाता है। अत: उसका शिक्षित होना भी आवश्यक है। एक चीनी कहावत है कि जब आप एक स्त्री को शिक्षित करते हैं तो पूरा परिवार एवं उसका परिवेश शिक्षित होता है। इस कारण परिवार के कल्याण की दृष्टि से स्त्री का शिक्षित होना अत्यन्त आवश्यक है। हमारे पूर्वज भी स्त्री शिक्षा के महत्व को मानते थे। यही कारण है कि प्राचीन युग में बाल्यकाल से ही बालिकाओं को गृह संचालन से संबंधित शिक्षा दी जाती थी।

अंग्रेजी में एक कहावत है - A house is built by hands, but a home is built by hearts.

अर्थात् एक मकान हाथों द्वारा बनाया जाता है किन्तु घर का निर्माण हृदय द्वारा होता है। हृदय की समस्त आस्था, सौहार्द्र, त्याग तथा परस्पर प्रेम की भावनाओं से ओत प्रोत परिवार के सभी सदस्य एक

छत के नीचे एक साथ रहकर घर बनाते है। इसमें पुरूषों से अधिक स्त्रियों का महत्वपूर्ण स्थान है। स्त्री, पुरूष की अर्धांगिनी कही जाती है। प्राचीन समय से उन्हें सम्मान मिलता आया है। कहा भी गया है ''यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तंत्र देवता"। अर्थात् जहां नारियों की पूजा की जाती है उन्हें सम्मान प्रदान किया जाता है वहां देवताओं का वास होता है। बिन घनी घर भूत का डेरा भी कहा जाता है। गृह निर्माण को एक कला कहा जाता है। हमारे पूर्वज मनु का कथन है कि "घर बसाने हेतु एक कन्या को आरंभ से ही चौसठ कलाओं से परिपूर्ण होना आवश्यक है। उसे बाल्यकाल से पाक कला, अतिथि सत्कार, बच्चों का पालन पोषण घर के सदस्यों की देखभाल नृत्य संगीत, धर्म विषयक ज्ञान देना चाहिये तभी वह विवाह योग्य एवं घर बसाने योग्य हो सकती है"। इस तथ्य से प्रमाणित होता है कि गृहस्थी संबंधी गृह विज्ञान की शिक्षा का प्राचीन काल से ही स्त्री शिक्षा में महत्वपूर्ण स्थान रहा है। प्रांरभिक युग में गृह संबंधी शिक्षा घर पर ही प्राप्त हो जाती थी। बालिकाएं पाक कला, घर की देख रेख तथा व्यवस्था, वस्त्रों की देखभाल तथा संचयन, सामाजिक रीति रिवाज, धार्मिक अनुष्ठान, परिवार के सदस्यों की देखभाल, उनसे सामंजस्य स्थापित करना - सभी कुछ अपने घर की वयस्क तथा समवयस्क स्त्रियों से सीख लेती थी। उस समय संयुक्त परिवार प्रथा थी और इस प्रकार की शिक्षा हेतु उन्हें बाहर जाने की आवश्यकता नहीं थी। घर में ही उन्हें गृह विज्ञान का व्यावहारिक तथा समुचित ज्ञान प्राप्त करने का अवसर मिल जाता था। समय के परिवर्तन के साथ आज जीवन मूल्यों में भी परिवर्तन आया है। जीवन के प्रति दृष्टिकोण बदल गया। सामाजिक ढांचे में भी परिवर्तन हुए। अब अधिकांशत: एकाकी परिवार होने लगे जिनमें गृह विज्ञान की पर्याप्त और उचित शिक्षा देना दुष्कर हो गया । अत: स्कूल, कॉलेज तथा प्रशिक्षण केन्द्रों में गृह विज्ञान की शिक्षा प्रदान करने की आवश्यकता समझी गई। प्रारंभ में कुछ विद्वानों को इस विषय की सार्थकता पर संदेह हुआ। लोगों ने इसका उपहास भी किया। अच्छा खाना बनाना, कपड़े धोना, झाड़ू लगाना जैसे साधारण कार्य भी शिक्षा के विषय कैसे

हो सकते है? और इनसे क्या लाभ होगा? किन्तु बाद में उन्होंने जाना कि गृह विज्ञान वास्तव में एक गहन वैज्ञानिक तथा कलात्मक विषय है। इसके अन्तर्गत उन सभी विषयों की शिक्षा दी जाती है जो घर से संबंधित होते हैं तथा ऐसा कोई विषय नहीं है जिसका प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से घर से संबंध न हो।

1.2 गृह विज्ञान की परिभाषा

गृह विज्ञान की शिक्षा एक नारी को पूर्णता प्रदान करती है। दिन प्रतिदिन के जीवन में उत्पन्न होने वाली समस्याओं का समाधान भी इसके ज्ञान द्वारा संभव है जिससे परिवार में सुख और संतोष की अनुभूति होती है। गृह विज्ञान विशषज्ञों के कथनानुसार यह शिक्षा नारी मनोवैज्ञानिक अभिवृत्तियों की भी संतुष्टि करती है यथा जिज्ञासा, संचय, आत्म प्रदर्शन, रचनात्मक अभिवृति, विक्रयशीलता आदि। इस शिक्षा की सहायता से ये मूल प्रवृत्तियां उपयोगी रचनात्मक कार्यों में लगने के कारण आत्म संतुष्टि प्रदान करती है। नारी स्वयं मे एक गरिमा का अनुभव करती है। जिसके कारण सौम्यता सरलता, विनयशीलता जैसे सांस्कृतिक गुणों का विकास होता है। नारी के सर्वांगीण संतुलित विकास में गृह विज्ञान की शिक्षा इतनी उपयोगी है कि चिकित्सा अभियांत्रिकी, कला, व्यवसाय आदि अन्य क्षेत्रों में कार्यरत महिलाओं को भी गृह विज्ञान का प्रारम्भिक ज्ञान होना चाहिये। पारिवारिक संतुलन जीवन की स्थितियों में सुधार लाने हेतु तथा घर को स्वस्थ, सुखी बनाने के लिये यह शिक्षा अत्यन्त आवश्यक है। गृह विज्ञान विशेषज्ञ डॉ. राजमल देवदास के शब्दों में - गृह विज्ञान की शिक्षा प्राप्त कर एक लड़की आदर्श विशेषज्ञ, भोजन प्रबंधक, डाक्टर नर्स, मनोवैज्ञानिक, बैंकर, टेलर, माली, गवर्नेस, शिक्षाविद्, अर्थशास्त्री, गुरू प्रबंधक, गृह सज्जाकार, साथी एवं सामाजिक कार्यकर्ता बनती है। इन सबसे उपर वह एक स्नेहमयी पत्नी एवं मां होती है। संसार का कोई भी कार्यक्षेत्र इतना बहुआयामी नहीं है।

गृह विज्ञान में शिक्षा के महत्व को निम्नलिखित रूप में स्पष्ट किया जा सकता है -

1. गृह विज्ञान की शिक्षा द्वारा गृहिणी घर के सभी कार्यों को अधिक सुलझे हुए वैज्ञानिक तरीके से पूर्ण आत्मविश्वास से सम्पादित कर सकती है।
2. सीमित साधनों द्वारा संतोष प्राप्त करने का कौशल भी गृह विज्ञान की शिक्षा करती है जिससे गृहिणी अपने परिवार के सुख संतोष में वृद्धि कर सकती है।
3. गृहिणी में श्रम के प्रति सम्मान की भावना उत्पन्न करना भी गृह विज्ञान शिक्षा का कार्य है। किसी भी कार्य को करने में वह शर्म अथवा झिझक नहीं महसूस करती है अपितु आत्म गौरव का अनुभव करती है और कार्य को अत्यन्त कुशलतापूर्वक कर सकती है।
4. गृह विज्ञान शिक्षा द्वारा गृहिणी परिवार के सभी सदस्यों को सीमित बजट में उत्तम पोषण प्रदान कर उन्हें स्वस्थ रखने में सहायक होती है।
5. गृह विज्ञान की शिक्षा प्राप्त गृहिणी अपने कर्तव्यों के प्रति सजग रहती है।
6. कार्य सरलीकरण विधियों को अपनाकर, नवीनतम उपकरणों के प्रयोग द्वारा श्रम तथा धन की बचत करती है जिससे परिवार और समाज लाभान्वित हो सकते हैं।
7. कार्य कुशलता द्वारा निर्धारित, समय में गृह कार्यों को पूर्ण करके बचे समय में रचनात्मक व्यवसाय अथवा नौकरी करके अर्थोपार्जन द्वारा परिवार के सुखों में वृद्धि करके अपने परिवार के रहन सहन के स्तर को ऊँचा करने में सहायक होती है।
8. गृह विज्ञान में मिल बांटकर कार्य करना सिखाया जाता है। इसी विधि को परिवार में अपनाकर गृहिणी परिवार के सदस्यों में सहयोग, सहकारिता एवं त्याग की भावनाओ को विकसित करती

है। इससे परिवार के साथ समाज और अन्ततः राष्ट्र का कल्याण होता है।

9. गृह विज्ञान में मनोविज्ञान के अध्ययन द्वारा परिवार में अधिक सामंजस्य स्थापित कर पारिवारिक संबंधों को दृढता प्रदान करती है तथा परस्पर एक दूसरे की समस्याओं को समझकर उन्हें सुलझाने का प्रयास करती है।
10. गृह विज्ञान, शिक्षार्थियों को रोजगार के नये अवसर प्रदान करता है। इससे महिला शिक्षाविद्, पत्रकार, रेडियो, टी.वी., कलाकार ड्रेस डिजायनर, आन्तरिक सज्जाकार शिक्षिका बन सकती है अथवा सामाजिक कार्य क्षेत्र में कार्यरत हो सकती है।

1.3 गृह विज्ञान के क्षेत्र

गृह विज्ञान को समय समय पर विभिन्न नामों से संबोधित किया गया है तथा विभिन्न प्रकार की परिभाषाएं दी गई है। आरंभ में इसे घरेलू विज्ञान, घरेलू कला आदि नामों से पुकारा जाता था तत्पश्चात गृहविज्ञान के नाम से जाना गया। 'घरेलू प्रशासन' 'घरेलू अर्थशास्त्र' के नाम से भी इसे सम्बोधित किया गया। अमेरिका में इस विषय को 'गृह अर्थशास्त्र' और इंग्लैण्ड में यह विषय 'गृह विज्ञान' कहा जाता है। भारत में अलग अलग प्रदेशों में भी इसके विभिन्न नामों के कारण उलझनें पैदा होती रही। अकेले उत्तर प्रदेश में ही इसे प्राथमिक स्कूलों से लेकर विश्वविद्यालय स्तर तक 'गृहशिल्प', 'होमसाइन्स', 'घरेलू विज्ञान', 'गृह अर्थशास्त्र', 'गृहकला व विज्ञान' नाम दिये गये। अन्ततः 'गृह विज्ञान' शिक्षा के विकास के पश्चात सम्पूर्ण भारत में इसका सर्वसम्मत एक नाम हो गया है। अत्यधिक व्यापक अर्थ में गृहविज्ञान उन नियमों, दशाओं, सिद्धान्तों और आदर्शों का अध्ययन है जो कि एक ओर तो मानव के तात्कालिक भौतिक वातावरण से संबंधित है तथा दूसरी अेर उसकी मानवीय प्रकृति से।वास्तव में वह इन दोनों के मध्य का अध्ययन है। संकुचित अर्थ में यह गृह कार्य पाक क्रिया आदि की व्यावहारिक समस्याओं के विशिष्ट संदर्भ में आधारित विज्ञाननों का अध्ययन है। दस

वर्षों पश्चात इस रूप में इसे परिभाषित किया गया यह निर्देशन का विशिष्ट विषय है, जिसमें घर में परिवार द्वारा तथा व्यक्तियों के अन्य समूहों द्वारा भोजन, वस्त्र व आवास के चुनाव तैयारी एवं प्रयोग से संबंधित आर्थिक तथा कलात्मक पक्षों का समावेश होता है। मानवीय ज्ञान के क्षेत्र के रूप में गृह अर्थशास्त्र के अन्तर्गत उन सभी कारको को सम्मिलित किया जाता है जो कि गृह जीवन के आराम तथा कुशलता को प्रभावित करते है। सामान्यत: गृह जीवन का अर्थ व्यक्तिगत रूप से परिवारों का जीवनयापन है परन्तु सामूहिक जीवन में प्रयुक्त कारकों और सिद्धान्तों को गृह अर्थशास्त्र के क्षेत्र से निष्कासित नहीं किया जा सकता।गृह अर्थशास्त्र विषय सामग्री का वह अंग है जिसका संबंध घर की समस्याओं ओर उनके अन्त:संबंधों में प्राकृतिक तथा सामाजिक विज्ञाननों एवं कलाओं के प्रत्युक्तिकरण से है। सन् 1902 में अमेरिकन होम इकोनोमिक्स एसोसियेशन की अध्यक्षा ऐलन रिचर्ड ने गृह विज्ञान के संबंध में कहा था -

“Home Economics stand for the freedom of the home from the dominance of things and their due subordination to ideas the simplicity in material surroundings which will most free the nore important and permanent interest of home and society.

सन् 1974 में होम साइन्स ऐसासियेशन ऑफ इंडिया के बारहवें द्विवार्षिक अधिवेशन में गृह विज्ञान विशेषज्ञ डॉ. राजमल देवदास, ने अपने भाषण में गृहविज्ञान के संबंध में कहा था -

“Home science deals all aspects of life of the community and the nation…………it integrates the application of knowledge synthesized from different science and humanities to improve the human environment, family nutrition, management of resources, child development and consumer competence.

अर्थात् गृह विज्ञान समुदाय एवं राष्ट्र के प्रत्येक पक्ष से संबंधित है। गृह विज्ञान मानवीय वातावरण, पारिवारिक पोषण, संसाधनों का

व्यवस्थापन, बाल विकास एवं उपभोक्ताओं की कुशलता में सुधार से संबंद्ध ज्ञान को संश्लिष्ट एवं समेकित करने का कार्य करता है।

गृह विज्ञान एवं राष्ट्रीय विकास - किसी भी राष्ट्र के विकास का अनुमान वहां की जनता के सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक स्तर, स्वास्थ्य आदि को देखकर लगाया जा सकता है। जिस प्रकार रूस के तकनीकी विकास के पीछे वहां की तकनीकी संस्थाओं और जापान के औद्योगिक विकास के पीछे वहा के उद्योगों का योगदान है उसी प्रकार भारत के विकास में प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूप से शिक्षण संस्थाओं का महत्वपूर्ण योगदान है। यदि भारत जनता का जीवन ऊँचा उठा है तो इसका कुछ श्रेय गृह विज्ञान शिक्षण को भी है। गृह विज्ञान शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य कुशल गृह प्रबंध द्वारा घर को सुविधापूर्ण तथा पारिवारिक जीवन को सुखमय बनाना है। आज भारतीय परिवारों में पहले की अपेक्षा काफी सुधार आया है। विभिन्न क्षेत्रो के विकास में गृह विज्ञान शिक्षा का प्रभाव पडा है जो अन्तत: राष्ट्रीय विकास को इंगित करता है।

1.4 विकास के विभिन्न क्षेत्रों में गृह विज्ञान का योगदान

1. **पारिवारिक स्तर के उत्थान में -** आज भारत में पहले की अपेक्षा अधिकांश परिवार अधिक व्यवस्थित तथा सुख सुविधापूर्ण हो गये हैं। यद्यपि सभी घरों में गृहविज्ञान शिक्षा का प्रभाव नहीं पडा है किन्तु गृहविज्ञान से संबंधित कार्य क्षेत्र में कार्य करने वाली महिलाओं के घर अवश्य ही इस शिक्षा द्वारा प्रभावित हुए है। आज आधुनिक घरेलू उपकरणों का उपयोग, उचित गृह प्रबंधन घरेलू कार्यों का संतुलित बंटवारा द्वारा अधिकतम संतुष्टि प्राप्त करने की चेष्टा की जा रही है।

   गृह विज्ञान की शिक्षा प्राप्त लड़कियां जिन घरों में रहती हैं अथवा विवाह के पश्चात जाती है और जिन परिवारों, परिचितों आदि से मिलती है उन्हें भी अपनी शिक्षा द्वारा लाभान्वित करती है - कुछ

अपने सुझावों द्वारा तथा कुछ स्वयं के आदर्श उदाहरण प्रस्तुत करके। इसके अतिरिक्त वे रेडियो, टीवी कार्यक्रम के माध्यम से महिलाउपयोगी पत्र पत्रिकाओं में लेख लिखकर पुस्तके आदि लिखकर भी जन साधारण के जीवन का पारिवारिक स्तर ऊँचा उठाने में सहायता प्रदान करती है।

2. **पोषण के क्षेत्र में -** गृह विज्ञान का महत्वपूर्ण भाग आहार एवं पोषण संबंधी ज्ञान है जिसे प्राप्त करके लड़किया परिवार का पोषण स्तर सुधारने में सहायक होती है।नवीनतम उन्नत पाक विधियों का प्रयोग, पोषक तत्वों को नष्ट होने से बचाकर स्वादिष्ट एवं सुधारवर्धक, तृप्तिदायक भोजन तैयार कर सकती है। भोज्य पदार्थों के संग्रहीकरण द्वारा भोजन को सुरक्षित रख सकती है और जैम- जैली, अचार, सांस, चटनी, स्केवेश आदि भी बना सकती है।

3. **स्वास्थ्य के क्षेत्र में -** गृह विज्ञान की शिक्षा प्राप्त लड़किया स्वास्थ्य तथा अपने परिवार के प्रति अधिक सचेत रहती है। शिशु पालन की शिक्षा प्राप्त होने के कारण स्वच्छतापूर्ण वातावरण में बच्चों को पालन, समय पर टीके लगवाना, उचित पोषण प्रदान करना आदि सभी कार्य कुशलतापूर्वक कर सकती है। अस्वस्थ होने पर डाक्टर की सहायता से उचित उपचार तथा स्वयं उचित देखभाल परिचर्चा द्वारा उन्हें शीघ्र ही रोगमुक्त होने में सहायक होती है और बच्चा हष्ट पुष्ट और पूर्ण स्वच्छ रहता है। यही कारण है कि आज बाल मृत्यु दर में बहुत कमी आई है।

4. **रोजगार के क्षेत्र मे -**गृह विज्ञान स्नातक लड़किया गृह विज्ञान शिक्षा क्षेत्र के अन्दर तथा बाहर भी विभिन्न व्यवसाय तथा रोजगार प्राप्त कर सकती है।

1.5 गृह विज्ञान में रोजगार

गृह विज्ञान शिक्षण क्षेत्र के अन्दर के रोजगार से तात्पर्य है जिन विद्यालयों, महाविद्यालयों और, प्रशिक्षण महाविद्यालयों में गृह विज्ञान

की पढाई होती हो अथवा वे सरकारी या गैर सरकारी संस्थाएं जो गृह विज्ञान शिक्षण से जुडी हैं वहां ये स्नातक लड़किया शिक्षिका अथवा संचालिका के रूप में कार्य कर सकती है। गृह विज्ञान क्षेत्र के बाहर से अर्थ है - कृषि अनुसंधान, पशुपालन, डेयरी, प्रसार शिक्षा, निदेशालय, औद्योगिक क्षेत्र एवं अन्य शिक्षण संस्थाओं में भी रोजगार प्राप्त कर सकती है।

गृह विज्ञान शिक्षण क्षेत्र के अन्दर के रोजगार निम्नलिखित हैं -

क) शिक्षिका - स्कूलों में गृह विज्ञान अथवा उसके अन्तर्गत किसी एक विषय की शिक्षिका हो सकती हैं। कालेज में स्नातकोत्तर शिक्षा प्राप्त लड़किया, व्याख्याता, रीडर अथवा प्रोफेसर बन सकती है।

ख) अनुसंधान सहायिका -गृह विज्ञान कॉलेज में किसी प्रोजेक्ट में अथवा गृह विज्ञान से संबंधित रिसर्च प्रोजेक्ट में अनुसंधान सहायिका के रूप में कार्य कर सकती है।

ग) डायटिशियन - किसी भी गृह विज्ञान कॉलेज में स्थित विशाल होस्टल, कैन्टीन या कैफैटेरिया आदि में भी गृह विज्ञान स्नातक लड़किया डायटिशियन अथवा आहार नियोजिका के पद पर कार्य कर सकती है।

घ) नर्सरी स्कूल संचालिका - बड़े गृह विज्ञान महाविद्यालय जहां पर स्नातकोत्तर स्तर पर बाल विकास की पढ़ाई होती है, प्रयोगशाला के रूप में नर्सरी स्कूल भी चलाये जाते हैं। इन्हीं नर्सरी स्कूल की संचालिका के पद पर गृह विज्ञान स्नातक लड़किया कार्य कर सकती है।

गृह विज्ञान शिक्षण क्षेत्र के बाहर के रोजगार -

क) गृह विज्ञान प्रसार कार्यकर्मी- प्रचार के क्षेत्र में गृह विज्ञान प्रसार हेतु ग्राम सेविका अथवा मुख्य प्रशिक्षण केन्द्रों पर गृह वैज्ञानिक के पद पर रहकर उन्हें आवश्यक मार्गदर्शन प्रदान कर सकती है। भारत सरकार द्वारा प्रसार क्षेत्र में वरिष्ठ गृह वैज्ञानिक, क्षेत्रीय गृह वैज्ञानिक, सहायक निदेशिका अथवा गृह विज्ञान निदेशिका आदि पदों को प्राप्त

कर सकती है। मुख्य सेविका तथा ग्राम सेविका प्रशिक्षण केन्द्रो में तथा भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, दिल्ली तथा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् में भी गृह वैज्ञानिक के पद उपलब्ध है।

ख) प्रशिक्षण महाविद्यालय में शिक्षिका - प्रशिक्षण महाविद्यालयो में गृह विज्ञान शिक्षिका को तैयार करने के लिए गृह विज्ञान व्याख्याता पद पर कार्य कर सकती हैं। इनके लिए गृह विज्ञान में स्नातकोत्तर डिग्री होनी आवश्यक है।

ग) डायटिशियन - होटल तथा अस्पतालों में आहार तथा पोषण विशेषज्ञों के रूप में डायटिशियन के पद पर नियुक्ति की जा सकती है जहां ग्राहकों तथा रोगियों के लिए आहार नियोजन करके मीनू तैयार करती है।

घ) आन्तरिक सज्जाकार -गृह विज्ञान में स्नातकोत्तर शिक्षण में गृह प्रबंध में विशिष्टता प्राप्त लड़किया घरों, क्लबों, होटलों, विश्रामगृहों हेतु आन्तरिक सज्जाकार का कार्य कर सकती है। बड़े- बड़े नगरों में इनकी अधिक मांग होती है।

ड) परिधान डिजायनर - वस्त्र तथा परिधान निर्माण में विशिष्टता प्राप्त लड़किया रेडीमेड वस्त्र निर्माण केन्द्र पर ड्रेस डिजायनर के रूप में कार्य कर सकती है जहां बच्चों, महिलाओं तथा पुरूषों हेतु फैशन के अनुरूप नवीनतम परिधानों के चयन में सहायता प्रदान कर सकती हैं। वे स्वयं अपना बुटीक अथवा सिलाई स्कूल भी खोल सकती है।

च) रेडियो अथवा टीवी कलाकार - रेडियो और टीवी में बहुत से महिलाउपयोगी कार्यक्रम होते रहते हैं जिनके माध्यम से महिलाओं को बच्चों की घर की देखभाल करना, आहार तथा पोषण संबंधी जानकारी प्रदान करना, गृह सज्जा पाक कला, बागवानी, स्वास्थ्य आदि की भी जानकारी प्रदान की जाती है। गृह विज्ञान की स्नातक लड़किया ऐसे कार्यक्रमों का आयोजन तथा संचालन कर सकती है अथवा स्वयं भी एक कलाकार के रूप में भाग ले सकती है।

छ) लेखिका अथवा पत्रकार - गृह विज्ञान से संबंधित कई पत्रिकाओं और अखबारों में महिलाओं से सम्बंधित कई विशिष्ट स्तम्भ और पृष्ठ प्रकाशित होते रहते हैं। गृह विज्ञान में विशिष्टता प्राप्त लेखन में प्रवीण लड़किया ऐसी पत्र पत्रिकाओं का सपादन कर सकती है अथवा कोई लेख भी लिख सकती हैं।

ज) अन्य व्यवसायों में - गृह विज्ञान की शिक्षा प्राप्त लड़किया स्वयं अपने घर पर ही पाककला, सिलाई, हस्तशिल्प जैसे बाटिक, प्रिटिंग स्टेन्सिल प्रिटिंग, हाथ की बनी वस्तुएं गुड़ियां बनाना, पेंटिग बनाना आदि की शिक्षा बच्चों को दे सकती है ओर धन अर्जित कर सकती है। इसके अतिरिक्त कोई गृह विज्ञान से संबंधित जिनमें उनकी रूचि हो, कार्य को व्यवसाय या एक छोटे उद्योग के रूप से आरंभ कर सकती है ओर तैयार सामग्री को बाजार मे बेचकर धन कमा सकती है। इस प्रकार रोजगार करके गृह विज्ञान की स्नातक लड़किया विभिन्न क्षेत्रों में कार्य कर सकती है। वे कहीं भी कार्य करें उससे देश तथा राष्ट्र विकास में सहयोग प्राप्त हो सकेगा यथा -

1. वे एक उत्तम अनुसंधान निदेशिका हो सकती है।
2. किसी भी व्यवस्था क्षेत्र में एक अच्छी प्रशासिका अथवा प्रबंध संचालिका हो सकती है।
3. वे एक आदर्श शिक्षिका भी प्रमाणित हो सकती है।
4. वे एक सरल समाज सेविका भी हो सकती है।
5. वे अपने व्यवसाय अथवा सेवा द्वारा पारिवारिक आय में वृद्धि द्वारा भी देश की आर्थिक स्तर ऊँचा उठाने में सहायक हो सकती है।
6. बाल शिक्षा के क्षेत्र में - आज के बच्चे देश के भावी कर्णधार होते हैं। अत: गृह विज्ञान शिक्षित लड़किया अपने परिवार में बच्चों की दिशा की ओर अधिक ध्यान देती हैं। अब वे बच्चों के पठन पाठन में सहायता देने में जागरूक है और इस प्रकार परोक्ष रूप से राष्ट्रीय विकास में अपूर्व योगदान प्रदान करती है।

7. स्त्री शिक्षा के क्षेत्र में - इससे देश में ही शिक्षा की स्थिति अच्छी नहीं है। पुरूषों की तुलना में महिलाओं में शिक्षा के प्रति उत्साह बहत कम है विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में । पराधीन भारत में विशेषकर स्त्री शिक्षा के प्रति उपेक्षित रही किन्तु स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात इस दिशा में कदम उठाये जा रहे है। स्त्रियों को शिक्षित करके, रोजगार के नये अवसर प्रदान करके उन्हें आत्म निर्भर बनाना है। गृह विज्ञान शिक्षण अकेले स्त्री शिक्षा जैसा कार्य नहीं कर सकता अत: सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों के साथ मिलकर यह प्रयास किया जा रहा है और राष्ट्रीय विकास में अपना योगदान प्रदान कर रहा है। स्त्रियां ही गृह विज्ञान का प्रतिनिधित्व करती है। अत: उनके स्तर को ऊँचा उठाने का अर्थ गृह विज्ञान का विकास और अन्तत: राष्ट्रीय विकास है।

8. परिवार कल्याण तथा जनसंख्या नियंत्रण के क्षेत्र में - गृह विज्ञान शिक्षा द्वारा परिवार कल्याण का संदेश छोटा परिवार सुखी परिवार भी प्राप्त होता है। जनसंख्या शिक्षा भी गृह विज्ञान शिक्षा के अन्तर्गत प्रदान की जाती है। गृह विज्ञान शिक्षा प्राप्त लड़किया अपने परिवार को सीमित रखकर औरों के समक्ष एक आदर्श उदाहरण प्रस्तुत कर रही है। परिवार कल्याण से संबंद्ध विभिन्न सरकारी तथा गैर सरकारी संगठनों से जुड़कर भी गृह वैज्ञानिक राष्ट्रीय विकास में सहयोग प्रदान कर रही है।

1.6 गृह विज्ञान का अन्य विषयों से पारस्परिक सम्बन्ध

वर्तमान वैज्ञानिक युग में विकासशील समाज हेतु एक ऐसे ज्ञान की आवश्यकता है जो स्वयं भी निरंतर गतिशील एवं भविष्यवादी हो। गृह विज्ञान एक ऐसा ही व्यापक विषय है जो मानव जीवन के प्रत्येक पक्ष से संबंधित है। वास्तव में गृह विज्ञान वह कला है जो परिवार को वैज्ञानिक ढंग से योजनाबद्ध रूप से संचालित करने हेतु आवश्यक है। गृह विज्ञान द्वारा पारिवारिक कार्यों के समय शक्ति तथा धन की भी

जानकारी प्राप्त हो जाती है। इस विषय का ज्ञान प्राप्त करने के लिये इससे संबधित सभी विषयों का आधारभूत ज्ञान होना भी आवश्यक है। विभिन्न विज्ञान विषय जैसे भौतिक, जीव विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, जीवाणु विज्ञान, रसायन शास्त्र गृह विज्ञान से संबंधित है। इन सभी की प्राथमिक जानकारी गृह विज्ञान की छात्राओं को यह समझने में सहायक होती है कि भोजन पकाते समय कौन कौन से रासायनिक तथा भौतिक परिवर्तन होते है। वनस्पति विज्ञान द्वारा विभिन्न पेड पौधों की जानकारी वृद्धि तथा देखभाल संबंधी जानकारी होती है वह रसोईघर में प्रयुक्त साग सब्जियों के विभिन्न भागों, उनकी रचना, उनका संगठन तो जानती ही है, इसके साथ ही बागवानी करने में यह ज्ञान सहायक है। दूध से दही का जमना, अचार, सिरके, तथा पनीर निर्माण में जीवाणुओं की क्या योगदान है, इसका ज्ञान जीवाणु विज्ञान द्वारा प्राप्त होता है। हानि प्रद जीवाणुओं से किस प्रकार सुरक्षा प्राप्त की जा सकती है, इस संबंध में भी उसे जानकारी रहती है। इसी प्रकार भौतिक विज्ञान द्वारा घर के मशीनों तथा विद्‌युत उपकरणों का सुचारू रूप से संचालन तथा उनकी देखभाल संभव हो सकती हैं। घरेलू वस्तुओं की आवश्यकताएं, खरीददारी, घरेलू, आय व्यय का हिसाब रखना, बचत द्वारा पूंजी का उचित विनियोग आदि की उचित जानकारी अर्थशास्त्र द्वारा समझने तथा उनके साथ सामंजस्य बनाये रखने में सहायता प्रदान करता है। कला भाषा साहित्य, प्राचीनकाल का इतिहास जैसे अन्य विषय उस देश का साहित्य संस्कृति को समझने मे सहायक हो सकते है। इन विषयों का आधारभूत ज्ञानप्राप्त करने के पश्चात गृह विज्ञान के मूल विषयों का अध्ययन करने में छात्राओं को सरलता होती है। गृह विज्ञान के मुख्य विषय क्षेत्र जिनके अध्ययन द्वारा छात्राएं इन्हीं विषयों के अन्तर्गत स्नातक प्रतिष्ठा सम्मान एवं स्नातकोत्तर डिग्री ग्रहण करती है अनुसंधान करती है निम्नलिखित है

1. आहार एवं पोषण विज्ञान - मनुष्य की मूलभूत आवश्यकताएं - भोजन वस्त्र एवं आवास है। गृहविज्ञान के अन्तर्गत भोज्य पदार्थों में उपस्थित पोषक तत्व उनकी तृति के साधन, उनके कार्य तथा हीनता से

उत्पन्न होने वाले लक्षण रोग आदि के विषय में जानकारी प्राप्त की जाती है। भोज्य पदार्थों का चयन, खरीददारी संग्रहण तथा संरक्षण की विधियां भी सीखी जाती है। विभिन्न आयु तथा स्थिति के सदस्यों की पोषण संबंधी मांग के अनुसार आहार नियोजित करना, सीमित आय में परिवार के विभिन्न सदस्यों के लिये उत्तम और पोष्टिक संतुलित आहार का नियोजन करना, आहार से संबंधित विभिन्न रोगों के कारण, लक्षण तथा आहारीय उपचार का भी अध्ययन करती है। भोजन का स्वास्थ्य से प्रत्यक्ष संबंध है। आहार एवं पोषण संबंधी ज्ञान द्वारा परिवार के सभी सदस्यों के लिये संतुलित तथा पौष्टिक आहार का आयोजन किया जा सकता है। उपयुक्त पाक विधियों के द्वारा आकर्षक ढंग से भोजन परोसना संभव होता है। इस प्रकार परिवार के सभी सदस्यों का स्वास्थ्य अच्छा रहता है। भारत में कुपोषण की समस्या का प्रमुख कारण गरीबी और निर्धनता है। इसके अतिरिक्ति भोजन संबंधी मिथ्या धारणाएं भी प्रचलित है जिसके कारण यह समस्या उत्पन्न होती है। गृह विज्ञान की छात्राएं कुपोषण से बचाव कराने में सक्षम होती है क्योंकि वे व्यक्ति की पोषण संबंधी आवश्यकताओं से परिचित होती हैं और कम आय में पौष्टिक तथा संतुलित आहार नियोजन करने में सक्षम होती हैं। इसके अतिरिक्त फल सब्जियों का फल संरक्षण भी सीखती है, जैसे जैली, आचार, मुरब्बा, पापड, बडी स्केवश, सॉस, चटनी आदि। विभिन्न अवसरों पर औपचारिक एवं अनौपारिक पार्टियों का आयोजन एवं व्यवस्था करना, विभिन्न शैलियों में पुष्प सज्जा, भोजन की मेज की सज्जा करना, भोजन संबंधी शिष्टाचार आदि का भी ज्ञान प्राप्त करती है।

2. पारिवारिक संसाधनों का व्यवस्थापन - गृह विज्ञान के अन्तर्गत गृह प्रबंध, गृह व्यवस्था, गृह कला संबंधी शिक्षा अपने परिवार को सुख शान्ति भी प्रदान की जा सकती हैं । आधुनिक परिवार अधिकांशत: एकाकी हो गये है। आज संयुक्त परिवार प्रथा टूट रही है जहां पर घर में बड़े बूढे गृह संचालन एवं गृह व्यवस्था किया करते थे। महिलायें केवल भोजन पकाना अथवा शिशुओं की देखभाल करती थीं और शेष

कार्य नौकरों द्वारा किये जाते थे। किन्तु आज छोटे परिवारों में गृहिणी की भूमिका, पीर, बावर्ची, भिश्ती जैसी है। वह यदि नौकरी करती है तो परिवार के लिये अर्थोपार्जन भी करती है । घर बाहर का काम, सामान की खरीददारी बच्चों की देखभाल तथा भोजन पकाना आदि सभी गृहकार्य किसी अन्य सदस्य और नौकर की सहायता से करने पडते है। बड़े बड़े शहरों में नौकर बहुत मुश्किल से मिलते है। अत: गृह प्रबंध तथा गृह व्यवस्था का ज्ञान भावी गृहिणी को अपनी सीमित आय में बजट बनाना सीखाता है। अपने उपलब्ध सीमित साधनों के अनुसार उपयुक्त गृह प्रबंध करना और अपने परिवार के इच्छित लक्ष्यों की पूर्ति करना सीखाता है। आधुनिक उपकरणों के प्रयोग द्वारा समय एवं श्रम बचत करके विभिन्न गृह कार्यों को सम्पन्न करना और बचे हुए समय का सदुपयोग आर्थिक उपार्जन तथा अपनी रूचियों को पूरा करने हेतु करना भी इसी से वह सीखती है। मानवीय तथा भौतिकी साधनों का विचारपूर्ण उपयोग करके अपने पारिवारिक सदस्यों के मध्य व्यक्तिगत रूचि, आयु, व्यवसाय और स्वास्थ्य को दृष्टिगत रखते हुए कार्यों का उपयुक्त विवरण भी गृह व्यवस्था द्वारा सीखा जाता है । परिवार के सदस्य प्रसन्नतापूर्ण ढंग से मिल जुलकर कार्य कर सकें इसके लिए गृहिणी को मानव मनोविज्ञान तथा मानव संबंधों को समझने की आवश्यकता होती है। ये सभी विषय भी गृह प्रबंध के अन्तर्गत पढाये जाते हैं जिसे सीखकर वास्तव में एक गृहिणी घर को स्वर्ग बना सकती है। सही अर्थों में अपने घर को स्वीट होम ड्रीम हाउस बना सकती है जिससे परिवार के प्रत्येक सदस्य जहां कहीं भी हो अपने घर वापस आने को बैचेन रहते हैं।

3. वस्त्र विज्ञान एवं परिधान -मानव की मूलभूत आवश्यकताओं में से एक महत्वपूर्ण आवश्यकता वस्त्र भी है। बिना वस्त्र के जीवन की कल्पना भी असंभव है। व्यक्ति वस्त्र पहिनता है, ओढ़ता है, बिछाता है। वस्त्र व्यक्ति की रक्षा करते है। आकर्षक वस्त्रों को धारण करने से व्यक्ति की सुन्दरता द्विगुणित हो जाती है। उसके शरीर की कमी भी हो तो छिप जाती है। आकर्षक पर्दों, सोफा, कवर, चादर तकिये के

गिलाफ, कुशन कवर आदि से घर भी सुन्दर हो उठता है। आधुनिक जीवन में वस्त्र से हर कोना आच्छादित है। परिवार के सभी सदस्यों के लिए चाहे वह बडा हो अथवा बच्चा, वस्त्रों का चयन और खरीददारी प्राय: गृहिणी द्वारा की जाती है। आधुनिक फैशन के अनुसार वस्त्रो को स्वयं सीना अथवा दर्जी द्वारा सिलवाना भी महत्वपूर्ण है। वस्त्रों की स्वच्छता, मरम्मत और रख रखाव आदि का दायित्व भी गृहिणी का ही होता है अत: गृह विज्ञान एवं परिधान विषय भी सम्मिलित होता है।

वस्त्र विज्ञान में वस्त्रों के प्राकृतिक तथा कृत्रिम रेशा का ज्ञान, वस्त्र निर्माण, प्रक्रिया, बनावट, वस्त्रों में दी जाने वाली विभिन्न परिसज्जाएं और प्रत्येक प्रकार के रेशे और उसके निर्मित वस्त्रों की विशेषताओं की जानकारी प्रदान की जाती है। वस्त्रों की धुलाई, दाग-धब्बे छुडाना, वस्त्रों की उचित देखभाल, संरक्षण और संग्रहण करने की जानकारी भी इसके अन्तर्गत दी जाती है। परम्परागत वस्त्रों का इतिहास, वस्त्रों का सामाजिक मनोवैज्ञानिक महत्व, परिधानों का अवसरोचित चयन तथा परिधान संबंधी शिष्टाचार आदि भी इसके अन्तर्गत सम्मिलित है और इन सभी तथ्यों की जानकारी द्वारा एक गृहिणी गहन आत्मविश्वास से वस्त्रों को संभाल कर रखती है। इसके अतिरिक्त यह टेक्सटाइल तथा गारमेण्ट इण्डस्ट्री से जुड़कर इस क्षेत्र का कोई भी कार्य संचालन सफलतापूर्वक कर सकती है।

4. मानव विकास - बच्चों के भविष्य का निर्माण मां द्वारा होता है वही बच्चों को जन्म देती है उन्हें पालती है उन्हें एक महान व्यक्तित्व में ढालने का प्रयत्न करती है जिससे आगे चलकर वे देश के एक महान नागरिक बन सकें। उनके कंधों पर राष्ट्र और देश के संचालन का बोझ होता है। इसी को दृष्टिगत रखते हुए गृह विज्ञान छात्राओं को भी भविष्य में मां बनेगी, बच्चों की संरक्षिका बनेगी, बाल विकास की शिक्षा दी जाती है। बाल विकास के अन्तर्गत शिशु जन्म प्रक्रिया प्रसव पूर्व व उपरान्त महिला की देखभाल, शिशु के लिए उपयुक्त आहार नियोजन, वस्त्र का चयन, उनका उचित पालन पोषण तथा शिशु का शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक, बौद्धिक, सामाजिक, नैतिक और चारित्रिक

विकास, बाल मनोविज्ञान के विभिन्न पक्षों की जानकारी, बाल अपराध के कारण परिवार के विभिन्न सदस्यों के साथ बच्चों के संबंध, उनकी समस्याओं और उनके निवारण के उपाय इत्यादि का अध्ययन सम्मिलित है। बच्चों के जीवन में खेलों का महत्व, खेलों के विभिन्न प्रकार, नर्सरी स्कूल का महत्व, बच्चों के निर्मित शिक्षण सामग्री तैयार करना आदि विभिन्न पक्षों को भी इसमें पढ़ाया जाता है जिससे बच्चों का पालन पोषण तरीके से किया जा सके और उचित दिशा की ओर उनका विकास संभव हो सके।

5 गृह विज्ञान प्रसार शिक्षा - गृह विज्ञान की शिक्षा न केवल गृह विज्ञान पढने वाली छात्राओं के लिए ही उपयोगी है वरन् यह प्रत्येक परिवार के लिए आवश्यक तथा महत्वपूर्ण है। प्रत्येक महिला के लिए यह संभव नहीं है कि वह स्कूल अथवा कॉलेज में जाकर इसकी औपचारिक शिक्षा ग्रहण कर सके क्योंकि यह लम्बे समय तक चलने वाली मंहगी शिक्षा है। अत: गृह विज्ञान की उपयोगी जानकारी उनके पास तक पहुंचे सके इसलिये गृह विज्ञान प्रसार शिक्षा का अध्यापन किया जाता है। इसके अन्तर्गत विभिन्न लोगों से सम्पर्क द्वारा, प्रभावपूर्ण ढंग से, गृह विज्ञान संबंधी व्यावहारिक ज्ञान कम से कम समय मे अधिक से अधिक पहुंचाने का प्रयत्न किया जाता है।

1.7 गृह विज्ञान का महत्व

एक गृह वैज्ञानिक हेतु गृह विज्ञान से संबंधित विविध विषयों का ज्ञान अति आवश्यक है। इन्ही बातों को दृष्टिगत रखते हुए विशुद्ध गृह विज्ञान के अन्तर्गत परस्पर संबंधित विषयों का अध्ययन भी किया जाता है। सामाजिक परिवर्तन के साथ साथ गृह वैज्ञानिक की भूमिका में भी परिवर्तन आया है। गृह विज्ञान शिक्षा प्राप्त करके केवल उसे एक गृहिणी ही नहीं बनना है वरन् घर की बाहर की दुनिया में भी कदम रखना है। बाह्य दुनिया मे तालमेल रखने हेतु व्यावहारिक एवं व्यावसायिक दृष्टि की आवश्कयता है। इसीलिए गृह विज्ञान विषयों का पाठ्यक्रम अन्य संबंधित विषयों के मेल पर आधारित है जैसे बाल

विकास के साथ साथ बाल मनोविज्ञान, सामाजिक कार्य, शिशु रोग तथा परिवार कल्याण, परिवार नियोजन, शिशुओं का आहार, रोग रक्षक टीके आदि संबंधी ज्ञान भी सम्मिलित है। आहार तथा पोषण विज्ञान के साथ ही शरीर क्रिया विज्ञान, जीवाणु विज्ञान, रसायन शास्त्र, आहार चिकित्सा, इंस्टीट्यूट मैनेजमेंट आदि विषयों को जोड़ दिया गया है। गृह व्यवस्था के साथ अर्थशास्त्र, गृह निर्माण विधियां, ऊर्जा व्यय आदि का भी अध्ययन किया जाता है। वस्त्र विज्ञान के साथ टेक्सटाइल कैमिस्ट्री, बुनाई, टेक्सटाइल डिजायनिंग एवं वस्त्र निर्माण उद्योग का अध्ययन भी इसमें सम्मिलित किया जाता है। इस प्रकार प्रसार शिक्षा के साथ ग्रामीण समाजशास्त्र, सामुदायिक विकास, वयस्क शिक्षा तथा जनसंख्या नियंत्रण जैसे विषयों का सह संबंध रखा गया है। इसके साथ ही नूतन पर्यावरण का ज्ञान भी आवश्यक है। अत: छात्राएं प्रसार शिक्षा तथा वयस्क शिक्षा के अन्तर्गत पर्यावरण को नियमित रखने हेतु पोस्टर, चार्ट, बुकलैट आदि तैयार करती है। इस प्रकार गृह विज्ञान उत्तरोत्तर विकास के साथ दिनों दिन नये संदर्भो को देखते हुए परस्पर संबंधित विषयों का ज्ञान समेकित करते हुए अधिक सुगठित नवीनतम ज्ञानयुक्त पाठ्यक्रम का निर्माण करता है और दिन प्रतिदिन के जीवन को अधिक सुविधामय और सुखमय बनाने में अत्यन्त उपयोगी भूमिका निभाता है।

1.8 सारांश

नारी के व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास के लिये गृहविज्ञान की शिक्षा अत्यन्त आवश्यक हैं । यह शिक्षा प्राचीन काल से ही नारी जीवन से संबद्ध रही है । प्राचीन काल में संयुक्त परिवार प्रथा थी नारी गृहस्थी सम्बन्धित सम्पूर्ण ज्ञान अपने घर में ही वयस्क और समवयस्क स्त्रियों से सीख लेती थी । समय के साथ-साथ वर्तमान समय में सामाजिक ढॉचा, और जीवन मूल्यों में बदलाव उपस्थित हुए हैं अत: गृहविज्ञान की शिक्षा सुनियोजित और क्रमबद्ध रूप से प्रदान करने की आवश्यकता आज के सदस्यों में अधिक हैं गृहविज्ञान विषय की परिवार समाज और

देश के उत्थान में महत्वपूर्ण भूमिका है। गृहविज्ञान का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है इसके अन्तर्गत आहार एवं पोषण विज्ञान पारिवारिक संसाधनों का व्यस्थापन, मानव-विकास, वस्त्र विज्ञान एवं परिधान और प्रसार शिक्षा आदि क्षेत्र महत्वपूर्ण है। गृहविज्ञान एक रोजगारोन्मुख शिक्षा है ।

1.9 अभ्यास प्रश्न

1. गृह विज्ञान का महत्व बताइए ।
2. गृह विज्ञान की परिभाषा बताइए
3. विभिन्न क्षेत्रों में गृह विज्ञान का योगदान को समझाइये
4. गृह विज्ञान में रोजगार की जानकारी दीजिए
5. गृह विज्ञान के क्षेत्र के बारे में विस्तारपूर्वक समझाइये

1.10 संदर्भ ग्रन्थ

प्रसार शिक्षा –डा. वंदना जैन , डा पूनम कुमारी

प्रसार शिक्षा-डा बी. डी. हरपलानी

प्रसार शिक्षा- डा वृंदा सिंह

अध्याय-2

प्रसार शिक्षण

2.0 उद्देश्य
2.1 प्रस्तावना
2.2 सीखने की क्रिया
2.3 औपचारिक शिक्षण तथा प्रसार शिक्षण में अंतर
2.4 प्रसार शिक्षा का अन्य विषयों से सम्बन्ध
2.5 प्रसार शिक्षण एवं अभिप्रेरण
2.6 प्रसार शिक्षा के चरण
2.7 सारांश
2.8 अभ्यास प्रश्न
2.9 संदर्भ ग्रन्थ

2.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययनोंपरांत विद्यार्थी :-

1. सिखने की क्रिया के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
2. औपचारिक शिक्षण तथा प्रसार शिक्षण में अंतर के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।

3. प्रसार शिक्षा का अन्य विषयों से सम्बन्ध के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
4. प्रसार शिक्षण एवं अभिप्रेरण के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
5. प्रसार शिक्षा के चरण के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।

2.1 प्रस्तावना

प्रसार शिक्षण एक मनोवैज्ञानिक शिक्षण पद्धति है जिसका क्रेन्द्र बिन्दु मानव है। हमारी हर अभिव्यक्ति व्यवहारों द्वारा होती है । विभिन्न माध्यमों द्वारा सीखने के फलस्वरूप दूसरे के अनुभवों से मार्गदर्शन पाकर हमारे व्यवहारों में बदलाव आते हैं । इन परिवर्तनों द्वारा मनुष्य विकास करने की दिशा में अग्रसर होता है । प्रसार शिक्षा का उद्देश्य भी मनुष्य के व्यवहारोअ में परिवर्तन लाकर उसे विकास-पथ पर आगे बढाना है और यह शिक्षा तभी अपने उद्देश्य की प्राप्ति में सफ़ल हो सकती है जब मानव मूल्यों, ज्ञान, समझ, विश्वास एवं कार्यक्षमता में द्यनात्मक परिवर्तन आ सके । विज्ञ लोगों की सलाह एवं मार्गदर्शन व्यक्ति को इस प्रकार प्रेरित करते हैं कि वह उत्साहित होकर प्रयास करता है तथा कम मेहनत व समय में नयी-नयी बातें सीख लेने में सफल होता है । कईं बार विभिन्न प्रकार के प्रलोभनों तथा आवश्यकताओं से भी व्यक्ति उन्हें पूर्ण करने के लिए उद्दत् होता है । कहा भी गया है कि आवश्यकता आविष्कार की जननी है । नयी-नयी जानकारी प्राप्त कर व्यक्ति अपने व्यवहार में वांछित परिवर्तन लाता है और अपनी ज़रूरतों को पूर्ति करने में सफल होता है । शिक्षा मानव-व्यवहार को परिवर्तित कर उसे प्रगति पथ पर चलने हेतु मार्ग प्रशस्त करती है । एस. मिन्जर ने कहा भी है- "प्रसार एक शिक्षा है और इसका उद्धेश्य है-जिनके साथ काम किया जाता है, उनकी प्रवृत्ति एवं उनके अभ्यास परिवर्तित करना । प्रसार शिक्षा, शिक्षा की एक विशेष गैर-संस्थागत एवं अनौपचारिक शिक्षण-पद्धति है जिसमें 'करें और सींखे' के माध्यम से शिक्षा दी जाती है ।

इस शिक्षा का प्रयोग कृषि के क्षेत्र में उपलब्ध ज्ञान का प्रयोग उनकी समस्याओं को सुलझाने हेतु किया जाता है । प्रसार-शिक्षण विशेष रुप से ग्राम्य जन-जीवन में विकासात्मक परिवर्तन लाने की पद्धति है ।

2.2 सीखने की क्रिया

सीखने की क्रिया व्यक्ति को शारीरिक एवं मानसिक दोनों,रूप से प्रभावित करती है । इसके अन्तर्गत हमारी समस्त ज्ञानेंद्रियाँ यथा- आँख, कान, नाक एंव त्वचा सक्रिय रुप से भाग लेती है । किन्तु व्यक्ति किसी बात या क्रिया को कितनी मात्रा मे ग्रहण कर पायेगा, यह उसकी विषय के प्रति होने वाली एकाग्रता एवं रुचि पर निर्भर करता हैं । संवेदन शक्तियाँ हमें हर प्रकार के अनुभवो से परिचित करा हमारे ज्ञान व बुद्धि की सीमा को बढ़ाते है । दहामा के अनुसार हम विभिन्न ज्ञानेन्द्रियों द्वारा अलग-अलग मात्रा मे किसी भी बात को सीख पाते हैं । इसका विवरण उन्होने निम्नलिखित प्रकार से किया है -

स्वाद द्वारा : 1%

स्पर्श द्वारा : 1.5 %

घ्राण द्वारा : 3 1/2

श्रवण द्वारा : 11%

दृष्टि द्वारा : 83%

सीखने की क्रिया द्वारा प्राप्त अनुभवों व ज्ञान को हम स्वयं में आत्मसात कर लेते हैं । परिवर्तित व्यवहार कुछ समय तक हमारे व्यक्तित्व का अंग बन जाते हैं, किंतु प्रत्येक व्यक्ति की नईं बात सीखने की प्रतिधारण क्षमता अलग-अलग होती है । दहामा ने विभिन्न व्यक्तियो की सीखने वाले को प्रतिधारण क्षमता के विषय में इस प्रकार बताया है-

पढ़कर	:	10%
सुनकर	:	20%

देखकर	:	30%
देखकर एंव सुनकर	:	50%
परस्पर एंव वार्तालाप	:	70%
कार्य संपादन करते हुए वार्तालाप	:	90%

(स्त्रोत : प्रसार शिक्षा, गीता पुस्प शॉ एवं जायस शीला शॉ ।)

दहामा ने आगे बताया है कि सीखने के दौरान अधिक ज्ञानेन्द्रियों के सक्रिय होने पर व्यक्ति को प्रतिधारण क्षमता बढ जाती है । इस क्रिया के दौरान सर्वाधिक प्रभाव दृष्टि का होता है जबकि सीखने की क्रिया में सभी ज्ञानेन्द्रियों की सहभागिता जरूरी होती है । कार्य-संपादन के दौरान वार्तालाप करने से मनुष्य सबसे अधिक सीखता है एवं उसकी प्रतिधारण क्षमता भी अधिक होती है ।

2.3 औपचारिक शिक्षण तथा प्रसार शिक्षण में अन्तर

औपचारिक शिक्षण तथा प्रसार शिक्षण में कुछ विशेष अन्तर होते हैं । औपचारिक शिक्षा बच्चों एवं युवाओं को शिक्षित करने हेतु चलाईं जा रही एक शिक्षण प्रणाली है जिसका समय, स्त्र पाठयक्रम प्रवेश एवं परीक्षा के नियम एवं एक कक्षा से दूसरी कक्षा मे प्रोन्नति का स्वरूप नियत होता है । यह शिक्षा विद्यालय एवं महाविद्यालयों की सीमा के अन्दर दी जाती है जिसमें छात्र की सुविधा-असुविधा की स्थिति में किसी तरह के परिवर्तन किए जाने की कोई गुंजाइश नहीं होती । एक नियत पाठ्यक्रम के अनुसार शिक्षक कक्षाएँ लेते हैं । उन्हें भी किसी प्रकार का परिवर्तन करने की कोई आजादी नहीं होती । यदि छात्र पाठ्यक्रम को आत्मसात नहीं कर पाते तो ऐसी स्थिति में एक कक्षा से दूसरी कक्षा में जाने के लिए उन्हे प्रोन्नति नहीं दी जा सकती । सामूहिक रूप से दी जाने वाली इस शिक्षण पद्धति में एक निश्चित क्रम होता है और विद्यार्थियों को एक के बाद दूसरी शिक्षा, यथा विद्यालय से महाविद्यालय, महाविद्यालय से विश्वविद्यालय मे ग्रहण करनी होती है, जिसके अन्तर्गत उन्हें विभिन्न विषयों के सैंद्धान्तिक एवं प्रायोगिक पक्ष

से परिचित कराया जाता है । किन्तु यहाँ यह बात अत्यन्त मुखर होकर सामने आई है कि प्राय: यह शिक्षा किताबों में ही सिमट कर रह जाती है । इसी कारण आज विद्यालय एवं महाविद्यालयों मे विविध व्यावसायिक पाट्यक्रम एवं तकनीकी सम्बन्धी शिक्षा को भी सम्मिलित किया जा रहा है । ताकि उस ज्ञान का उनके जीवन एवं आजीविका में वास्तविक रूप से लाभ हो तथा वे स्वरोजगार उत्पन्न करने में भी सक्षम हो सकें ।

प्रसार शिक्षा, औपचारिक शिक्षा से बिल्कुल भिन्न है । दोनों के स्वरूप एवं प्रकृति मे भिन्नता है । यह शिक्षा किसी भी उम्र के नवयुवक, प्रौढ एवं वयस्को को उनके कार्यस्थल पर ही दी जाती है तथा उनके घर कार्यक्षेत्र से सम्बन्धित बातों की जानकारी दी जाती है। नयी सूचनाएँ दी जाती हैं ताकि उन्हें अपने कार्य में शामिल कर लोग अपनी समस्याओं का समाधान कर सके । यह शिक्षा व्यक्ति विशेष की आवश्यकताओं पर आधारित होती है एवं स्वैच्छिक रूप से दी जाती है । जरूरत के अनुसार इस शिक्षा में बदलाव भी लाया जा सकता है । किसी भी उम्र, बौद्धिक एवं शैक्षणिक स्तर, समुदाय या वर्ग के लोगों को इसमें शामिल किया जा सकता है । प्रसार शिक्षक लोगों को सुविधा एवं जरूरत के अनुसार अपने शिक्षण में बदलाव ला सकते हैं । प्राय: उनकी यह कोशिश होती है कि ज्यादा से ज्यादा लोग उनके द्वारा दिए जाने वाले ज्ञान को अपना कर अपनी समस्याओं को हल कर सके, विकास कर सकें । इस शिक्षण में कोई क्रमबद्धता नही होती ।

प्रसार शिक्षा एक व्यावहारिक शिक्षण पद्धति है जो लोगों की उनकी जरूरतों के अनुसार कार्यक्षेत्र से जुड़े होने पर भी अपने कार्यक्रम में सम्मिलित करती है जिसके फलस्वरुप लोगों में सामाजिक प्रतिष्ठा, आर्थिक लाभ, सुरक्षा, स्वावलम्बन एवं आत्म-सन्तुष्टि का भाव उत्पन्न होता है । यह शिक्षा लोगों की गलत-परम्पराओं, कार्य-पद्धति, रूढ़िवादिता को दूर कर एक स्वस्थ व विकासशील समाज के निर्माण में सहायता पहुँचाती है जिससे मानव एंव समाज का सर्वाधिक विकास होता है ।

औपचारिक शिक्षा एवं प्रसार शिक्षा में अन्तर

औपचारिक शिक्षा	प्रसार शिक्षा
1. औपचारिक शिक्षा एक सैद्धान्तिक या परिकल्पना के स्वरूप के रूप में जानी जाती है तथा व्यावहारिक अथवा वास्तविक रूप से कार्य करती है ।	1 . प्रसार शिक्षा व्यावहारिक रूप से किसानों की समस्याओँ पर आधारित शिक्षा है । फलतः इसकी शुरुआत सैद्धान्तिक या मूल रूप से आपसी समझ से होती है ।
2. इस शिक्षा में नियमित पाठयक्रम होता है ।	2. प्रसार-शिक्षा में कोई निश्चित पाठ्यक्रम नहीं होता । सीखने वाले की जरूरत केअनुसार शिक्षा का स्वरूप व विषय बदला जा सकता है ।
3. यह शिक्षा एक समान उद्देश्य की प्राप्ति हेतु सभी को समान रूप से दो जाती है ।	3. इसमें भाग लेने वाले व्यक्ति अलग-अलग तो होते ही हैं, उनके उद्देश्य भी भिन्न प्रकार के होते हैं ।
4. औपचारिक शिक्षा सीधी एवं निश्चित पाठ्यक्रम के आधार पर दी जाती	4. प्रसार शिक्षा आम तोर पर ग्रामीणों की

है । 5. शिक्षण में लगी हुई संस्थाओं के अपने विशेष नियम होते हैं तथा सीखने वाले किसी भी तरह के निर्णय लेने के लिए स्वतंत्र नहीं होते। 6. औपचारिक शिक्षा एक विशेष प्रकार की शिक्षा है जो एक निश्चित वर्ग के दायरे में, विषय तथा डिग्री पर आधारित होती है । 7. सीखने वाले प्रत्यक्ष एवं सीधे रूप से शिक्षकों द्वारा शिक्षा पाते हैं ।	जरूरत के अनुसार उनकी समस्याओँ के समाधान को ध्यान में रखकर दी जाती है । 5. प्रसार शिक्षा में सीखने वालों को पूरी स्वतंत्रता होती है कि वे अपनी मर्जी से विषय का चुनाव कर सकते हैं । 6. यह अनौपचारिक कुछ हद तक औपचारिक शिक्षा की ही तरह वर्ग-केन्द्रित होती है किन्तु डिग्री की कोई बात इसमें नहीं की जाती । 7. इस शिक्षा में स्थानीय शिक्षक सीखने वालों को प्रशिक्षित करते हैं तथा उनमें ज्ञान का प्रसार करते हैं

2.4 प्रसार शिक्षा का अन्य विषयों से संबंध

प्रसार शिक्षा के विषय मे सर्वमान्य दृष्टिकोण है अत: मानव व्यवहार में वांछित बदलाव लाने के लिए प्रसार शिक्षा एक विकसित विधा है । इसे व्यावहारिक विज्ञान माना जाता है, जिसमें कार्य को समझ, पूर्वानुमान एवं नियंत्रण- तीनों बातें शामिल होती है । प्रसार शिक्षा सामाजिक विज्ञान से भिन्न होती है । हालाया ने विभिन्न विज्ञाननों को तीन भागों में बाँटा है-

1. भौतिक या पदार्थ विज्ञान
2. जैव विज्ञान
3. सामाजिक विज्ञान

पुन: उन्होंने सामाजिक विज्ञान को तीन समूहों में बाँटा है-

1. पूर्ण समाज विज्ञान
2. आंशिक समाज विज्ञान
3. सामाजिक सरोकार विज्ञान

प्रसार शिक्षा को आंशिक समाज विज्ञान की श्रेणी में शामिल किया गया है ।

गिलफोड ने विभिन्न विज्ञाननों में प्रसार शिक्षा के स्थान को निम्नलिखित चित्र में प्रदर्शित किया है—

प्रसार शिक्षा एवं समाज शास्त्र - प्रसार शिक्षा एवं समाजशास्त्र दोनों का एक ही केन्द्रित बिन्दु है । समाजशास्त्र का मुख्य कार्य समूह विशेष की रचना, कार्य तथा संगठन का अध्ययन करना है जबकि प्रसार शिक्षा समूह के साथ व्यक्ति विशेष की जिन्दगी एवं मानवीय व्यवहारों का अध्ययन करती है तथा यह बताती है कि किसी व्यक्ति के व्यवहार में किस प्रकार वांछित परिवर्तन लाए जा सकते है । किन्तु यह स्पष्ट है कि समाजशास्त्र अथवा प्रसार शिक्षा, दोनों में से कोई भी अकेले उद्देश्य की प्राप्ति में सक्षम नहीं होगा जब तक दोनों एक-दूसरे का सहारा न पालें ।

प्रसार शिक्षा एवं ग्रामीण समाजशास्त्र

प्रसार शिक्षा एवं ग्रामीण समाजशास्त्र एक दूसरे से काफी नजदीक और मिलते जुलते हैं । इन दोनों के बीच में अन्तर करना काफी मुश्किल होता है, क्योंकि ये दोनों ही ग्राम्य जीवन के अध्ययन से जुड़े होते हैं । ये एक-दूसरे से लिपटे होते हैं तथा एक-दूसरे की संगति में फलते-फूलते है ।

प्रसार शिक्षा एवं सामान्य 'मनिविज्ञान

प्रसार शिक्षा तथा सामान्य मनोविज्ञान का एक-दूसरे से गहरा सम्बंध है क्योंकि समाज में मानवीय व्यवहारों का अध्ययन तब तक नहीं किया जा सकता जब तक कि वैयक्तिक व्यवहारों का गहन अध्ययन न कर लिया जाय । मनोविज्ञान मानवीय दिमाग का विज्ञान है जो जीव का बौद्धिक अध्ययन के साथ साथ उनके व्यवहारों के विभिन्न आयामों को प्रभावित करता है । इसकी कई शाखाएँ हैं जिनमें सामाजिक मनोविज्ञान व्यक्ति के सामाजिक परिवेश में होने वाले व्यवहारों का अध्ययन करता है तथा प्रसार शिक्षण में सहायता करता है। ठीक इसी प्रकार शिक्षा मनोविज्ञान है प्रसार शिक्षक को वयस्क शिक्षण पद्धति के विषय में बताता है कि किस प्रकार व्यक्ति में वांछित परिवर्तन लाए जा सकते हैं । अनुसंधान में प्रयोग किए जाने वाले मनोवैज्ञानिक उपकरण एवं विधियों प्रसार शिक्षण मे प्रयुक्त किए जाते हैं ।

प्रसार शिक्षा एवं सांस्कृतिक नृविज्ञान –

सांस्कृतिक नृविज्ञान में सिर्फ समूह का अध्ययन किया जाता है नृविज्ञाननों सम्बन्धी अध्ययनों में जिन बातों पर विशेष बल दिया जाता है, उनका संबन्ध प्रसार शिक्षा से भी होता है ।

प्रसार शिक्षा एवं नीतिशास्त्र

समाज को सही दिशा देने के लिए कुछ नीतियाँ निर्धारित की गई हैं । ये नियम व्यक्ति के व्यवहारों को प्रभावित करते हैं, जिसका प्रसार-शिक्षा में बहुत महत्त्व है । व्यक्ति के व्यवहारों में वांछित परिवर्तन लाने में ये नीतियाँ सहायक होती हैं, मार्गदर्शन करती हैं ।

प्रसार शिक्षा एवं अर्थशास्त्र

व्यक्ति या समूह विशेष की आर्थिक स्थिति को सुधारने के संदर्भ में प्रसार शिक्षा एवं अर्थशास्त्र का गहरा सम्बन्ध है । अर्थशास्त्र में वर्णित अनेक आर्थिक समस्याओं और प्रसार शिक्षा की परिधि मे आने वाली परेशानिया एक-दूसरे से मिलती-जुलती हैं ।

प्रसार शिक्षा एवं राजनीतिशास्त्र

व्यक्तिगत एवं समूह के व्यवहार, दोनों का अध्ययन प्रसार शिक्षा एवं राजनीति शास्त्र में किया जाता है किन्तु संस्थागत प्रशासन की दृष्टि से दोनों एक-दूसरे से भिन्न हैं । पर ये दोनों एक-दूसरे की सहायता से विकसित होते हैं ।

प्रसार शिक्षा एवं असामान्य मनोविज्ञान - मानव के असामाजिक व्यवहारों का अध्ययन असामान्य मनोविज्ञान के कार्यक्षेत्र में आता है । प्रसार शिक्षा भी लोगों के असामान्य व्यवहारों की उत्पत्ति के सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक आधारों की सहायता से उनके लिए सही शिक्षण पद्धति व मुद्दों पर कार्य करती है ।

प्रसार शिक्षा एवं गृह विज्ञान-गृहविज्ञान उन मुद्दों का अध्ययन करती है जो पारिवारिक जीवन में वांछित परिवर्तनों हेतु प्रभावी होते हैं । प्रसार शिक्षा प्राय : हर व्यक्ति एवं संस्था के साथ कार्य करती है जो इन परिवारों व घरों से आते हैं । फलत: गृहविज्ञान के साथ इसका मधुर संबंध है । किन्तु भारत जैसे देशों में संस्कृती एवं अन्य कारणों से गृहविज्ञान वाछित स्तर तक प्रसार-शिक्षा के लिए सहायक नहीं हो पाता है ।

प्रसार शिक्षा एवं शिक्षा- प्रसार शिक्षा में विभिन्न लिंग के वयस्क एवं युवाओं को शिक्षा में शामिल किया जाता है । इसमें लोग स्वेच्छा से भाग लेते हैं । प्रसार शिक्षा में विभिन्न दृश्य- श्रव्य साधनों का प्रयोग किया जाता है-। इनके बिना प्रसार-शिक्षण की क्रिया/कार्यक्रम सफल नहीं हो सकता । हम कह सकते हैं कि प्रसार शिक्षा एक ऐसी विधा है जो विभिन्न विज्ञाननों से सूचनाओं का संकलन कर, किस प्रकार उनका वास्तविक रूप में सार्थक प्रयोग किया जा सके, बताती है ।

प्रसार शिक्षा एवं संचार विज्ञान - समाज में विभिन्न क्षेत्रों में होने वाले नवीन परिवर्तन व विकास के विषय मे जानकारी का प्रसार करने में संचार विज्ञान की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। प्रसार शिक्षा में मीडिया एवं संचार प्रक्रिया का अहम् स्थान होता है। चूँकि प्रसार शिक्षा समाज के विभिन्न वर्गों को उनकी जरूरत के मुताबिक दो जाती है, इसलिए संचार साधनों का समूह के स्तर पर होना अत्यावश्यक है।

प्रसार शिक्षा एवं व्यवस्थापन - व्यवस्थापन एक बहुविषयक विधा है जो किसी निश्चित उद्धेश्य व दक्षता की प्राप्ति हेतु व्यक्ति को प्रक्रिया से गुजरना, निर्णय लेना तथा उद्यमिता को बढाने हेतु स्वयं में क्षमता बढ़ाने की शिक्षा देता है । व्यवस्थापन का विज्ञान प्रसार शिक्षा में भी अहम् भूमिका निभाता है । सामाजिक विकास हेतु यह विज्ञान विविध उपकरण व तकनीक जुटाने के साथ-साथ योजना

बनाना, निर्देशन, कार्यान्वयन, नियंत्रण एवं योजना का बजट बनाना सिखाता है ।

2.5 प्रसार शिक्षण एंव अभिप्रेरण

व्यक्ति के प्रत्येक कार्य करने के पीछे कोई न कोई प्रेरक शक्ति या प्रेरणा कार्य करती है जिससे वह अपने उद्देश्य क्रो प्राप्त करने हेतु प्रयास कर पाता है ।

अभिप्रेरणा हमारी आन्तरिक शक्ति है जो हमें आगे बढने के लिए तब तक प्रेरित करता है जब तक कि हम अपने उद्धेश्य को प्राप्त न कर लें । यह प्रेरक शक्ति तीन तत्त्वों से प्रभावित होती है आवश्यकता, अन्तनोंद (आशा) तथा प्रोत्साहन । सर्वप्रथम हम किसी आवश्यकता को महसूस करता है, तो उसकी प्राप्ति हेतु उद्धेश्य निर्धारित कर प्रयास करना शुरू करते हैं । सबसे पहले हम उद्देश्य निर्धारित करने हेतु मानसिक क्रिया करते हैं । उद्देश्य की प्राप्ति के क्रम में हम तरह-तरह की परेशानियों और तनाव से गुजरते है जिसे अन्तनोंद कहते हैं । विभिन्न अन्तनोंद, कार्य व उद्धेश्य को प्राप्ति के साथ ही नष्ट हो जाते हैं । फलत: व्यक्ति और आगे बढने के लिए प्रोत्साहित होता है । फिर वह

बड़े-बड़े उद्देश्य निर्धारित करने की हिम्मत करता है और निरन्तर आगे बढता है ।

अभिप्रेरको के प्रकार--व्यक्ति की आवश्यकताएं असीमित है । उसकी हर जरूरत के पीछे कोई न कोई अभिप्रेरणा कार्य करती है । ये अभिप्रेरणाएँ निम्नलिखित प्रकार की होती हैं-

1. **जन्मजात्त अभिप्रेरक**--प्रत्येक जीव में कुछ जन्मजात अभिप्रेरणाएँ होती हैं । उदाहरणार्थ भूख, प्यास, नींद, मल-मूत्र त्याग करने आदि की प्रवृत्ति या यह जरूरत हर जीव में जन्म से ही होती है जिन पर किसी का नियंत्रण ज्यादा देर तक नहीं होता है ये अभिप्रेरक तनाव उत्पन्न करते हैं जिससे व्यक्ति शीघ्रातिशीघ्र इनकी पूर्ति चाहता है और प्रोत्साहित होकर इसके लिए क्रिया करता है । अन्तत : वह अपने लक्ष्य की पूर्ति करने में सफल हो जाता है ।
2. **उपार्जित अभिप्रेरक**--व्यक्ति में उम्र बृद्धि के साथ-साथ उसके अनुभवों एवं आवश्यकताओं में बदलाव आते हैं और उनमें परिवकृति आती है । ये अभिप्रेरक दो प्रकार के हैं…वैयक्तिक तथा सामाजिक वैयक्तिक अभिप्रेरकों के अन्तर्गत व्यक्ति को अपनी आदतें, अभिवृत्तियॉ, जीवन के लक्ष्य, पसन्द, दृष्टिकोण, इच्छाएँ शामिल होती हैं जबकि सामाजिक अभिप्रेरको के अन्तर्गत स्वाग्रह, सामुदायिक भावनाएं, प्रवृत्ति, विरोध, संग्रह प्रवृत्ति एवं उपलब्धियाँ आदि आते हैं।

   अभिप्रेरक हमारे व्यक्तित्व का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा होते हैं । फलत: प्रसार शिक्षा की सफलता के लिए भी ये अभिप्रेरक अहम होते हैं क्योंकि प्रसार शिक्षण का उद्धेश्य व्यक्तियों की आधारीय एंव सामाजिक जरूरतों को पूरा करना होता है । अत: प्रसार कार्यकर्ता को ग्रामीणों की प्रवृत्तियों को समझना एवं उसकी अभिवृत्तियों को प्रसार कार्यक्रम में स्थान देना आवश्यक है किन्तु यह बात सर्वविदित है कि सकारात्मक अभिवृत्तियों ही व्यक्ति के विकास एवं प्रसार कार्यक्रम को सफलता के शिखर पर ले जाती

हैं । अत : व्यक्ति/ग्रामीणों की अभिवृत्तियों को जानना किसी प्रसार-कार्यकर्ता के लिए अत्यावश्यक है, क्योंकि इन्हें जाने बगैर लोगों की सोच एवं जीवन-पद्धति में अस्थायी बदलाव लाना असम्भव है ।

2.6 प्रसार शिक्षण के चरण

प्रसार शिक्षण के विषय में हम जानते हैं कि इसका लक्ष्य ग्रामीणों की समस्याओं के समाधान एवं उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति करना होता है । प्रसार कार्यकर्ता उन्हें उनकी वास्तविक स्थिति से परिचित कराता है तथा यह बताता है कि किस प्रकार उस स्थिति को उन्नत किया जा सकता है । उसके विश्लेषण के फलस्वरूप ग्रामीण अपनी आवश्यकताओं के प्रति अवगत होते हैं । किन्तु किसी भी आवश्यकता को पूरा करने हेतु आर्थिक संसाधन की जरूरत होती है । कृषि कार्यों में लगे ग्रामीणों के पास अपनी आर्थिक स्थिति को सुदृढ करने के लिए दो ही माध्यम हैं--कृषि की पैदावार बढाना तथा कृषि संबन्धित उद्योग-धन्धों का विकास कर अपनी आय बढाने का प्रयास करना । इन दोनों विधियों की सफलता के लिए ग्रामीणों को प्रसार कार्यकर्ता के सहयोग कि जरूरत होती है । प्रसार कार्यकर्ता ग्रामीणों को कृषि की उन्नत विधि, उन्नत बीज व तकनीक, कीटनाशकों का प्रयोग, उर्वरकों का प्रयोग, सारी सामग्रियों को खरीदने के लिए आर्थिक ऋण व सहायता उपलब्ध कराना, अनाज का संग्रह कराना, कृषि उत्पादों की सही मूल्य पर बिक्री आदि की सुबिधा उपलब्ध कराता है । कृषि सम्बन्धी नयी-नयी तकनीको की जानकारी उपलब्ध कराने की जिम्मेदारी भी प्रसार कार्यकर्ता की होती है जिसमें वह कई मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं की मदद लेता है । इन मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओ को प्रसार शिक्षण के चरणों के रूप में जाना जाता है जिनसे परिचित कराने के लिए विभिन्न दृश्य एवं श्रव्य साधनों, यथा— पोस्टर, प्रदर्शनी, चलचित्र, दूरदर्शन आदि की आवश्यकता ली जाती है । प्रसार शिक्षण के निम्न लिखित चरण है-

1. **ध्यानाकर्षण**--प्रसार शिक्षण का प्रथम चरण है ध्यानाकर्षण । प्रसार शिक्षा में ऐसे कार्यों की चर्चा की गई है की यदि किसी कार्य का परिणाम बहुत अच्छा हो, जिससे ग्रामीणों को समस्याओं का शीघ्रातिशीघ्र समाधान हो जाए ग्रामीणों का ध्यान अपनी और खींचते हैं । उदाहरणार्थ, बहुत अच्छी फसल पैदा होना, फलों से लदे पेड़ आदि आसानी से किसी का भी ध्यान आकर्षित कर लेते हैं । घरों का सुव्यवस्थित रख-रखाव, नये-नये व्यंजन आदि महिलाओं का मन मोह लेते हैं । फलत: किसी भी व्यक्ति में नई बातों, कार्यों के प्रति आकर्षण उत्पन्न किया जा सकता है । प्रसार कार्यक्रम में ग्रामीणों को सुचना देने के लिए प्रदर्शनी, कृषि मेला, पोस्टर, छायाचित्र, रेडियो, टेलीविजन, हस्तशिल्प एवं हस्तकला प्रदर्शनी का भी आयोजन किया जाता है जिससे लोग आकर्षित होते हैं और अपनी कार्यशैली में परिवर्तन लाने के लिए उत्साहित होते है ।

2.अभिरुचि--प्रत्येक व्यक्ति को अभिरुचि में भिन्नता होती है और इनके अनुसार ही लोग अलग- अलग वस्तुओं क्रियाओं के प्रति आकर्षित होते हैं । ऐसी स्थिति मे आगे बढना और बढने के लिए रास्ता आसान हो जाता है । आकर्षण के माध्यम लोगों को कार्यो के परिणाम जानने के लिए भी जागरूक बनाते हैं । इस स्थिति मे आने के बाद प्रसार शिक्षकों को कार्यों के परिणाम के विषय में प्रभावशाली ढंग से धीरे- धीरे बताना चाहिए ताकि उन्हें जबरदस्ती थोपें जाने का अहसास न हो । ग्रामीणों को यदि यह पता चल जाय कि कोई विधि उनकी समस्याओँ के समाधान में सहायक होगी तो वे स्वयं उसे अपनाने के लिए आगे बढ़ेंगे ।

3.आकांक्षा—जिस वस्तु या विधि से व्यक्ति आकर्षित होते है उसे तुरंत प्राप्त करना चाहते हैं उसके मन में इसके लिए बडी उत्सुकता होती है । आकांक्षा कि यह आन्तरिक शक्ति उन्हें आगे बढकर प्रयास करने हेतु प्रेरित करती है । ऐसे में कम प्रयास एवं कम समय में ही व्यक्ति किसी पद्धति को अपना लेता है । अब प्रसार-कार्यकर्ता को चाहिए की वह लोगों को कार्य के परिणाम को बताता रहे ताकी लोगों की उस

पद्धति मे रुचि बनी रहेगी, तभी व्यक्ति अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए तत्पर रहेगा ।

4.विश्वास-- जब व्यक्ति कुछ पाना चाहता है तो उसकी इच्छा उसे निरन्तर आगे बढने के लिए प्रेरित करती है । प्रसार कार्यकर्ता ग्रामीणों को विभिन्न दृश्य एवं श्र्व्य साधनों को सहायता से नई-नईं पद्धतियों एवं सूचनाओं से रूबरू कराता है । ऐसे में ग्रामीण अपनी आंखो से विभिन्न पद्धतियों को अपनाने के फायदे देख पाते हैं । जब वे इन फायदों के प्रति आश्वस्त हो जाते हैं तो आगे को क्रियाएँ स्वत: एवं स्वाभाविक रूप से आगे बढती हैं ।

5. जानकारी--व्यक्ति की किसी भी वस्तु या पद्धति में रुचि होने पर वह उसके विषय में छोटी से छोटी बातों कि जानकारी पाने के लिए उद्यत होता है । ऐसी स्थिति में प्रसार कार्यकर्ता ग्रामीणों को सभी बातों की जानकारी देता है ताकि वे इन्हें अपनाकर अपना कार्य सम्पादित कर सके । यहाँ प्रसार कार्यकर्ता की भूमिका बहुत अहम होती है, क्योंकि ग्रामीण उसी के माध्यम से यह जान पाते हैं की कार्य कब और कहाँ से शुरू किया जाय ।

6.क्रिया—प्रसार क्रिया का यह महत्त्वपूर्ण चरण है जब किसी उद्देश्य कि प्राप्ति हेतु कार्य को एक व्यावहारिक स्वरूप दिया जाता है । कोई भी शिक्षण तभी सफल माना जाता है जब तक कि उसके परिणाम हमारे व्यक्तित्व का अटूट हिस्सा न बन जाएँ । प्रसार शिक्षण के माध्यम से प्राप्त पद्धतियों एवं सूचनाओं को प्राप्त कर ग्रमीण उनके अनुसार कार्य करते है । जब तक जानकारियाँ नहीं प्राप्त होती, ग्रामीण पुरानी विधियों के अनुसार ही कार्य करते है । फलत: उनके जीवन एवं कार्य पद्धति में कोई विकास नहीं हो पाता । प्रसार कार्यकर्ता को कार्य के दौरान आने वाली दिक्कतों से ग्रामीणों को परिचित करा देना चहिए ताकि वे उन दिक्कतों से परेशान न हों । ये दिक्कतें भौतिक, आर्थिक, सामाजिक, संस्कृतिक, भौगोलिक किसी भी प्रकार की हो सकती हैं ।

7.सन्तुष्टि - जब व्यक्ति किसी जरूरत को महसूस करता है तो उसकी प्राप्ति हेतु प्रयास करता है । इस प्रयास में विभिन्न प्रकार की प्रेरक शक्तियाँ उसको प्रभावित करती है । जब वह अपने उद्धेश्य की प्राप्ति में सफल हो जाता है तो उसे संतोष की अनुभूति होती है । वांछित लक्ष्य के अन्तर्गत व्यक्ति की आवश्यकता की पूर्ति, उसकी समस्या को हल करने के उपाय, कार्यक्षमता में वृद्धि कुछ भी माने जा सकते हैं । उद्देश्यों की प्राप्ति के सिलसिले में प्रसार कार्यकर्ता को यह बात हमेशा ध्यान में रखनी चाहिए कि ग्रामीणो को उन्हीं उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु प्रेरित किया जाय, जिसे प्राप्त करने की उनमें योग्यता हो । यदि उनमें योग्यता की कमी अथवा संसाधनों का अभाव हो, तो ऐसे में उद्देश्यो की प्राप्ति में सफलता नहीं मिलेगी । यदि किसी प्रकार उद्धेश्यो/लक्ष्यों की प्राप्ति हो भी गई, तो उनकी गुणवता में कमी पाई जा सकती है ।

8. मूल्यांकन - प्रसार शिक्षा का महत्त्वपूर्ण चरण मूल्यांकन, वांछित लक्ष्यों की प्राप्ति कितनी हद तक हुई तथा उनकी गुणवता का वर्णन करता है । मूल्यांकन विभिन्न कार्यो में हुई त्रुटियों व लाभों की जानकारी के साथ भविष्य में बनाई जाने वाली योजनाओं तथा कार्यक्रमों के लिए आधार का कार्य करता है । यह सीखने तथा सिखाने वाले दोनों को होने वाले फायदे की भी चर्चा करता है तथा समय-समय पर कार्य में सुधार लाने की जानकारी देता है ।

कार्यक्रम के मूल्यांकन से ही यह ज्ञात हो पाता है कि ग्रामीणों अथवा सीखने वालों के व्यवहारों में कितने परिवर्तन आए, उनकी सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति में क्या बदलाव आए ।

2.7 सारांश

प्रसार शिक्षा मानव व्यवहार में सकारात्मक परिवर्तन लती है, व्यक्ति के सवेंगो का विकास करती है, और उसमे समझ, ज्ञान और कार्यक्षमता में धनात्मक परिवर्तन लाती है। प्रसार शिक्षा औपचारिक शिक्षण से भिन्न ग्रामीण विकास से केन्द्रित, उनकी समस्याओं का समाधान पर केन्द्रित होता है । प्रसार शिक्षा के अंतर अनुशासनात्मक शिक्षा है

जिसका समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र,भौतिकशास्त्र, जैव विज्ञान, राजनीति शास्त्र, गृहविज्ञान, मनोविज्ञान, शिक्षा जैसे विषयो से गहरा संबंध है ।

2.8 अभ्यास प्रश्न

1. सीखने की क्रिया को समझाइये ?

2. औपचारिक शिक्षण तथा प्रसार शिक्षण में अंतर को समझाइये?

3.प्रसार शिक्षा का अन्य विषयों से सम्बन्ध का वर्णन कीजिए ?

4. प्रसार शिक्षण एवं अभिप्रेरण को समझाइये ?

5. प्रसार शिक्षा के चरणों की विवेचना कीजिए

2.9 संदर्भ ग्रन्थ

प्रसारशिक्षा –डा. वंदनाजैन , डा पूनम कुमारी

प्रसारशिक्षा-डाबी. डी. हरपलानी डारी

प्रसारशिक्षा- डा. वृंदा सिंह

इकाई-3

प्रसार शिक्षा : दर्शन, सिद्धान्त एवं विशेषताएं

3.0 उद्देश्य
3.1 प्रस्तावना
3.2 प्रसार शिक्षा का दर्शन
3.3 प्रसार शिक्षा के दर्शन की विशेषता
3.4 प्रसार शिक्षा के सिद्धांत
3.5 सारांश
3.6 अभ्यास प्रश्न
3.7 संदर्भ ग्रन्थ

3.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात विद्यार्थी -

1. प्रसार शिक्षा के दर्शन की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
2. प्रसार शिक्षा की विशेषताओं की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
3. प्रसार शिक्षा के सिद्धांत की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।

3.1 प्रस्तावना

दर्शन कुछ नियमों या सिद्धान्तों पर आधारित होता है। प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन में हानि लाभ उतार चढाव को ध्यान में रखते हुए कुछ सिद्धान्तों का निर्माण करता है तथा उसी के अनुसार आचरण करता है। वही उसका जीवन दर्शन हो जाता है। यही उसके व्यवहार, मनोवृति तथा कार्य सम्पादन शैली को प्रभावित करता है। व्यक्ति बचपन से जिस प्रकार के वातावरण में पलता बढता है, जिस प्रकार का प्रेम, आचरण वह दूसरो से पाई है, जिन नैतिक आदर्शों को ग्रहण करता है, वही व्यवहार तथा आदर्श उसको जीवनदर्शन हो जाते है,

उदाहरणार्थ - यदि व्यक्ति का पालन पोषण सुन्दर व सुखद वातावरण में होता है। माता पिता, शिक्षकों, दोस्तों, परिवार के सदस्यों तथा समाज के लोगों से अच्छा व्यवहार मिलता है, अच्छे अच्छे नैतिक गुणों को ग्रहण करता है, तो उस व्यक्ति का स्वभाव भी हंसमुख, मृदुल, शांत, सहयोगात्मक तथा सद्भावनापूर्ण होता है। उसके कार्य सम्पादन की शैली भी अनोखी होती है। वह दूसरो के साथ भी अच्छा आचरण करता है । लोगों की मदद करता है। उसका व्यवहार सहयोगात्मक एवं स्वभाव शांतिपूर्ण होता है क्योंकि वही उसका जीवन दर्शन होता है। ऐसे व्यक्ति के चेहरे पर एक मुस्कान हमेशा ही छायी रहती है। इसके ठीक विपरित जब बालक का पालन पोषण हिंसात्मक वातावरण से होता है, उसे बात बात में डाटा, फटकारा जाता है, छोटी छोटी बातों के लिए दंडित किया जाता है, तो वैसा बच्चा पल बढकर क्रोधी स्वभाव का हो जाता है। वह अपनी हर बात मनवाने के लिए अपने लक्ष्यों की पूर्ति के लिए हिंसात्मक हथकंडे तथा क्रोध के अस्त्र को ही अपनाता है। क्योंकि वहीं उसका जीवन दर्शन बन जाता है। वही उसका आदर्श होता है और कार्य सम्पादन की शैली भी ।

प्रसार शिक्षा का दर्शन अत्यन्त ही विस्तृत, लाभकारी, व्यवस्थित तथा सागर से भी अधिक गहराई लिए होता है। इसका दर्शन हरेक व्यक्ति का एवं उत्थान सुखद जीवन प्रदान करना है। इसका दर्शन प्रत्येक परिवार, समाज, प्रान्त, राष्ट्र एवं सम्पूर्ण विश्व की उन्नति एवं प्रगति से है। ग्रामीण लोगो की उन्नति तथा प्रगति से है। यह उन लोगों के लिए है जो सदियों से अपेक्षित है, तिरस्कृत एवं पिछड़े हुए एवं वंचित है। जो गरीब है, अभावग्रस्त हैं, जिन्हें दोनों शाम भरपेट रोटी नहीं मिलता, तन पर वस्त्र नहीं होता, रहने के लिए आवास नहीं होता, जो खुले आकाश के नीचे उखड खाबड धरती के प्रांगण में जीवन यापन करते हें, यह उन लोगों को आत्म निर्भर बनाता है। उन्हें वांछित जानकारी प्रदान कर उनके सोच में परिवर्तन लाता है। यह उनकी मदद करता है ताकि वे स्वयं का प्रयास करके, मेहनत करके, धन अर्जित करके अपने तथा अपने परिवार के लिए रोटी, कपडा एवं मकान की व्यवस्था कर सके।

अपने बच्चों को स्कूल पढ़न के लिए भेजे। अपना रहन सहन के साथ ही जीवन स्तर को ऊँचा उठाये। अत: प्रसार शिक्षा का दर्शन महान कार्य के लिए है जिसमें सभी लोगों के विकास पर ध्यान दिया जाता है। अत: प्रसार शिक्षा का दर्शन मानव सेवा है ताकि वे मूलभूत भौतिक आवश्यकताओं को उपयोग करने से वंचित नहीं रहने पायें।

3.2 प्रसार शिक्षा का दर्शन

- प्रसार शिक्षा का दर्शन मानव विकास पर आधारित है। प्रसार से तात्पर्य है - फैलाना, विस्तार करना, प्रसारित करना अर्थात नवीन सूचनाओं एवं तकनीकों को जन जन तक पहुँचाना । शिक्षा की दार्शनिक परिभाषा है एक ऐसी पद्धति जिसके द्वारा एक मनुष्य विभिन्न विषयों व कलाओं का ज्ञान अर्जित करते हुए, अपने भीतर छिपी हुई प्रतिभाओं व क्षमताओं को विकसति करते हुए उच्चतम चेतना को प्राप्त करे। ऐसी जागृत चेतना से परिपूर्ण व्यक्ति ही अपने जीवन के साथ साथ समाज को भी सुन्दर रूप प्रदान कर सकता है। परन्तु प्रसार शिक्षा में शिक्षा का सामान्य सा अर्थ है मानव की सोच, सूझ, विचार, कौशल, ज्ञान तथा कार्य सम्पादन की शैली में परिवर्तन लाकर व्यक्ति के रहन सहन स्तर को ऊँचा उठाना।
- प्रसार शिक्षा का दर्शन मानव विकास पर आधारित है। इसके लिए सर्वप्रथम दर्शन क्या है, इसे जानना जरूरी है। दर्शन का शाब्दिक अर्थ है बुद्धि अर्थात ज्ञान से प्रेम किया जा सकता है। दर्शन शब्द अंग्रेजी भाषा Philosophy का हिन्दी रूपान्तर है जो Philos तथा Sophia से मिलकर बना है। Philos का अर्थ है ज्ञान या बुद्धि तथा Shopia का अर्थ है अनुराग (प्रेम)
- इस प्रकार दर्शन का अर्थ है ज्ञान से अनुराग, अर्थात बुद्धि से प्रेम होना। विविध शिक्षाविदों ने अपने अपने सोच के अनुसार दर्शन की भिन्न भिन्न परिभाषाएं दी है - S.V. Supe के अनुसार- दर्शन एक सामान्य सिद्धान्त है या ज्ञान के क्षेत्र में एक नियम है।

- Kelsey तथा Hearne ने भी दर्शन की परिभाषा दी है। प्रसार शिक्षा का दर्शन व्यक्ति के महत्व पर आधारित है। जिसमें ग्रामीण जनता तथा राष्ट्र की उन्नति के लिए उतरोत्तर विकास हेतु प्रेरित किया जाता है।
- अंगेजी भाषा के Random House Dictionary में Philosophy को निम्न प्रकार से परिभाषित किया गया है -

अस्तित्व, ज्ञान तथा आचरण के सिद्धान्तों एवं सत्यों की खोज करना । इस परिभाषा में तीन चीजों पर जोर दिया गया है-

- अस्तित्व
- ज्ञान
- आचरण या व्यवहार

समस्या समाधान की मुख्य दो विधियां हैं -

1 जबर्दस्ती थोपना

2 स्वतंत्र पहुंच

1. जबर्दस्ती थोपना -ग्रामीण लोग निरक्षर एवं अंधविश्वासी होते हैं वे किसी भी नवीन तकनीक को आसानी से अपनाना नहीं चाहते हैं। परन्तु तब प्रसार कार्यकर्ता उन्हे अपनाने के लिए जोर देता है, उन्हें बाध्य करता है तो कुछ समय तक वह उनकी बात मानकर नवीन विचारों, तकनीकों, सूचनाओं को अपना लेते हैं। परन्तु कुछ दिनों के बाद वह उन्हें छोड देते हैं तथा अपनी पुरानी कार्यशैली एवं परम्पराओं के अनुसार ही कार्य करने लग जाते हैं। इसे निम्न उदाहरण से समझा जा सकता है - यदि ग्रामीणों को आलू की खेती करने के बजाय सूरजमुखी की खेती करने के लिए बाध्य किया जाए तो वे पहले तो उसे करने में आनाकानी करते हैं, फिर जोर देने पर अपना लेते हैं। परन्तु फिर वे उसे छोडकर अपनी वहीं पुराने तरीके से आलू की खेती करते हैं क्योंकि उन्हें सूरजमुखी की खेती में मजा नहीं आता।

2. स्वतंत्र पहुंच - व्यक्ति जब अपनी इच्छा से अपने ज्ञान, कौशल एवं अभिवृत्ति में परिवर्तन लाकर नवीन सूचनाओं को ग्रहण करता है तथा नवीन व आधुनिक तकनीकों को अपनाता है तो उसका प्रभाव काफी लम्बे समय तक बना रहता है। अत: प्रसार कार्यकर्ता को लोगों को समझाने के लिए स्वतंत्र पहुंच को अपनाना चाहिए। परन्तु इस विधि से परिवर्तन धीरे धीरे आता है। इसमें वह अपना लाभ हानि देखकर स्वीकारता है इसलिए इसका प्रभाव स्थायी रहता है। अत: प्रसार कार्यकर्ता को स्वतंत्र मूल्यों में विश्वास होना चाहिए जिससे वह लोगों को शिक्षित कर सकें।

समस्या समाधान की दोनों विधियों को निम्न चित्र से समझाया गया है ।

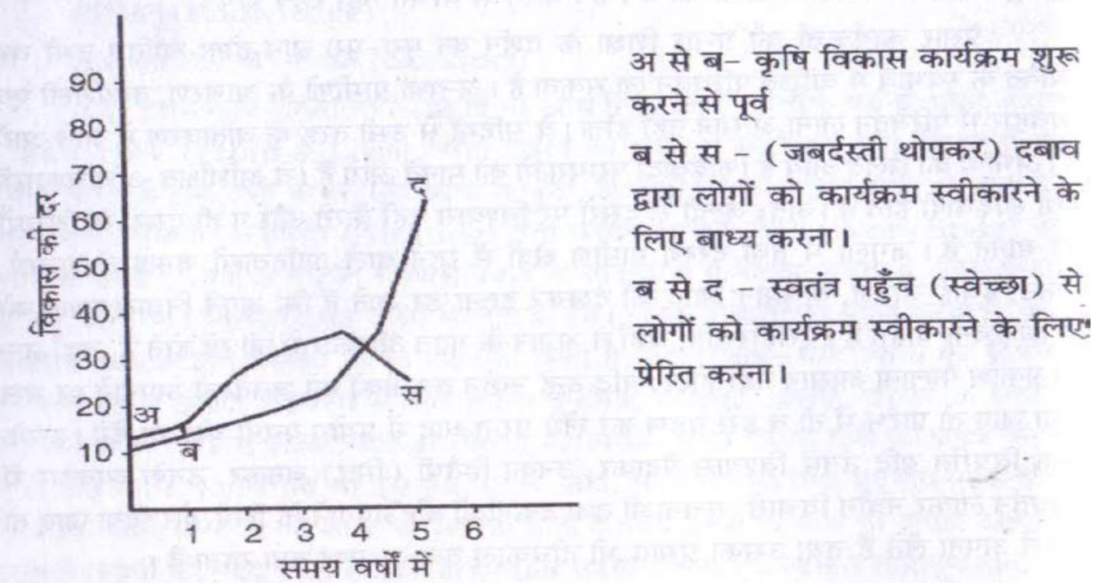

चित्र : जबर्दस्ती थोपकर तथा स्वतंत्र पहुँच द्वारा प्रसार कार्यक्रम के परिणाम के ट्रेंड
[Trend of Development Resulting form programme using compulsioı (Pressurization) and Democratic approach]

उपर्युक्त चित्र से स्पष्ट ज्ञात होता है कि जब लोगों को किसी नवीन तकनीक के लिए बाध्य किया जाता है तब ग्रामीण कुछ ही दिन तक उसे अपनाते है। फिर बाद में वे अपनी वहीं पुरानी परम्परा पर आ जाते हैं। दूसरी विधि में परिवर्तन धीरे धीरे आता है परन्तु उसका प्रभाव दीर्घकालिक होता है।

प्रसार शिक्षा में मुख्य रूप से लोगो में तीन प्रकार के परिवर्तन होते हैं -

1. मनोवृत्ति मे परिवर्तन
2. व्यवहार मे परिवर्तन
3. कार्य संपादन शैली में परिवर्तन

प्रसार शिक्षा का दर्शन निम्नानुसार है -

1. प्रसार शिक्षा अनवरत रूप से चलने वाली शैक्षिक प्रक्रिया है।
2. प्रसार शिक्षा लोगों के ज्ञान, अभिवृत्तियों तथा कौशल में परिवर्तन लाता है।
3. प्रसार सभी लोगों (स्त्री, पुरूष, युवा, पौढ, लडका लडकी) के साथ कार्य करता है तथा उनकी रूचियों, आवश्यकताओं को दृष्टिगत करते हुए उनका समाधान सुझाता है।
4. प्रसार शिक्षा लोगों को अपनी आवश्यकताओं को पहचानने में मदद करती है ।
5. प्रसार शिक्षा करके सीखने तथा देखकर विश्वास करने के सिद्धान्त पर आधारित है।
6. प्रसार शिक्षा में मानव का स्थान सर्वोच्च होता है तथा सभी कार्यक्रम उसी के लिए बनाये जाते हैं।
7. प्रसार उन लोगों की मदद करता है जो अपनी मदद स्वयं करते हैं ।
8. प्रसार शिक्षा में स्थानीय संस्कृति तथा रीति रिवजा को प्राथमिकता दी जाती है। यह लोगों के संस्कृति के साथ तालमेल बिठाकर कार्य करती है।
9. प्रसार शिक्षा क्रिया, ज्ञान तथा अनुभव की दो तरफा पद्धति है।
10. प्रसार शिक्षा में व्यक्ति का विकास, परिवार का विकास, स्थानीय नेतृत्व का विकास, गाँव का विकास, राष्ट्र का विकास, तथा सम्पूर्ण विश्व का विकास निहित है।

11. प्रसार शिक्षा का दर्शन यथार्थवाद पर आधारित है तथा यह ग्रामीणो के पास उपलब्ध साधनों के ऊपर ही आधारित है।

12. प्रसार शिक्षा एक सामुदायिक कार्यक्रम है। इसकी सफलता के लिए जन सहयोग आवश्यक है।

13. प्रसार शिक्षा लोगों के सुखद जीवन तथा कल्याण के लिए कार्य करती है।

14. प्रसार शिक्षा स्वयं सेवा के सिद्धान्त पर आधारित है। इसमें ग्रामीण जनता, पशुपालन, मछली, पालक, अन्य कुटीर उद्योग अपनाने वाले लोग, गृहिणियों आदि स्वयं की समस्याओं के समाधान के लिए योजनाएं बनाते हैं तथा उन्हें क्रियान्वित करते है।

15. प्रसार शिक्षा वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने, नवीन सूचनाओं को ग्रहण करने तथा स्थायी साधनों के विश्वास पर बल देता है।

16. प्रसार शिक्षा में ऐच्छिक, सहकारी, सहभागिता तथा नेतृत्व का विकास संभव है।

17. प्रसार शिक्षा का आधार प्रजातांत्रिक पहुँच से है।

18. विकास के लिए प्रसार शिक्षा एक सामूहिक प्रयास है।

19. प्रसार शिक्षा कार्यक्रम लोगों की अभिवृत्तियों एवं मूल्यों पर आधारित है।

20. प्रसार शिक्षा लोगों के बीच सजीव संबंध उत्पन्न करता है तथा लोगों में आपसी विश्वास तथा सम्मान करना सिखाता है।

21. प्रसार शिक्षा परिवर्तनशील है। इसमें मानव जीवन की आदतें, चिंतन, धारणा मनोवृतियां तथा व्यक्ति के पारस्परिक संबंधों में परिवर्तन सम्मिलित है।

22. प्रसार शिक्षा लचीली होती है जिसमें लोगों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर कार्यक्रम तैयार किये जाते है।

प्रत्येक नये परिवर्तन का सामना प्रतिरोध से होता है। जैसे - जब 80 के दशक में तत्कालीन प्रधानमंत्री स्वं. इंदिरा गांधी ने भारत की जनसंख्या पर रोक लगाने के लिए परिवार नियोजन प्रारंभ करने पर जोर दिया तथा उसे जबरदस्ती लागू करवाया तब लोगों का आक्रोश एवं प्रतिरोध बढता ही गया, जिसका परिणाम हुआ इन्दिरा गांधी की हार। वहीं आज 2010 तक परिवार नियोजन के फायदे को लोगों ने समझा तथा आज गांव गांव में लोग परिवार नियोजन कार्यक्रम को जानते हैं तथा दिल से स्वीकारते हैं। Mildred Horton ने प्रसार के चार सिद्धान्त बताये हैं जो इसका दर्शन कहलाता है। ये सिद्धान्त हैं -

1. प्रजातंत्र से व्यक्ति सर्वोच्च होता है।
2. किसी सभ्यता की मूलभूत इकाई घर है।
3. मानव जाति का पहला प्रशिक्षण समूह परिवार है।
4. किसी भी स्थायी सभ्यता के विकास के लिए मनुष्य तथा भूमि के बीच साझेदारी आवश्यक है।

Dahama (1965) ने प्रसार शिक्षा के दर्शन के निम्नांकित बिन्दु बताये हैं -

1. स्वयं सहायता
2. सामूहिक प्रयास
3. लोग सबसे बडा संसाधन है।
4. यह ज्ञान तथा अनुभव का दो तरफा माध्यम है।
5. लोगों के शिक्षित करने तथा पीछे पड़कर उनके व्यवहार में परिवर्तन करने की शिक्षा है।
6. यह अंतविहिन प्रक्रिया है।
7. स्वैच्छिक, सहयोगात्मक सहभागिता पर आधारित है।
8. लोगों को देखकर तथा कार्य करके रूचि जागृत करता है।
9. प्रजातांत्रिक तरीका प्रसार शिक्षा का आधार है ।

Ensminger (1962) ने प्रसार शिक्षा के दर्शन को निम्नानुसार व्यक्त किया है -

1. प्रसार सतत् चलने वाली शैक्षिक प्रक्रिया है।
2. यह एक शैक्षिक प्रक्रिया है जिसमें लोगों की अभिवृत्ति तथा कौशल में परिवर्तन किया जाता है।
3. प्रसार करके सीखना तथा देखकर विश्वास करना है।
4. प्रसार लोगों के साथ मिलकर लोगों के कल्याण तथा खुशी के लिए कार्य करता है।
5. प्रसार द्विमुखी माध्यम है।
6. यह लोगों के संस्कृति के साथ तारतम्य बिठाकर काम करता है।

जो अपनी मदद स्वयं करते है, उसकी भगवान भी मदद करता है। अर्थात् प्रसार शिक्षा स्वयं की सहायता के सिद्धान्त पर कार्य करता है। प्रसार शिक्षा पुरूष, स्त्री, लडका लडकी, युवा, प्रौढ, सभी लोगों के साथ काम करता है तथा उनकी आवश्यकताओं एवं जरूरतों के मुताबिक कार्यक्रम बनाता है। यह लोगों को शिक्षित करता है कि उनकी आवश्यकताएं क्या है तथा उनकी पूर्ति कैसे की जानी चाहिए।

सारांश में, हरेक व्यक्ति की उत्तरोत्तर विकास करना, एक स्वस्थ समाज एवं राष्ट्र का निर्माण करना ही प्रसार शिक्षा का दर्शन है। कोई भी व्यक्ति इस धरती पर भूखा न रहे, मूलभूत आवश्यकताओं से वंचित न रहे, दुखी व गरीब न रहे, यही प्रसार शिक्षा का दर्शन है। यह लोगों के सर्वांगीण विकास के लिए कटिबद्ध है। इसका दर्शन हरेक जाति को सम्प्रदाय के लोगों के साथ मिल जुलकर काम करना है तथा उनमें आपसी भेदभाव मिटाकर एक विकसित समाज का निर्माण करता है ताकि सभी वैमनस्य को भूलकर एक सूत्र में बांधकर राष्ट्र के मुख्य धरा के साथ आकर जुड जाएं। जब सभी लोग शिक्षित होगें, आर्थिक रूप से सम्पन्न होगे, सुसंस्कृत एवं सभ्य होंगे, एक दूसरे का आदर व सम्मान

करेंगे, परस्पर सहयोग करें, किसी को दुख तकलीफ, धोखा नहीं देगेतो एक विकसित और आदर्श समाज का निर्माण होगा।

3.3 प्रसार शिक्षा के दर्शन की विशेषताएं

प्रसार दर्शन का केन्द्र बिन्दु मानव है। इसका उद्देश्य मानव का सर्वांगीण विकास है। व्यक्ति के ज्ञान, कौशल, दृष्टिकोण, मनोवृत्ति में परिवर्तन लाकर रहन सहन के स्तर तथा जीवन स्तर को ऊँचा उठाना है। गीता, वेद, पुरान, उपनिषद, बाइबिल, कुरान आदि ग्रंथों में जैसे मानव कल्याण की चर्चा की गई है तथा मानव की आत्मोन्नति पर प्रकाश डाला गया है, उसी प्रकार प्रसार शिक्षा में मानव कल्याण के लिए ही कार्यक्रम बनाये जाते हैं। इसकी शिक्षण विधियां, दर्शन सभी कुछ मानव के चहुंमुखी विकास के लिए है। भारतीय दर्शन की आधारभूत बातें, जैसे ज्ञान, दान, तप, त्याग, तपस्या, बलिदान, सहयोग, सहभागिता, उपकार, करूणा, सहानुभूति, सहिष्णुता, आदि सभी कुछ का प्रसार शिक्षा में समावेश है। प्रसार शिक्षा के दर्शन का वर्णन निम्नानुसार किया गया है -

1. मानवतावादी - प्रसार शिक्षा का दर्शन विशुद्ध रूप से मानवतावादी है। प्रसार के सभी कार्यक्रम मानव कल्याण एवं इसके सुख शांति के लिए बनाये जाते हैं। सभी उपलब्ध संसाधनों का अधिकतम उपयोग कर मानव जीवन को सुखसद एवं शांतिपूर्ण बनाना ही इसका लक्ष्य है। मानव के भीतर छिपे हुए गुणों को उजागर करना आवश्यक है। इसके लिए विद्यालय की व्यवस्था करना आवश्यक है। यातायात, बैंक, अस्पताल, सहकारी उपभोक्ता केन्द्र, पोस्ट ऑफिस, आदि की व्यवस्था करना जरूरी है। जीवन को सुखद बनाने के लिए, अधिक फसल उत्पादन के लिए नवीन तकनीकों को अपनाना आवश्यक है। विद्यालय, महाविद्यालय, प्रशिक्षण केन्द्र आदि की स्थापना से ग्रामीण बच्चे पढ लिखकर अपने पैरों पर खड़े होगें। नवीन तकनीकाकें को अपनाकर अधिक फसल का उत्पादन करेंगे। उनमें नई सूझ बूझ विकसित होगी। आर्थिक विकास के साथ साथ आध्यात्मिक विकास भी

जरूरी है। आध्यात्मिक विकास से व्यक्ति गलत कार्य जैसे चोरी, डकैती, राहजनी, आतंकवाद, लुटपाट करने से डरेगा। उसके भीतर इर्ष्या, लोभ, लालच, अहंकार, छल कपट जैसे दुर्गुण नहीं होंगे। मन निर्मल एवं मस्तिष्क विकसित होगा। वह सदाचार को जीवन में अपनाएगा तथा तरक्की करेगा। कुशल योग्य, कर्मठ, ईमानदारी, चरित्रवान व्यक्ति से ही एक सुसभ्य एवं सुसंस्कृत समाज व राष्ट्र का निर्माण होगा।

2. यथार्थवादी - प्रसार शिक्षा में सर्वोच्च संसाधन है व्यक्ति। व्यक्ति के सुखमय जीवन के लिए मूलभूत भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति आवश्यक है। यदि व्यक्ति की मूलभूत भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं होगी तो उसके ज्ञान, बुद्धि कौशल में विकास भी नहीं होगा। जब व्यक्ति भूखा रहेगा तो पहले वह पेट की आग को बुझाने के लिए रोटी की व्यवस्था करेगा। बेरोजगारी के कारण ही आज अनेक युवा पथ भ्रष्ट होकर गलत कार्य कर रहे हैं। झुग्गी झोपडी में रहने वाले गरीब तबके के बालकों को बहला फुसलाकर गलत काम में लिप्त करना आसान है। चैन स्नेचर, लूटपाट करने वाले बालकों की उम्र भी 16-25 वर्ष के बीच होती है तथा उनका निवास स्थान झुग्गी झोपडी होता है। इसलिए सबसे पहले लोगों की भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति की जाए। दिमाग का दरवाजा भी तभी खुलता है, जब पेट में आवाज हो।

3. आदर्शवादी - प्रसार शिक्षा का दर्शन उच्च आदर्शों पर आधारित है। भारतीय दर्शन में ज्ञान, दान, तप, त्याग, मनोबल, कृतज्ञता, सहिष्णुता, धर्म, कर्तव्य परायण आदि सदगुणों पर बल दिया गया है। ये सभी गुण प्रसार शिक्षा के लिए भी जरूरी है। प्रसार कार्यकर्ता को अपने उद्देश्यों, मूल्यों, आदर्शों को ग्रामीण जनता के समक्ष ऊँचा रखना चाहिए तभी ग्रामीण जनता उसे अपना आदर्श मानेंगे तथा उस पर दिल से विश्वास करेंगे। उसके बताये हुए मार्गों पर चलेंगे। उसके कहे अनुसार कार्य करेंगे। वे अपने वर्तमान रहन सहन के स्तर तथा सीखने के पश्चात ऊँचा उठने वाले रहन सहन के मध्य अंतर कर पाएंगें।

4. प्रयोगवादी - प्रसार शिक्षा का दर्शन पूर्णतया प्रयोगवादी है। यह व्यावहारिक शिक्षा है। इसमें लोगों को सैद्धान्तिक ज्ञान नहीं दिया जाता है। भाषा व्याकरण नहीं सिखाया जाता है। विज्ञान या वाणिज्य की पढाई नहीं करायी जाती है, बल्कि उन्हें व्यावहारिक ज्ञान दिया जाता है। यह उन्हें उन चीजों को अपनाने के लिए सीखने पर जोर देता है। जिन्हें अपानकर उनका रहन सहन का स्तर ऊँचा उठ सके। यह उन्हें नवीन खोजों, नवीन तकनीकों, नवीन अनुसंधानों के बारे में सिखाता है न कि उन्हें यह सिखाया जाता है कि इसका अविष्कार कैसे हुआ, किसने किया, यह किस सिद्धान्त पर कार्य करता है आदि। उन्हें तो यह बताया जाता है कि नवीन तकनीकों को अपनाकर फसल का उत्पादन बढाया जा सकता है जिससे लाभ होगा। आय बढेगी और जीवन का रहन सहन का स्तर ऊँचा उठेगा।

प्रसार शिक्षण दो तरफा शिक्षण पद्धति है जिसमें ग्रामीणों की समस्याओं को प्रयोगशाला तक लायी जाती है तथा प्रयोगशाला में विकसित अनुसंधानों को उनके खेतो/घरों तक जा जाकर प्रसारित किया जाता है तथा अपानाने के लिए प्रेरित किया जाता है। इतना ही नहीं, इन खोजों, अनुसंधानों के प्रयोग के पश्चात प्राप्त सफलताओं एवं असफलताओं का भी विश्लेषण किया जाता है। यदि उसमें सुधार की आवश्यकता होती है तो उसमें आवश्यक सुधार कर पुन: प्रयोग हेतु ग्रामीण जनता के बीच लाया जाता है।

5. जरूरवादी या सारवादी -प्रसार शिक्षा का दर्शन जरूरतवादी अर्थात आवश्यकतावादी है। यह लोगों को मूलभूत भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति पर बल देता है। कोई भी व्यक्ति सुखी सम्पन्न तब तक नहीं रहेगा जब तक कि उसकी आवश्यक तथा आरामदायक आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं हो जाए। बल्हे ही ऐसे लोग होते हैं जो धनाभाव की स्थिति में भी अपना सर्वांगीण विकास कर लेते हैं। वे प्रतिभाशाली लोग होते हैं अन्यथा सामान्य जन को तो अपने विकास के लिए धन चाहिए ही धन नहीं होगा तो वह संतुलित एवं पौष्टिक भोजन ग्रहण नहीं कर पाएगा, मौसम के अनुकूल वस्त्रों को धारण नहीं कर

पाएगा। बालकों को पढने के लिए विद्यालय नहीं भेजेगा। वह तो चाहेगा कि उसका बच्चा भी कुछ न कुछ कार्य करके पैसा कमाए । आर्थिक मदद नहीं कर पाये तो कोई बात नहीं, कम से कम अपना पेट तो पाले । इसी सोच के साथ वह अपने स्कूल जाने वाले बालकों को विद्यालय न भेजकर गाय-भेड़, बकरियां आदि चराने हेतु भेज देता है।

6. परिणामवादी - प्रसार शिक्षा का दर्शन है, प्रसार कार्यक्रम लचीली एवं परिवर्तनशील हो, ताकि ग्रामीणों की आवश्यकताओं एवं रूचियों को दृष्टिगत करते हुए इसमें आवश्यक परिवर्तन कर पुन: प्रयोग में लाया जा सके। जैसे गृहिणी को आम के मौसम मे आम के आचार, जैसे मुरब्बा आदि सिखाया जा सकता है। यदि उसे सर्दी के मौसम में सिखाया जाए तो वह उपयोगी एवं लाभकारी नहीं होगा। इसलिए यदि सर्दी के मौसम में गर्मी के व्यंजन बनाने हेतु कार्यक्रम का नियोजन किया जाए तो उसे तत्काल वहीं रोककर सर्दी में उपलब्ध सब्जियों एवं फलों का व्यंजन बनाना सिखाना चाहिए। इसलिए प्रसार कार्यकर्ता को पूरी छूट दिया जाना चाहिए कि वह ग्रामीणों को आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर ही कार्यक्रम चलाये। कार्यक्रम एवं संपादन में लचीलापन रखना अत्यावश्यक है ताकि समयानुसार इसमे परिवर्तन किया जा सके।

7. पुननिर्माण में विश्वास का -प्रकृति परिवर्तनशील है। यहां नित्य प्रति परिवर्तन होते रहते हैं। कभी शीत ऋतु का हाड कंपाकंपा देने वाली सर्दी होती है तो कभी जेठ की कडकड़ाती धूप। कभी सावन की रिमझिम बूंदों की झडी होती है तो कभी बसंत की बहार। इन परिवर्तनों को मानव जीवन पर भी गहरा प्रभाव पडता है। सर्दी के मौसम में सर्दी के अनुकूल ही वस्त्र पहने जाते हैं तथा भोजन ग्रहण किया जाता है। गर्मी के अनुकूल वस्त्रों का चयन करना पडता है।

प्रसार शिक्षा के दर्शन : मात्र एक नजर में

(Philosophy of Extension Education : At a Glance)

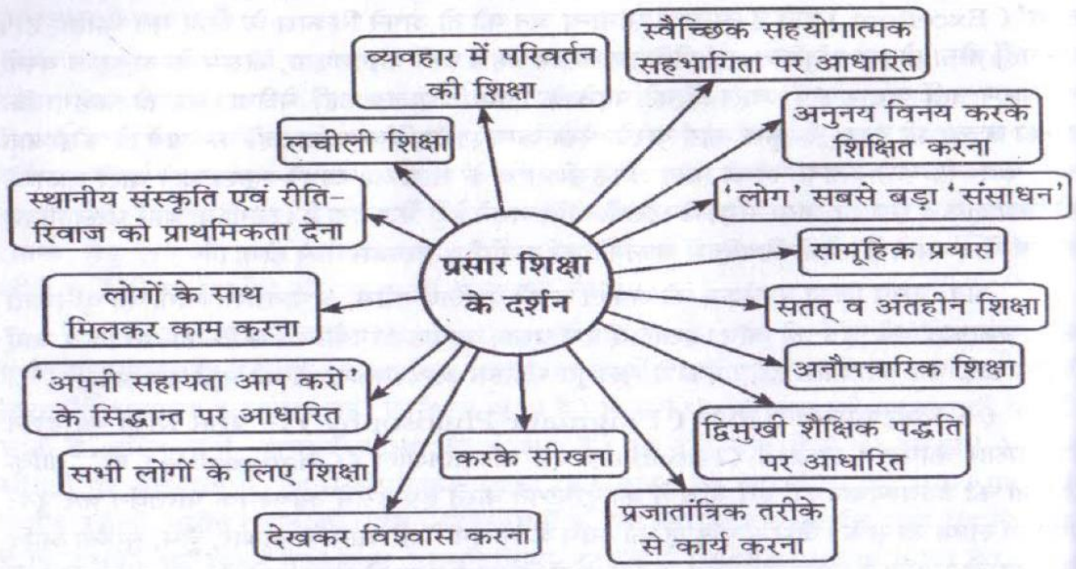

प्रसार शिक्षा के दर्शन की विशेषताएँ

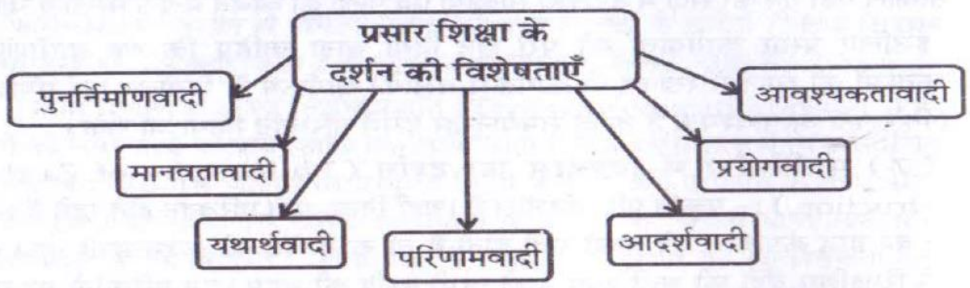

3.4 प्रसार शिक्षा के सिद्धान्त

प्रसार शिक्षा मुख्य रूप से ग्रामीण जीवन से जुडी हुई है। ग्रामीणों की आवश्यकताओं को समझना, समस्याओं को पहचानना तथा उन समस्याओं का हल ढूंढना प्रसार शिक्षा का लक्ष्य है। प्रसार कार्यक्रम जब तक प्रसार शिक्षा के सिद्धान्तों से भलीभांति परिचित नहीं होगा, तब तक वह प्रसार कार्यक्रमों को जरूरतमंदों तक नहीं पहुंचा सकेगा और न ही वांछित लक्ष्यों को ही प्राप्त कर सकेगा। वह नौ दिन चले अढाई कोस वाली कहावत की चरितार्थ करते हुए कार्य करेगा जिसका

परिणाम भी घोर निराशाजनक होगा इसलिए प्रसार शिक्षा के सिद्धान्तो को जानना आवश्यक है।

प्रसार शिक्षा के सिद्धान्तों को समझने से पहलने सिद्धान्त क्या है। इसे जानना जरूरी है। मैथ्यू के शब्दों में " A principle is a statement of policy to guide decision and action in a consistent manner."

प्रसार शिक्षा में सिद्धान्त का तात्पर्य उनसे है जो प्रसार कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए अत्यावश्यक होते है। अत: ऐसे कार्य जो मनुष्य का विकास इस प्रकार से करे कि वह स्वालम्बी बनकर, आत्मनिर्भर होकर अपना, अपने परिवार तथा समाज का विकास कर सके। प्रसार शिक्षा के प्रमुख सिद्धान्त हैं -

1. रूचियों एवं अनुभूत आवश्यकताओं का सिद्धान्त - प्रसार कार्यक्रम की सफलता व्यक्ति के रूचियों तथा अनुभूत आवश्यकताओं पर निर्भर करता है। जब व्यक्ति स्वयं आगे बढकर सीखने की रूचि प्रदर्शित करता है, अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करना चाहता है, समस्याओं का निदान चाहता है। तब प्रसार शिक्षक को प्रसार कार्य करने व सिखाने का अच्छा अवसर मिल जाता है। फलत: मन से चलाये गये कार्यक्रम में सफलता मिल जाती है।

इसके ठीक विपरित प्रसार कार्यकर्ता प्रसार कार्यक्रमों को तो गांवों में चलाता है परन्तु गांव वाले बिल्कुल भी उन कार्यक्रमों में रूचि नहीं लेते हैं। प्रसार कार्यकर्ता में उन्हें जबर्दस्ती बुला बुलाकर अनुनय विनय करके कार्यक्रम में भाग लेने के लिए कहता है, परन्तु ऐसा कार्यक्रम बिल्कुल भी सफल नहीं होता। अत: प्रसार कार्यक्रम को प्रारंभ करने से पहले लोगों की रूचियों एवं अनुभव आवश्यकताओं को जान लेना जरूरी है। आवश्यकता ऐसी होनी चाहिए जिसे गांव वाले महसूस करते हैं तथा उनकी पूर्ति की चाह रखते हैं ।

2. स्वैच्छिक शिक्षा का सिद्धान्त -प्रसार शिक्षा स्वैच्छिक शिक्षा के सिद्धान्त पर आधारित है। लोगों में सीखने की चाहत स्वैच्छिक होनी

चाहिए। दबाव में आकर न तो व्यक्ति सीखता है और न ही सीखने का प्रभाव दीर्घकालिक वे स्थायी होता है। दबाव देकर सिखाने पर शिक्षार्थी शीघ्र ही हतोत्साहित हो जाता है तथा सीखने की प्रक्रिया मंद पड़ जाती है। उसका परिणाम भी अच्छा नहीं होता है। इसलिए प्रसार शिक्षा की लोगों के ज्ञान, कौशल, अभिवृति तथा व्यवहार में परिवर्तन लाने पर जोर दिया जाता है, जब व्यक्ति की सोच समझ के तरीकों में परिवर्तन आता है, तभी वह स्वयं को बदलने के लिए तैयार होता है। उसमें स्वत: ही सीखने की ललक उत्पन्न हो जाती है, तथा वह चीजों को जल्दी ही सीख लेता है। सीखने के बाद उसे जीवन में अपनाता है। वहीं दबाव देकर, जबर्दस्ती बैठाकर सिखाया जाए, तो सीखने की गति मंद होती है, परिणाम भी आशाजनक नहीं रहता।

3. स्वयं की सहायता का सिद्धान्त - प्रसार शिक्षा स्वयं की सहायता के सिद्धान्त पर आधारित है। भगवान भी उन्ही की मदद करते है जो अपनी मदद स्वयं करते है। यह प्रसार शिक्षा का सिद्धान्त वाक्स है। बिना कर्म किये फल नहीं मिलता । जब व्यक्ति स्वयं ही आगे बढ़कर सीखने के लिए लालायित रहता है, अपने व्यवहार में परिवर्तन लाने के लिए इच्छुक रहता है। इसके लिए प्रयास करता है, तब सीखने एवं सिखाने की क्रिया आसान हो जाती है। फलत: कार्यक्रम सफल हो जाता है।

4. करके सीखने का सिद्धान्त -प्रसार शिक्षा सैद्धान्तिक शिक्षा नहीं है। यह पूर्णरूपेण व्यावहारिक शिक्षा है जिसमें ग्रामीण जनता को उनके घर, खेत, गौशाला, आदि पर जाकर दिया जाता है। ग्रामीण जनता का स्वभाव जिद्दीपन लिए होता है। वे किसी भी सुझाव को आसानी से नहीं मानते है और न ही नवीन तकनीकों की सरलता से अपनाते है।

5. स्वावलम्बन सिद्धान्त - व्यक्ति जब किसी चीज को स्वेच्छा से सीखने के लिए तत्पर हो जाता है तथा चीजों को जल्दी सीख लेता है तो उसके भीतर आत्मविश्वास जागृत हो जाता है। आत्मविश्वासी व्यक्ति विभिन्न चीजों को अपनाकर, उनका प्रयोग कर, स्वावलम्बी बनता है

तथा आय अर्जित करने लगता है। अर्थोपार्जन कर अपने तथा अपने परिवार की माली स्थिति को सुधारता है तथा रहन सहन के स्तर को ऊँचा उठाता है। स्वावलम्बन व आत्म निर्भरता उन्हें अनेक क्षेत्रों में सहायता प्रदान करती है। उनमें नवीन चीजों को अपनाने तथा जीवन में कुछ कर दिखाने की लालसा बनी रहती है। परिणामत: वे सदैव ही शिक्षार्थी एवं जिज्ञासु बने रहते हैं तथा अपनी जटिल से जटिल समस्याओं का समाधान भी स्वत: ही कर लेते है।

6. सहयोग का सिद्धान्त -प्रसार कार्यक्रम सहयोग के सिद्धान्त पर आधारित है। यह कार्यक्रम ग्रामीणों के कल्याण व उत्थान के लिए बनाया जाता है। परन्तु कार्यक्रमों की सफलता के लिए ग्रामीणों से सहयोग मिलना भी जरूरी है। प्रसार शिक्षा दो तरफा शिक्षण प्रणाली है जिसमें शिक्षक एवं शिक्षार्थी दोनों को ही परस्पर मिल जुलकर एक दूसरे के सहयोग से कार्य करना होता है। अकेला न तो ग्रामीण जनता समस्याओं का समाधान कर सकता है और न ही प्रसार प्रशिक्षक उन्हें जबर्दस्ती किसी चीज के बारे में बता सकता है।

7. अनुनय, अभिप्रेरणा एवं प्रोत्साहन सिद्धान्त - प्रसार शिक्षा मूल रूप से ग्रामीणों के उत्थान के लिए कार्य करती है। भारत की गरीब जनता सदियों से उपेक्षित एवं तिरस्कृत रही है। वे अभावग्रस्त जीवन जी रहे है। गरीबी के अभिशाप को भोग रहे हैं। ऐसी स्थिति में उन्हें न तो किसी का विश्वास होता है और न ही परिवर्तन के इच्छुक होते है। परिवर्तन उनके दिलों दिमाग तक नहीं पहुंचता। उनका मस्तिष्क इस कदर अविकसित होता है कि वे नवीन तकनीकों के प्रति सदैव ही शंकालु बने रहते है। कई बार उन्हें अपने ही लोगों से धोखा भी मिलता है। अत: वे बचकर चलना चाहते है। अत: प्रसार कार्यकर्ता को प्रसार कार्यक्रम प्रारंभ करने से पूर्व गांव के नेताओं के सम्पर्क करना पडता है। उन्हें अनुनयन विनय कर मनाना पडता है। पढे लिखे एवं प्रगतिशील ग्रामीण लोगों को, जो थोडे समझदार होते हैं उन्हें कार्यक्रम की अच्छाई के बारे में समझाना होता है। जब वे लोग मान जाते हैं तभी

कार्यक्रमों को गांवों में क्रियान्चित करना होता है। फिर लोगों को प्रेरित कर सिखाया जाता है।

8. धीमा किन्तु सतत विकास का सिद्धान्त -प्रसार शिक्षा का सिद्धान्त है - धीमा किन्तु सतत विकास का सिद्धान्त। कार्यक्रम जो जितनी शीघ्रता से बनाये व चलाये जाते हैं उनका परिणाम भी उतना ही अल्पकालिक एवं अस्थायी होता है। वे कुछ ही दिनों में मंद होकर नष्ट हो जाते हैं। इसलिए प्रसार शिक्षा का सिद्धान्त है विकास की गति भले ही धीमी हो परन्तु अनवरत रूप से चलना चाहिए। इसलिए किसी भी कार्यक्रम को चलाने से पहले ग्रामीण क्षेत्रों में जाकर ग्रामीणों की समस्याओं को समझना चाहिए। वहां के भौतिक व प्राकृतिक संसाधनों को तलाशना चाहिए। लोगों के स्वभाव का अध्ययन करना चाहिए। कार्यक्रम सफलता में कौन कौन से कारक सहायक हो सकते हैं, इसके बारे में जानना चाहिए। इस प्रकार अनेक दृष्टिकोणों से समस्याओं की खोज करके, फिर उनके समाधान हेतु कार्यक्रम बनाना चाहिए।गांवों में अनेक समस्याएं होती है, परन्तु प्रसार कार्यकर्ता को तभी समस्याओं के समाधान हेतु एक साथ ही कार्यक्रम नहीं बनानाचाहिए और न ही उन्हें समानांतर रूप से चलाना चाहिए। जो समस्या अत्यावश्यक है, उसे सुलझाने के लिए पहले कार्यक्रम बनाना चाहिए

9. नमनीयता लचीलापन का सिद्धान्त - प्रसार कार्यक्रम में लचीलापन अर्थात परिवर्तन की गुंजाइश होनी चाहिए। यह शिक्षा ग्रामीणों के उत्थान तथा रहन सहन के स्तर में सुधार लाने की शिक्षा हैं जिसके लिए किसी विशेष पाठ्यक्रम किताबें, कॉपियां, या अन्य भौतिक चीजों की आवश्यकता नहीं होती है। व्यक्ति की रूचियों व आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर शिक्षा दी जाती है। व्यक्ति जिस परिवेश में जिस स्थिति में रहता है, वही पर जाकर उपलब्ध संसाधनों का प्रयोग कर शिक्षा दी जाती है।

10. सांस्कृतिक भिन्नता का सिद्धान्त -भारत एक विस्तृत लोकतांत्रिक देश है। यहां अनेक प्रकार की भाषाएं, धर्म, परम्पराएं

रीति-रिवाज, सांस्कृतियां, वेश भूषा, खान पान की आदतें हैं।ये सभी किसी न किसी प्रकार से व्यक्ति को अवश्य ही प्रभावित करती है। इसलिए प्रसार कार्यकर्ता को प्रसार कार्यक्रम को प्रारंभ करने से पूर्व गांव की सांस्कृतिक विभिन्नता को जानना जरूरी है। जो प्रसार कार्यक्रम किसी खास जगह, खास प्रांत के लिए बनाये जाते है, वहां प्रसार कार्यक्रम दूसरे जगह या प्रांत में वैसा का वैसा ही नहीं चलाना चाहिए। क्योंकि इससे उतना लाभ नहीं होता है।

11. सांस्कृतिक परिवर्तन का सिद्धान्त - परिवर्तन संसार का नियम है। सांस्कृतिक परिवर्तन के अनुसार प्रसार शिक्षा के कार्यक्रमों एवं शिक्षण विधियों में भी परिवर्तन होना चाहिए। आज से 70 साल पीछे झाँक कर देंखे जब भारत गुलामी की झन्जीरों में जकडा हुआ था। तब भारतीयों की स्थिति अत्यन्त ही दर्यनीय थी। विशेषकर बच्चों और स्त्रियों की स्थिति तो अत्यन्त ही चिन्ताजनक थी। स्त्रियों में शिक्षा का नामो निशान नहीं था। बच्चे कुपोषित थे रहन सहन का स्तर निम्न से निम्नतर था। परन्तु आजादी के बाद भारतीयों की शिक्षा, बौद्धिक स्तर, आर्थिक स्तर, मानसिक स्तर में काफी बदलाव आया है। व धीरे धीरे अंधविश्वासों, रूढियों, भ्रांतियों, परम्पराओं की बेडियों को तोडकर थोडा उपर आये है। पहले बालिका शिक्षा नगण्य थी। परन्तु आज परिवर्तन के कारण ही लड़किया भी स्कूल कॉलेज जाने लगी है। डॉक्टर, इंजिनीपर, शिक्षक, प्रशासक, नेता बनकर उत्तरदायित्वों को निभाने लगी है।

12. तृण मूल संगठन का सिद्धान्त -प्रचार शिक्षा जड मूल से प्रारंभ करने का सिद्धान्त पर आधारित है। जैसे - पौधे की जड में पानी खाद डाला जाता है ना कि पत्ते पत्ते फूल फूल में मूल जड में खाद पानी डालने से वह स्वत: ही पौधे के समूचे भाग तक पहुंच जाता है। तथा पौधा हरा भरा रहता है। रहिम जी कहते है –

13. सहभागिता का सिद्धान्त -किसी भी प्रसार कार्यक्रम की सफलता के लिए लोगों की सहभागिता अत्यावश्यक है। सहभागिता में लोगों में कार्यकर्ता अथवा कार्यक्रमों के प्रति विश्वास बढता है। व सहज

रूप से कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए उत्साहित हो जाते है वे यह समझने लगते है कि यह हमारा कार्यक्रम है। हमारे लिए है तथा इसे सफल बनाने के लिए हम सब की भागीदारी जरूरी है।

14. सम्पूर्ण परिवार तक पहुंच का सिद्वान्त- औपचारिक शिक्षा में जो व्यक्ति शिक्षा ग्रहण करता है मात्र उसी का सर्वागीण विकास होता है। परन्तु प्रसार शिक्षा का सिद्वान्त केवल एक व्यक्ति का विकास करना नही है अपितु पूरे परिवार का विकास करता है क्योकि परिवार ही मिलकर समाज का निर्माण करते हैं। सामाजिक संरचना में परिवार केन्द्र में है। अत: केन्द्र का ध्यान रखना जरूरी है। परिवार के सदस्यों में यदि किसी निर्णय के प्रति सहमति नहीं बन पाती है तो वह निर्णय नहीं किया जाता है। परिणामत: कार्यक्रम असफल हो जाता है।

15. नेतृत्व का विकास - प्रसार शिक्षा की सफलता के लिए स्थानीय नेताओं का सहयोग एवं सहभागिता आवश्यक है। ग्रामीण लोगों का विश्वास अपने नेता पर अधिक होता है। वे अपने नेता पर पूरा विश्वास करते है। वे उन्हें अपना संरक्षण समझते हैं तथा उनकी बात को मानते है। यदि उनका नेता उन्हें कार्यक्रम में भाग लेने के लिए कहते हैं तभी वे कार्यक्रम में भाग लेते हैं। परन्तु यदि उनका नेता कार्यक्रम में भाग लेने से माना कर देता है तो वे कार्यक्रम में भाग नहीं लेते है। चाहे प्रसार कार्यकर्ता उन पर कितना भी दबाव क्यों नहीं डाले। अत: कार्यक्रम सफल नहीं हो पाता है। इसी बात को ध्यान में रखकर प्रसार शिक्षा में स्थानीय नेतृत्व के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया गया है। किसी भी नवीन तकनीक को ग्रामीणों तक पहुंचाने के लिए स्थानीय नेता की सहमति आवश्यक है।

16. संतुष्टि का सिद्धान्त -प्रसार शिक्षा में संतुष्टि का अहम योगदान है। जब ग्रामीण लोग प्रसार कार्यक्रमों के परिणाम से संतुष्ट नहीं होगे तभी वे अपनी बार भी कार्यक्रम में उपस्थिति होगे अन्यथा वे उसे बीच में ही छोड देगे। इसलिए प्रसार शिक्षण विधियां प्रभावशाली होनी चाहिए। प्रजातांत्रिक समाज में लोगों को मशीन की तरह काम करने के लिए नहीं लगाया जा सकता। मनुष्य जीवित प्राणी है। उसमें भावनाएं

है, सोच समझ की शक्ति है, बुद्धि है, चातुर्य है। अत: यदि वे दिल दिमाग से संतुष्ट होगें तभी वे कार्यक्रम में भाग लेंगे। नवीन तकनीकों को अपनाएंगे ।

17. प्रजातांत्रिक पहुंच का सिद्धान्त -प्रसार शिक्षा न तो औपचारिक शिक्षा है और न ही अफसरशाही शिक्षा है कि मैनेकहा वही मुझे करना है। यह तो प्रजातांत्रिक तरीके से दी जाने वाली शिक्षा है। जिसमें व्यक्ति की रूचि, आवश्यकता, उपलब्ध संसाधनों एवं समस्याओं को ध्यान में रखकर दी जाती है। प्रजातांत्रिक की परिभाषा है - प्रजातंत्र जनता का है, जनता के लिए है तथा जनता के द्वारा है।

18. व्यावहारिक विज्ञान का सिद्धान्त -प्रसार शिक्षा व्यावहारिक विज्ञान है जिसमें लोगों को प्रदर्शन करके बताया जाता है । यह एक तरफा शिक्षण विधि नहीं है। जिसमें शिक्षक कक्षा में आते है, भाषण देते है, विद्यार्थी चुपचाप सुनते हैं, भाषण समाप्त होता है और शिक्षक कक्षा से बाहर चले जाते है। विद्यार्थी को समझ आया, नहीं समझ आया। कितना समझ आया, इससे शिक्षक को कोई लेना देना नहीं होता है।

19. प्रशिक्षित विशेषज्ञों का सिद्धान्त - प्रयोगशाला में जिन सूचनाओं एवं तकनीकों का प्रतिपादन होता है, वे उसी तरह ग्रामीणों तक नहीं पहुंचाये जाते, अपितु उनका ग्रामीण भाषा में अनुवाद किया जाता है तथा उसे ग्रामीण जनता की समझ के अनुकूल बनाया जाता है जिससे वे समझ सकें व सीख सकें। इस कार्य में प्रसार कार्यकर्ता की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। वह उन सूचनाओं को ग्रामीणों की समझ के अनुसार परिवर्तित करता है तथा उन्हें उनके घर या खेत पर जाकर बातता है।

20. निरपेक्षता एवं तटस्थता का सिद्धान्त - प्रसार शिक्षा में कार्यकर्ता को पूर्णत: निरपेक्ष एवं तटस्थ रहना जरूरी है। दिप्रसार कार्यकर्ता जाति, वर्ग, धर्म, सम्प्रदाय, लिंग समुदाय, समाज आदि को ध्यान में रखकर कार्य करेगा, तो कदापि सफल नहीं हो सकेगा। प्रसार

शिक्षा का आधार ही प्रजातांत्रिक है, जिसमें सभी धर्म, भाषा, वर्ग लिंग जाति के लोग भाग लेते है, कार्यक्रम में सभी को समान महत्व दिया जाता है। सभी का सहयोग लिया जाता है तथा सभी की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर कार्यक्रम तैयार किया जाता है। कार्यक्रम नियोजन एवं क्रियान्वयन से पूर्व पारदर्शिता जरूरी है तथा भेदभाव की पूर्ण मनाही है। प्रसार कार्यकर्ता को न तो किसी खास वर्ग, सामुदायिक, जाति , धर्म, समुदाय से बहुत अधिक प्रगाढ मैत्री रखना चाहिए और न ही किसी विशेष वर्ग, सम्प्रदाय, जाति, धर्म, समुदाय के साथ कटुता व घृणा।

21. समता का सिद्धान्त - प्रसार कार्यकर्ता समता के सिद्धानत पर आधारित है। गांव में विभिन्न जाति, धर्म, वर्ग, सम्प्रदाय के लोग रहते हैं। इनके रीति रिवाज, खा पान की आदतें, मनोवृतियां, संस्कृतियां भिन्न भिन्न होते हैं। किन्तु प्रसार कार्यकर्ता को उन विभिन्नताओं में भी एकता ढूंढकर विकास कार्य करना है। सभी के एकता के सूत्र में बांधकर देश के विकास की मुख्य धारा में जोडना है। प्रसार कार्यक्रम को सफल बनाना है। सभी को एक ही छत के नीचे, एक मंच पर बिठाकर कार्यक्रम को क्रियान्वित करना है व उसे सफल बनाना है।

22. स्थानीय संसाधनों के प्रयोग का सिद्धान्त - प्रसार शिक्षा स्थानीय संसाधनों के प्रयोग के सिद्धान्त पर आधारित है। इसमें स्थानीय संसाधनों का उपयोग करना सिखाया जाता है। जैसे जिन गांवों में पर्याप्त पानी की यवस्था है, भूमि उपजाऊ है, वहां कृषि कार्य के लिए, मत्स्य पालन के लिए पानी में उगने वाली फसलों के लिए प्रसार कार्यक्रम बनाये जा सकते हैं तथा लोगों को प्रशिक्षत किया जा सकता है। परन्तु जिन गांवो में पानी का सख्त अभाव है।

23. स्थानीय संगठनों के सहयोग सिद्धान्त - प्रसार कार्य में स्थानीय संगठनों की अमूल्य भूमिका है । वे संगठन जो विशेश रूप से सेवा भाव से जुडे हुए है, मानव कल्याण के क्षेत्र में कार्य कर हरे हैं, उनकी सहायता लेनी चाहिए। उनसे विचार विमर्श कर उनका सुझाव लेना चाहिए। क्योंकि दोनों का उद्देश्य एक है। जब उद्देश्य एक हो जाता है

तब कार्यक्रम करना आसान होता है तथा सफलता भी चरण चूमती है। गांवों में पंचायत, युवा मंडल, महिला मंडल जैसे संगठन होते है। यदि ये संगठन नहीं है तो नये संगठन बनाकर इनकी सहायता प्रसार कार्यक्रम चलाये जाने चाहिए।

24. शिक्षण विधियों के प्रयोग से अनुकूलनशीलता का सिद्धान्त - प्रसार कार्यक्रम को सफल बाने के लिए उपयुक्त शिक्षण विधियों का चयन किया जाना जरूरी है। एक शिक्षण विधि जो किसी खास लोगों के लिए उपयोगी है, वही शिक्षण विधि दूसरे लोगों के लिए अनुपयोगी सिद्ध हो सकती है। जैसे अशिक्षित लोगों के लिए यदि चार्ट पम्फलेट, बुकलेट शिक्षण विधियां का उपयोग किया जाए तो वे कदापि प्रभावी नहीं होगे क्योंकि वे निरंतर है। पढना लिखना नहीं जानते । अत: ये शिक्षित विधियां कारगर सिद्ध नहीं होगी। उन्हें सिखाने के लिए कठपुतली का खेल, नाटक, प्रदर्शन फिल्म आदि सही शिक्षण विधि होंगे। इसी प्रकार शिक्षित जनता के लिए चार्ट, बुकलेट, पम्फेलेट आदि उपयोगी शिक्षण विधि होगे। क्योंकि वे शिक्षित है तथा पढना लिखना जानते हैं। इसलिए व्यक्ति के मानसिक स्तर तथा बौद्धिक क्षमता को ध्यान में रखकर शिक्षण विधियों का प्रयोग करना चाहिए। सही शिक्षण विधि न होने से सीखने की क्षमता में व्यापक रूप से कमी आती है।

25. मूल्यांकन का सिद्धान्त - प्रसार शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति का सर्वांगीण विकास करना है। इसके लिए उनके व्यवहार में परिवर्तन लाना है ताकि वे नवीन तकनीक, नवीन विचारों व सूचनाओं को ग्रहण कर सकें। उन्हें जीवन में उतारकर अपने रहन सहन के स्तर को ऊँचा उठा सकें। उनकी कार्यक्षमता एवं कार्य कुशलता बढा सके। यदि ग्रामीणों के व्यवहार में वांछित परिवर्तन होता है, वे नवीन तकनीकों को अपनाते हैं। उनका आर्थिक स्तर उचा उठता है, तब समझा जाता है कि प्रसार कार्यक्रम सफल हुआ। जब ग्रामीणों के व्यवहार तथा रहन सहन के स्तर में परिवर्तन नहीं होता है वे उसी तरह से अब भी रह रहे है, जैसे कि पहले रह रह थे। तब समझना चाहिए कि प्रसार कार्यक्रम सफल नहीं हुआ है। इसी को मूल्यांकन कहते है।

3.5 सारांश

प्रसार शिक्षा का दर्शन प्रत्येक व्यक्ति का उत्थान व सुखद जीवन पर आधारित है । और इसका उद्धेश्य है व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना । व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक, और आर्थिक विकास को मजबूती प्रदान करना । लोगों को आत्मनिर्भर बनाना । प्रसार शिक्षा व्यवहार में परिवर्तन की शिक्षा है, औपचारिक सतत और अंतहीन शिक्षा है । ग्रामीणों की आवश्यकताओं को समझना, उनकी समस्याओं को पहचानकर उनका हल ढूंढना प्रसार शिक्षा का लक्ष्य है। प्रसार कार्यक्रमों को सफल बनाने के लिये सर्वप्रथम प्रसार शिक्षा के दर्शन और सिद्धांतों की जानकारी, जो इस अध्याय में दी गई है प्राप्त करना अत्यन्त आवश्यक है ।

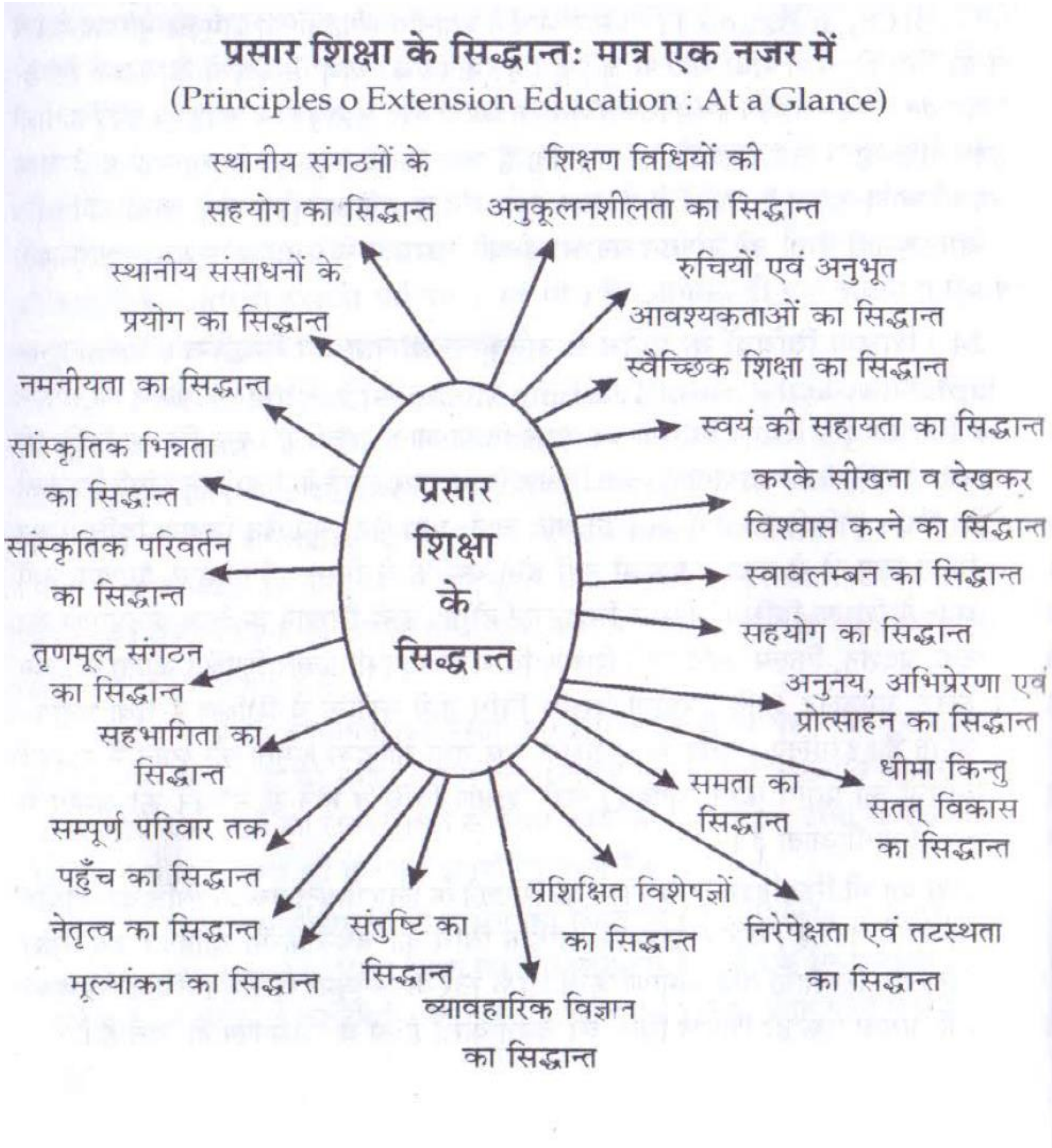

3.6 अभ्यास प्रश्न

1. प्रसार शिक्षा का दर्शन समझाइये ?
2. प्रसार शिक्षा की विशेषता समझाइये ?
3. प्रसार शिक्षा के सिद्धांतों का विवेचना कीजिए ?

3.7 संदर्भ ग्रन्थ

प्रसार शिक्षा –डा. वंदना जैन , डा पूनम कुमारी
प्रसार शिक्षा-डा बी. डी. हरपलानी
प्रसार शिक्षा- डा वृंदा सिंह

इकाई-4

प्रसार एवं संचार सम्पर्क विधिया व्यक्तिगत सम्पर्क विधियां

4.0 उद्देश्य
4.1 प्रस्तावना
4.2 व्यक्तिगत सम्पर्क विधियां
4.3 समूह सम्पर्क विधियां
4.4 विराट जन सम्पर्क विधियाँ
4.5 व्यक्तिगत सम्पर्क विधियों का विवेचन
4.6 सारांश
4.7 अभ्यास प्रश्न
4.8 संदर्भ ग्रन्थ

4.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात विद्यार्थी -

1. व्यक्तिगत सम्पर्क विधियां की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे
2. सम्पर्क विधियां की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे
3. विराट जन सम्पर्क विधियां की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे

4.1 प्रस्तावना

लोकसंपर्क का अर्थ बड़ा ही व्यापक और प्रभावकारी है। लोकतंत्र के आधार पर स्थापित लोकसत्ता के परिचालन के लिए ही नहीं बल्कि राजतंत्र और अधिनायकतंत्र के सफल संचालन के लिए भी

लोकसंपर्क आवश्यक माना जाता है।कृषि, उद्योग, व्यापार, जनसेवा और लोकरुचि के विस्तार तथा परिष्कार के लिए भी लोकसंपर्क की आवश्यकता है। लोकसंपर्क का शाब्दिक अर्थ है 'जनसधारण से अधिकाधिक निकट संबंध'।

प्राचीन काल में लोकमत को जानने अथवा लोकरुचि को सँवारने के लिए जिन साधनों का प्रयोग किया जाता था वे आज के वैज्ञानिक युग में अधिक उपयोगी नहीं रह गए हैं। एक युग था जब राजा लोकरुचि को जानने के लिए गुप्तचर व्यवस्था पर पूर्णत: आश्रित रहता था तथा अपने निदेशों, मंतव्यों और विचारों को वह शिलाखंडों, प्रस्तरमूर्तियों, ताम्रपत्रों आदि पर अंकित कराकर प्रसारित किया करता था। भोजपत्रों पर अंकित आदेश जनसाधारण के मध्य प्रसारित कराए जाते थे। राज्यादेशों की मुनादी कराई जाती थी। धर्मग्रंथों और उपदेशों के द्वारा जनरुचि का परिष्कार किया जाता था। आज भी विक्रमादित्य, अशोक, हर्षवर्धन आदि राजाओं के समय के जो शिलालेख मिलते हैं उनसे पता चलता है कि प्राचीन काल में लोकसंपर्क का मार्ग कितना जटिल और दुरूह था। धीरे धीरे आधुनिक विज्ञान में विकास होने से साधनों का भी विकास होता गया और अब ऐसा समय आ गया है जब लोकसंपर्क के लिए समाचारपत्र, मुद्रित ग्रंथ, लघु पुस्तक-पुस्तिकाएँ, प्रसारण यंत्र (रेडियो, टेलीविजन), चलचित्र, ध्वनिविस्तारक यंत्र आदि अनेक साधन उपलब्ध हैं। इन साधनों का व्यापक उपयोग राज्यसत्ता, औद्योगिक और व्यापारिक प्रतिष्ठान तथा अंतरराष्ट्रीय संगठनों के द्वारा होता है।

वर्तमान युग में लोकसंपर्क के सर्वोत्तम माध्यम का कार्य समाचारपत्र करते हैं। इसके बाद रेडियो, टेलीविजन, चलचित्रों और इंटरनेट आदि का स्थान है। नाट्य, संगीत, भजन, कीर्तन, धर्मोपदेश आदि के द्वारा भी लोकसंपर्क का कार्य होता है। लोकतांत्रिक व्यवस्था के अंतर्गत जुलूस, सभा, संगठन, प्रदर्शन आदि की जो सुविधाएँ हैं उनका उपयोग भी राजनीतिक दलों की ओर से लोकसंपर्क के लिए किया जाता है। डाक, तार, टेलीफोन, रेल, वायुयान, मोटरकार, जलपोत और यातायात तथा

परिवहन के अन्यान्य साधन भी राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय संपर्क के लिए व्यवहृत किए जाते हैं। लोकतांत्रिक व्यवस्था के अंतर्गत जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि भी लोकसत्ता और लोकमत के मध्य लाकसंपर्क की महत्वपूर्ण कड़ी का काम करते हैं।

लोकसंपर्क की महत्ता बताते हुए सन् 1787 ईसवी में अमरीका के राष्ट्रपति टामस जेफर्सन ने लिखा था -

हमारी सत्ताओं का आधार लोकमत है। अत: हमारा प्रथम उद्देश्य होना चाहिए लोकमत को ठीक रखना। अगर मुझसे पूछा जाए कि मैं समाचारपत्रों से विहीन सरकार चाहता हूँ अथवा सरकार से रहित समाचारपत्रों को पढ़ना चाहता हूँ तो मैं नि:संकोच उत्तर दूँगा कि शासनसत्ता से रहित समाचारपत्रों का प्रकाशन ही मुझे स्वीकार है। पर मैं चाहूँगा कि ये समाचारपत्र हर व्यक्ति तक पहुँचें और वे उन्हें पढ़ने में सक्षम हों। जहाँ समाचारपत्र स्वतंत्र हैं और हर व्यक्ति पढ़ने को योग्यता रखता है वहाँ सब कुछ सुरक्षित है।

प्रसार एवं संचार सम्पर्क विधियां

प्रसार तथा संचार हेतु मुख्य रूप से तीन प्रकार की सम्पर्क विधियां प्रयोग की जाती हैं। वे सम्पर्क विधियां है -

- व्यक्तिगत सम्पर्क विधियां
- समूह सम्पर्क विधियां
- विराट जन सम्पर्क विधियां

4.2 व्यक्तिगत सम्पर्क विधियां

व्यक्तिगत सम्पर्क - जब प्रसार कार्यकर्ता अथवा कोई भी व्यक्ति प्रसार कार्य के लिए व्यक्तिगत रूप से किसी भी व्यक्ति से उसके घर,

खेत कार्यस्थल पर जाकर मिलता है अथवा व्यक्तिगत रूप से उससे टेलीफोन पर बातें करता है, पत्र लिखकर समझता है तो उसे हम व्यक्तिगत सम्पर्क कहते है।

व्यक्तिगत सम्पर्क के उद्देश्य

- लोगों से सहयोग प्राप्त करने हेतु
- ग्रामीणों की रूचि तथा प्रमुख समस्याओं को जानने हेतु
- ग्रामीणों की समस्याओं के समाधान हेतु
- ग्रामीणों को कार्यक्रम में भाग लेने के लिए प्रेरित तथा प्रोत्साहित करने हेतु
- लोगों से विचारों का आदान प्रदान कर उन्हें नवीन बातें सिखाने हेतु
- लोगों से आत्मीय तथा मधुर संबंध बनाने हेतु
- लोगों में छिपे हुए गुण तथा नेतृत्व क्षमता को जानने हेतु
- लोग किसे अपना नेता बनाना चाहते हैं, इस बात की जानकारी हेतु
- ऐसा वातावरण तैयार करना जिसमें लोगों को नई बातें सिखायी व बतायी जा सकें।

लाभ

- ग्रामीण समस्याओं तथा क्रियाकलापों की सभी सूचनाएं प्राप्त हो जाती है जिसके आधार पर कार्यक्रम बनाने में सुविधा रहती है।
- अच्छा नेता के चयन में मदद मिलती है जिसकी सहायता से कार्यक्रम बनाये व चलाये जा सकते हैं।
- लोगों के साथ अपनापन तथा मधुर संबंध स्थापित हो जाता है।
- लोगों को सीखने के प्रति रूचि उत्पन्न हो जाती है। अब वे समस्याओं के निराकरण हेतु स्वयं प्रयास करने लग जाते हैं।
- सीखने की प्रवृति बढ जाती है।

- स्थानीय संसाधनों का पता चल जाता है जिसके आधार पर आगामी कार्यक्रम बनाये जा सकते है।
- प्रसार कार्यकर्ता तथा कार्यक्रम में लोगों का विश्वास सरलता से प्राप्त किया जा सकता है।
- सीमाएं -
- सभी लोगों से व्यक्तिगत सम्पर्क करना कठिन होता है। अत: कुछ ही लोगों की समस्याओं को ध्यान में रखकर कार्यक्रम नहीं बनाया जा सकता है।
- इसमें अधिक धन, समय तथा शक्ति व्यय होता है।
- जिन लोगों से सम्पर्क स्थापित नहीं हो पाता है उनमें द्वेष की भावना पनप जाती है। इस कारण वे एक दूसरे पर कटाक्ष करने लगते हैं तथा कार्यक्रम का विरोध करने लग जाते हैं।
- प्रसार कार्यकर्ता द्वारा पक्षपात करने की संभावना बढ़ जाती है।
- ध्यान रखने योग्य बातें -
- लोगों से बातचीत करते समय उनकी रूचि का ध्यान रखना चाहिए।
- प्रसार कार्यकर्ता को धैर्यपूर्वक ग्रामीणों की बातों को सुनना चाहिए।
- जो बातें रूढिवादी है, अंधविश्वास से ओत प्रोत है, गलत है, उनका विरोध एकाएक नहीं करना चाहिए और न ही उन्हें मानना चाहिए। अपितु अप्रत्यक्ष रूप से उन बातों की काट करनी चाहिए।
- रोचक विषय में बातचीत मोहक ढंग से की जानी चाहिए।
- व्यक्तिगत सम्पर्क तब किया जाना चाहिए, जब लोग फुर्सत में हो तथा उसकी बातों को ध्यान से सुने।

- शिष्टाचार की मर्यादा में रहकर, बातचीत आरंभ करना चाहिए। उसे अपनी बातों बोर नहीं करना चाहिए कि लोग सुन सुनकर उकता जाएं।
- प्रसार कार्यकर्ता को अपना तथा लोगों के समय का पूरा -पूरा ध्यान रखना चाहिए।
- बातचीत मधुर वातावरण बनाकर की जानी चाहिए। साथ ही दूसरे लोगों को भी बोलने का अवसर देना चाहिए।
- एक निश्चित रूपरेखा बनाकर लोगों से सम्पर्क करना चाहिए।
- वार्तालाप का भाषा सरल व सहज होनी चाहिए। कार्यकर्ता को अपनी योग्यता का अधिक प्रदर्शन नहीं करना चाहिए।

4.3 समूह सम्पर्क

जब दो या दो से अधिक व्यक्तियों से सम्पर्क किया जाता है, जो उसे समूह सम्पर्क कहते हैं। सामान्यत: समूह में 2 से लेकर 30 लोग तक उपस्थित रहते हैं । इन सभी का सोच एवं दृष्टिकोण लगभग एक जैसा ही होता है। इसमें सभी जाति, वर्ग, धर्म, सम्प्रदाय तथा समुदाय के लोग सम्मिलित होते हैं। सभी को विचार विमर्श करने का, सीखने का , पूछने का अवसर दिया जाता है। सभीप्रकार के प्रशिक्षण, विधि प्रदर्शन, परिणाम प्रदर्शन, गोष्ठियों, सेमिनारों, वार्ताएं, आदि समूह सम्पर्क के अन्तर्गत ही आते हैं। इसमें ग्रामीण लोग अपनी समस्याओं को विषय विशेषज्ञों के समक्ष रखते हैं तथा उनके समाधान प्राप्त करते हैं। आपसी बातचीत से भी कई समस्याओं का समाधान हो जाता है।

लाभ -

- कम से कम समय में अधिक लोगों से सम्पर्क स्थापित कर उन्हें प्रभावित किया जा सकता है तथा उनमें सीखने के प्रति ललक पैदा की जा सकती है।

- द्वेष तथा भेदभाव की भावना नहीं पनप पाती है क्योंकि सभी को बोलने का प्रश्न पूछने का, सीखने का तथा कार्यक्रम में भाग लेने का अवसर उपलब्ध हो जाता है।
- सभी लोग अपनी समस्याओं के बारे में चर्चा करते हैं तथा समाधान प्राप्त करते हैं। अत: सबकी समस्याओं आवश्यताओं, रूचि तथा उपलब्ध स्थानीय संसाधनों का पता चल जाता है।
- कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए सभी का समर्थन प्राप्त हो जाता है। लोग अपने अपने कार्य पर जुट जाते हैं तथा पूरी निष्ठा एवं लगन से कर्तव्यों का पालन करते हैं।

सीमाएं -

- कई लोगों के विचारों में अंतर होने तथा मतभेद होने से विरोध की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। परिणामत: कार्यक्रम के क्रियान्वय में संकट की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।
- समूह में कई लोग संकोची स्वभाव के होते हैं तो अपनी समस्याओं को सभी के समक्ष खुलकर नहीं बता पाते हैं। अत: उनका समाधान नहीं हो पाता है।
- समूह द्वारा कार्यक्रम अस्वीकृत होने पर उन्हें दोबारा चलाना कठिन होता है।

ध्यान रखने योग्य बातें

- समूह सम्पर्क हेतु कम से कम एक सप्ताह पहले लोगों को बैठक की सूचना आवश्यक रूप से दी जानी चाहिए, जिसमें बैठक का स्थान, समय तथा दिनों का वर्णन होना चाहिए।
- लोगों की आवश्यकताएं, स्थानीय समस्याएं तथा उपलब्ध संसाधनों की जानकारी सर्वेक्षण द्वारा प्राप्त कर लेना चाहिए।
- बैठक में अधिक से अधिक लोग उपस्थित रहें तथा वार्ता में भाग लें।

- बैठक की व्यवस्था इस प्रकार से गोल मेज की तरह होना चाहिए जिससे सभी लोग एक दूसरे की ओर देख सकें।
- विचार विमर्श करते समय प्रसार कार्यकर्ता को स्वयं अपना मत प्रकट नहीं करना चाहिए। बल्कि लोगों के मत को जानना चाहिए।
- जिन लोगों में नेतृत्व का गुण हो, उन्हें सर्व सम्मति से नेता चुनकर नेतृत्व भार सौंप देना चाहिए। इससे कार्यक्रम क्रियान्यन में सहायता मिलती है।
- वार्ता मित्रतापूर्वक तथा सौहर्द्रपूर्ण वातावरण में आरंभ तथा खत्म करनी चाहिए ।
- सभी लोगों की स्वीकृति मिलने के बाद ही कार्यक्रम नियोजन की रूपरेखा तैयार करना चाहिए। इसके पश्चात सभी लोगों को उनके कर्तव्य की जिम्मेदारी सौंप देना चाहिए ।

4.4 विराट जन सम्पर्क

जब कम समय में, कम उर्जा व्यय करके, एक साथ बहुत सारे लोगों के साथ सम्पर्क स्थापित किया जाता है, तब उसे विराट जन सम्पर्क कहते है। इसके लिए सिनेमा, टेलीविजन, रेडियो, टेपरिकोर्डर, स्लाइड प्रोजेक्ट, भाषण, प्रदर्शनी आदि का प्रयोग किया जाता है। विराट जन सम्पर्क में श्रव्य तथा श्रव्य- दृश्य सामग्रियां अधिक सहायक सिद्ध होते हैं।

लाभ

- अत्यल्प समय में अधिक से अधिक लोगों तक नवीन सूचनाओं, तथ्यों एवं अनुसंधानों की जानकारी पहुंचायी जा सकती है।
- ग्रामीण नेतृत्व विकसित करने में मदद मिलती है।
- कार्य करने के लिए उपयुक्त वातावरण निर्माण होता है।

सीमाएं -

- व्यक्तिगत ध्यान देना संभव नहीं होता । अत: लोगों की समस्याओं, आवश्यकताओं एवं उपलब्ध संसाधनों का पता नहीं चल पाता है।
- लोग नवीन बातों, विचारों, उपकरणों यंत्रों को अपना रहे है या नहीं इसका पता नहीं चल पाता है।
- लेगों को नवीन उपकरणों, यंत्रों को अपनाने में क्या क्या परेशानियां हो रही है उसका पता नहीं चल पाता है।
- द्वितरफा संचार नहीं होने से प्रतिपुष्टि नहीं हो पाता।

ध्यान रखने योग्य बातें

- ग्रामीणों के रीति रिवाजों, संस्कृतियों, परम्पराओं, मूल्यों आदि को समझकर बातें आरंभ की जानी चाहिए।
- ऐसी बातें बतायी जानी चाहिए जिसका कम से कम विरोध हो।
- लोगों का ध्यान आकर्षित करने तथा कार्यक्रम में रूचि उत्पन्न करने के लिए नारा का प्रयोग करना चाहिए। रथ यात्रा आदि द्वारा उपयुक्त वातावरण तैयार करना चाहिए।
- क्षेत्र के प्रतिष्ठित व्यक्तियों एवं नेताओं को बुलाकर भाषण दिलाना चाहिए। इससे लोगों के कार्यक्रम के प्रति विश्वास उपजता है।

अध्ययन में सुविधा की दृष्टि से प्रसार तथा संचार शिक्षण विधियों एवं साधनों का वर्णन निम्नांकित शीर्षक के अन्तर्गत करेंगे -

1. प्रत्यक्ष सम्पर्क
2. प्रदर्शन
    1. विधि प्रदर्शन
    2. परिणाम प्रदर्शन
    3. प्रदर्शनी
    4. सभा, सम्मेलन, अधिवेशन, क्षेत्र, भ्रमण शिविर आदि

श्रव्य दृश्य सामग्रियां

1. गैर प्रक्षेपित सामग्रियां
2. प्रक्षेपित सामग्रियां
   - इन्टरनेट
   - सैटेलाइट

यहां हम केवल प्रत्यक्ष सम्पर्क, प्रदर्शन तथा प्रदर्शनी का अध्ययन करें। शेष का वर्णन आगामी अध्याय में किया जाएगा।

4.5 व्यक्तिगत सम्पर्क विधियों का विवेचन

इसे हम व्यक्तिगत सम्पर्क भी कह सकते है। जब प्रसार कार्यकर्ता ग्रामीणों की समस्याओं, आवश्यकताओं, रूचि तथा इच्छा को जानने के लिए उनके घर, खेत, गौ शाला अथवा कार्यस्थल पर जाकर सम्पर्क स्थापित करता है तो उसे व्यक्तिगत सम्पर्क अर्थात् प्रत्यक्ष सम्पर्क कहते है। इस प्रकार के सम्पर्क में सबसे बडा फायदा यह होता है कि बातें आमने सामने हो जाती है, जिससे एक दूसरे के विचारों को जानने व समझने का अवसर प्राप्त होता है। इसके लिए पहले प्रसार कार्यकताओं को ग्रामीणों के साथ उनके वातावरण में घुलना मिलना पडता है। उनकी बोली/भाषा समझना पड़ता है तथा यह प्रदर्शित करना पड़ता है कि वह जो बातें बताई जा रहा है, वह उन्हीं के लिए है। इससे उन्हें ही लाभ होगा। यद्यपि ग्रामीण लोग प्रसार कार्यकर्ता की बातों पर आसानी से विश्वास नहीं करते हैं। इसलिए प्रसार कार्यकर्ता को ग्रामीणों तक पहुंचने के लिए स्कूल के अध्यापक, पंचायत समिति के सदस्य, मुखिया, प्रधान, सहकारी विभाग के सदस्य तथा स्थानीय नेताओं के सहयोग लेना चाहिए।

प्रत्यक्ष सम्पर्क को अधिक प्रभावशाली बनाने के सुझाव

प्रत्यक्ष सम्पर्क को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए निम्नांकित सुझाव दिये जा रहे है जिसे एक प्रसार कार्यकर्ता को धन में अवश्य ही रखना चाहिए -

- ग्रामीणों से सरल भाषा में बातचीत करना चाहिए। जहां तक हो सके स्थानीय भाषा में वार्तालाप आरंभ करना चाहिए।
- प्रसार कार्यकर्ता को एक अच्छा श्रोता होना चाहिए। जो ग्रामीणों की आवश्यकताओं तथा समस्याओं को धैर्यपूर्वक सुन सके।
- सहनशील तथा परिश्रमी होना चाहिए।
- ग्रामीणों से वाद विवाद तथा विरोध से बचना चाहिए।
- ग्रामीणों की रूचि को ध्यान में रखकर मित्रतापूर्वक वातावरण तैयार करके, फिर वार्तालाप आरंभ करना चाहिए।
- प्रसार कार्यकर्ता को अत्याधुनिक शिक्षण विधियों की पूरी जानकारी होना चाहिए तथा उसका प्रयोग करना आना चाहिए ताकि वह उनके माध्यम से ग्रामीणों को कुछ नया सिखा सकें।
- ग्रामीणों की समस्याओं के निवारण के लिए सदैव प्रयासरत रहना चाहिए । इसके लिए उसे विषय - विशेषज्ञों तथा उच्चाधिकारियों से मिलकर समस्या निदान करवाना चाहिए।
- जब प्रसार कार्यकर्ता ग्रामीणों से विदा लें, तो उस समय उन्हें धन्यवाद अवश्य ज्ञापित करना चाहिए तथा मधुर ढंग से कहना चाहिए फिर मिलेंगे जरूरी आएंगे आप भी हमारे यहां आइए। इससे ग्रामीण के दिल पर गहरा असर पड़ता है तथा वे प्रसार कार्यकर्ता का मन से स्वागत करते हैं व उसके बताये गये मार्ग पर चलते हैं।

प्रत्यक्ष सम्पर्क के अन्तर्गत निम्नांकित विधियां आती है -

1. घर, खेत तथा कार्यस्थल पर जाकर भेंट -
2. कार्यालय में भेंट
3. टेलीफोन से सम्पर्क
4. व्यक्तिगत पत्र लिखना

1. घर खेत तथा कार्यस्थल पर जाकर भेंट -

ग्रामीण स्त्रियों, युवकों, कृषकों, मजदूरों आदि से व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित करने के लिए उनके खेत, घर, गोशाला अथवा कार्यस्थल पर प्रसार कार्यकर्ता को स्वयं चलकर जाना पडता है तथा नवीन चीजों की जानकारी देनी पड़ती है। इससे उसे वहां की समस्याओं की आंखों देखी जानकारी मिल जाती है। उनसे विस्तारपूर्वक चर्चा हो जाती है। वहां की मिट्टी की प्रकृति, सिंचाई सुविधा, जलवायु, लोगों की माली हालत, पशुओं की दशा, चारे की व्यवस्था, फसलों की जानकारी, स्त्रियों एवं बालकों की स्थिति, शिक्षा विद्यालय, अस्पताल, नहर, कैनाल आदि का पता चल जाता है। अत: लोगों की रूचियों, आवश्यकताओं, समस्याओं तथा उपलब्ध संसाधनों के आधार पर वह कार्यक्रम नियोजन कर सकता है। इतना ही नहीं, इससे उस क्षेत्र के लोगों के व्यवहार , उनकी सांस्कृति, परम्पराओं, खान पान, रीति रिवाज, पहनावा आदि का ज्ञान हो जाता है। वह उनके विचारो से भली भांति परिचित हो जाता है। अत: प्रसारकर्ता को उद्देश्य के निर्धारण में सहायता मिलती है कि आखिरकार वह क्या परिवर्तन लाना चाहता है तथा उसी के अनुसार परिवर्तन लाने की चेष्टा करता है। अनेक बार ऐसा होता है कि ग्रामीण लोग मूल समस्याओं को समझ ही नहीं पाते हैं तथा फालतू की समस्याओं में उलझ जाते हैं। अत: प्रसार कार्यकर्ता उनकी मूल समाधान उसे ज्ञात नहीं रहता है। उसकी जानकारी वह विषय विशेषज्ञों से प्राप्त करता है। फिर उसे ग्रामीणों को बताता है। अत: ग्रामीणों की मूल समस्या को समझने के लिए उनके घरों, खेतों, गो शालाओं तथा कार्यस्थलों तक जाना आवश्यक हो जाता है।

लाभ -

- ग्रामीणों की समस्याओं, आवश्यकताओं तथा वहां उपलब्ध स्थानीय संसाधनों का पता आसानी से चल जाता है।
- ग्रामीणों का विश्वास प्रसार कार्यकर्ता पर हो जाता है। अत: वे प्रसार कार्यकर्ता की बातों को मानने लगते हैं।

- प्रसार कार्यकर्ता तथा ग्रामीणों के मध्य द्वितरफा संचार हो जाता है। बात आमने सामने होती है। अत: समस्याएं आती है, उनका निराकरण भी शीघ्रता से हो जाता है। वे सीखने के लिए तैयार हो जाते है।
- ग्रामीण नेता को ढूंढने में सहायता मिलती है।
- कार्यों के परिणाम अच्छे, सुखद तथा लाभप्रद होते हैं।
- कार्यक्रम क्रियान्वयन आसान होता है, क्योंकि प्रसार कार्यकर्ता के प्रति लोगों का विश्वास तथा प्रेम बना रहता है।

सीमाएं -

प्रत्येक व्यक्ति से घर, खेत तथा कार्यस्थल पर जाकर मिलना काफी कठिन होता है। कई बार ग्रामीण लोग अपने कार्यों में इतना अधिक व्यस्त होते हैं कि वे प्रसार कार्यकर्ता से बात तक करना पसन्द नहीं करते । ऐसी स्थिति में द्वितरफा संचार संभव नहीं है।

कभी कभी सम्पर्क नहीं होने से प्रसार कार्यकर्ता को यों ही खाली हाथ लौटना पड़ता है जिससे उसमें निराशा की भावना पनपती है। उसका मनोबल टूटता है। आत्मविश्वास कम होता है।

अधिक समय तथा ऊर्जा की आवश्यकता होती है। खेतों तक प्रसार कार्यकर्ता को पैदल चलना पड़ता है।

जिन लोगों से प्रसार कार्यकर्ता नहीं मिल पाता है, वे उससे द्वेष करने लग जाते है अत: लोगों में द्वेष तथ वैमनस्य की भावना पनप जाती है।

प्रसार कार्यकर्ता के पास यातायात के समुचित साधन की व्यवस्था होनी चाहिए जिससे वह ग्रामीणों के घरों, खेतों, गौशालाओं तथा कार्यस्थलों तक आ जाकर सम्पर्क स्थापित कर सकें।

प्रसार कार्यकर्ता को ग्रामीण कुटीर उद्योग की समुचित जानकारी होनी चाहिए। यदि वह जानकारी नहीं है तो वह लोगों को प्रेरित नहीं कर पाएगा और न ही उनका विश्वास ही जीत पाएगा।

प्रसार कार्यकर्ता जब तक पूरी मेहनत, लगन, निष्ठा एवं ईमानदारी से कार्य नहीं करेगा तब तक शिक्षण पद्धति सफल नहीं हो सकेगा।

2. कार्यालय में भेंट -

व्यक्तिगत सम्पर्क की यह एक अति महत्वपूर्ण शिक्षण पद्धति है जिसमें कृषक, पशुपालक, गृहिणी, बेरोजगारी, युवक युवतियां अथवा अन्य समाधान प्राप्त करते हैं। इसलिये प्रसार कार्यकर्ता को निर्धारित समय में अपने कार्यालय में उपस्थित रहना चाहिए ताकि लोग उससे मिल सकें तथा समस्याओं का समाधान पा सकें। कार्यालय में प्रभावशाली शिक्षण सामग्रियों, श्रव्य, दृश्य सामग्रियां की व्यवस्था होनी चाहिए। ग्रामीणों को बैठाने के लिए सुविधायुक्त कक्ष होना चाहिए जिसमें सूर्य प्रकाश, स्वच्छ हवा, ब्लैकबोर्ड, चार्ट, पोस्टर, बुलेटिन्स, फोल्डर, फ्लैशकार्ड आदि शिक्षण सामग्रियां होनी चाहिए। विधि प्रदर्शन के लिए पर्याप्त स्थान एवं साधन होने चाहिए। रेडियो, टेपरिकार्डर, टेलीविजन, कम्प्यूटर आदि की भी व्यवस्था होनी चाहिए, जिससे वह अत्याधुनिक चीजों की जानकारी प्रदान कर सकें। ठसके अलावा प्रसार कार्यकर्ता को अपने कार्यालय में उन्नत बीजों के नमूने, खाद उर्वरक कीटनाशक, चूहा मार दवाइयां, दवा छिड़कने वाले यंत्र, फल सब्जी परिरक्षक रसोई उद्यान संबंधी जानकारियां, टीकाकरण, संबंधी सूचनाएं आदि भी रखनी चाहिए जिसकी जानकारी वह ग्रामीणें को दे सकता है। जो ग्रामीण उससे कार्यालय में भेंट करने आते हैं उससे संबंधित एक रजिस्टर का संधारण भी करना चाहिए, जिसमें उनका नाम, पता, आने का समय, तथा दिनांक, समस्या आदि का वर्णन हो। यदि उनकी समस्याओं को समाधान प्रसार कार्यकर्ता के वश की बात नहीं है तो उसे विषय विशेषज्ञ बुलवाना चाहिए। ग्रामीणों से आगामी भेंट किस तिथि को की जानी है, वह भी नोट करना चाहिए। जो किसान नियमित रूप से प्रसार कार्यस्थल में कुछ सीखने पने व समस्या समाधान के लिए आते हैं उन्हें कार्ड उपलब्ध करवाना चाहिए। उनके अनुभव भी रजिस्टर में नोट करना चाहिए। इससे मूल्यांकन में सहायता मिलती है तथा प्रसार कार्यक्रम की प्रगति का पता चलता है। चूंकि प्रसार

कार्यक्रम ग्रामीणों के उत्थान के लिए चलाये जाते हैं। अत: कार्यालय में भेंट करने आए जरूरतमंद लोगों, कृषकों, गृहिणियों, पशुपालकों आदि से प्रसार कार्यकर्ता को अति विनम्र भाव से उनका स्वागत करना चाहिए। शिष्टाचार के रिवाज को निभाते हुए उनकी समस्या का समाधान करना चाहिए। यदि किसी समस्या का समाधान प्रसार कार्यकर्ता को ज्ञात नहीं है तो वह गलत नहीं बताये और न ही लोगों को भ्रमित करें, बल्कि ग्रामीणों को यह आश्वस्त कि उसकी समस्या का समाधान वह जल्दी ही करेगा। इससे ग्रामीणों तथा प्रसार कार्यकर्ता के बीच आपसी प्रेम एवं विश्वास बढ़ता है। मित्रतापूर्ण तथा सौहार्द्रपूर्ण वातावरण तैयार होता है।

लाभ -

- जब ग्रामीण स्वयं ही चलकर प्रसार कार्यकर्ता से उसके कार्यालय में भेंट करने आते हैं तथा अपनी समस्याओं का समाधान प्राप्त करते हैं तो उससे यह प्रमाणित होता है कि ग्रामीणों को प्रसार कार्यकर्ता तथा प्रसार कार्यक्रमों के प्रति गहरी आस्था एवं विश्वास है।
- प्रसार कार्यकर्ता द्वारा समस्या के समाधान से ग्रामीणों के दिल दिमाग पर गहरा प्रभाव पड़ता है। वे सीखने के लिए इच्छुक हो जाते हैं। वे सीखकर तथा प्रशिक्षण प्राप्त कर अपने जीवन को बेहतर ढंग से जीने में समर्थ हो जाते है।
- जिन समस्याओं का निराकरण गांवों में संभव नहीं हो पाता है, उनका समाधान कार्यालय में विषय विशेषज्ञों द्वारा कर दिया जाता है। परिणामत: वे उत्साहित होते है।
- कार्यालय में प्रसार कार्यकर्ता ग्रामीणों को कई चीजों की विस्तृत जानकारी देता है जैसे उन्नत बीजों को कहां से खरीदें? खाद, उर्वरकों आदिके लिए सब्सीडी कहां से मिलेगी? ऋण कहां से मिलेगा? ऋण के लिए आवश्यक औपचारिकताएं कैसे पूरी की जा सकेगी? पशुओं को खरीदने तथा कृषि यंत्रों के लिए ऋण

कहां से लें? गोबर गैस प्लान्ट से क्या लाभ होगा? धूम्र रहित चूल्हा से गृहिणियों को क्या फायदें होंगे। अनाजों की बिक्री कब और कहां करें। इन सब बातों की जानकारी उसे प्रसार कार्यकर्ता से प्राप्त हो जाती है। ऐसा होने से ग्रामीणों तथा प्रसार कार्यकर्ता के बीच अपनापन तथा महत्वपूर्ण व्यवहार पनप जाता है।

- ग्रामीण लोग प्रसार कार्यक्रम को महत्व देने लग जाते हैं, वे समझने लगते हैं कि वह कार्यक्रम उनके लिए है उन्हीं का है। अत: वे इससे महत्वपूर्ण भूमिका निभाने लग जाते है।
- गांवों में प्रसार कार्यक्रम चलाने हेतु एक अच्छा वातावरण तैयार हो जाता है जिसमें ग्रामीणों को सहभागिता बढ़ती है।
- प्रसार कार्यकर्ता ग्रामीण बेरोजार युवक युवतियों को कुटीर उद्योग का प्रशिक्षण देकर उन्हें स्वावलंबी बना सकता है। वे घर बैठ आय अर्जित कर सकते है।
- ग्रामीणों में छिपे हुए गुणों का विकास करके प्रसार कार्यकर्ता उन्हें सुखद जीवन जीने में मदद करता है।
- सारांश में, प्रसार कार्यकर्ता ग्रामीणों के लिए उन्नति का द्वार खोलता है। उसका कार्यालय एक मन्दिर की तरह होता है, जिसमें जो लोग आते हैं, मुरादें पाकर जाते है।

सीमाएं -

- प्रसार कार्यकर्ता जब निर्धारित समय में जरूरतमंद ग्रामीणों से किन्हीं कारणवश नहीं मिल पाता है तो उनके मन में उसके प्रति क्षोभ, रोष, विषाद की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। वे निराश हो जाते है। यदि यही स्थिति दो चार बार होती हैं तो वे धीरे धीरे करके कार्यालय में आना बंद कर देते हैं।
- कार्यालय आने जाने में ग्रामीणों का समय एवं उर्जा व्यय होती है।

- कार्यालय ज्ञान का मंदिर होता है जिसमें सभी प्रकार की शिक्षण सामग्रियां उपलब्ध होनी चाहिए। यदि अत्याधुनिक शिक्षण सामग्रियां उपलब्ध नहीं होती है, तब प्रसार कार्यकर्ता नवीन चीजों की जानकारी उपलब्ध नहीं करवा पाता है। परिणामत: प्रसार कार्यक्रम में वांछित सफलता नहीं मिल पाती है।
- जब प्रसार कार्यकर्ता को ग्रामीण समस्याओं के समाधान की पूरी जानकारी नहीं रहती है तथा वह उन्हें गलत जानकारी दे देता है तो लोगों को विश्वास प्रसार कार्यकर्ता से उठ जाती है वे लोग उसे झूठा अज्ञानी समझने लगते हैं तथा कार्यालय में जाना बन्द कर देते हैं।
- यदि निर्धारित समय पर विषय विशेषज्ञ कार्यालय में उपस्थित नहीं हो पाते हैं तथा ग्रामीणों की समस्याओं का समाधान नहीं हो पाता है तब ग्रामीण लोग निराश, उदास हो जाते हैं। उनका उत्साह तथा आत्मविश्वास डगमगाने लगता है। उनका प्रसार कार्यकर्ता के प्रति विश्वास खत्म हो जाता है। ऐसी स्थितियां न तो प्रसार कार्यकर्ता के लिए सहीं है और न हीं प्रसार कार्यक्रम के लिए ही।
- उन्नत बीज व खाद, उर्वरक, कीटनाशक दवाइयां, चूहा मार दवाइयां आदि कार्यालय में होनी चाहिए जिसे प्रसार कार्यकर्ता ग्रामीण कृषकों को दिखा सकें। हो सके तो उसे नि:शुल्क अथवा कम कीमत पर इन चीजों को ग्रामीणों को उपलब्ध भी करवाना चाहिए। यदि वह ऐसा कर पाने में असमर्थ होता है तो लोगों का भरोसा प्रसार कार्यकर्ता से उठ जाता है। भरोसा खत्म होने तथा विश्वास न होने से अगामी कार्यक्रम स्वत: ही असफल हो जाते है।
- अत: प्रसार कार्यकर्ता को कार्यालय से पूरी लगन, निष्ठा, ईमानदारी तथा पूरे मनोयोग से ग्रामीणों की सेवा करनी चाहिए। उनकी समस्याओं को समाधान करना चाहिये । प्रसार कार्यकर्ता

को उद्देश्य तभी सफल हो सकेगा अन्यथा वह कोरे कागज में ही सिमटकर रहे जाएगा।

3. टेलीफोन से सम्पर्क

जब प्रसार कार्यकर्ता ग्रामीण को नई सूचनाएं, तथ्यों उपकरणों, यंत्रों आदि की जानकारी टेलीफोन के माध्यम से देता है, तब हम टेलीफोन वार्ता, कहते हैं। आज इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के विकास में मोबाइल में 3G सिम की सहायता से संचारक तथा प्राप्तकर्ता के बीच हुई वार्ता को सचित्र देख व सुन सकते हैं। परन्तु वर्तमान में यह सिम तथा उपकरण महंगा पडता है। इसलिए इसका उपयोग व्यक्तिगत सम्पर्क में, ग्रामीणों के मध्य बिल्कुल ही न के बाराबर किया जाता है। ग्रामीण लोग भी टेलीफोन से अपनी समस्याओं को प्रसार कार्यकर्ता को बताते हैं तथा समाधान प्राप्त करते है। इस प्रकार टेलीफोन द्वितरफा संचार का एक अतिमहत्वपूर्ण साधन है।

लाभ

- अत्यल्प समय में घर बैठे कृषक अपनी समस्याओं का प्रसार कार्यकर्ता को बता देना है तथा समाधान प्राप्त कर सकता है। वर्तमान में टेलीफोन, मोबाइल घर घर में विद्यमान है जिसका उपयोग प्रत्येक लोग करते हैं।
- इससे समय एवं शक्ति की बचत होती है।
- प्रसार कार्यकर्ता ग्रामीणों से फोन पर बातचीत करके आगामी कार्यक्रम तय कर सकता है। इससे उसे व्यक्तिगत रूप से घर घर जाना नहीं पडता तथा काम हो जाता है।
- यदि किन्हीं कारणों से प्रसार कार्यकर्ता कार्यालय में उपस्थित नहीं हो सकेगा अथवा विषय विशेषज्ञ नहीं मिल पाएंगे तो उसकी सूचना वह पूर्व में ही ग्रामीणों को दे देता है, जिससे उन्हें लाभ होता हैं। वे कार्यालय आकर परेशान नहीं होते हैं।

सीमाएं

- टेलीफोन खराब होने या मोबाइल की बैटरी चार्ज नहीं होने से बातचीत नहीं हो पाती है। फलत: समस्याओं की जानकारी प्रसार कार्यकर्ता तक नहीं दी जा सकती है और न ही प्रसार कार्यकर्ता उनका हल ही उन्हें बता पाता है।
- कई बार गांवों में टॉवर खराब रहता है अथवा टॉवर ठीक ढंग से काम नहीं करता है तब टेलीफोन से बातचीत नहीं की जा सकती है।
- गांवों में बिजली सुविधा नहीं होने से मोबाइल चार्ज नहीं हो पाता है।
- टेलीफोन से बातचीत करने में अधिक पैसे खर्च होते हैं। ग्रामीणों द्वारा अधिक पैसे खर्च करना संभव नहीं है। अत: ग्रामीण लोग समस्याओं की जानकारी तथा उनका समाधान प्राप्त करने में असमर्थ होते हैं।
- कई बार टेलीफोन से आवाज साफ साफ, स्पष्ट सुनाई नहीं देती है जिससे बातचीत में व्यवधान उत्पन्न होता है।
- कई बार टेलीफोन में Not Reachable तथा No Net Coverage भी आता है। ऐसी स्थिति में बातचीत करना संभव नहीं होता।
- Server Down होने से भी टेलीफोन से बातचीत करना संभव नहीं हो पाता।

4. व्यक्तिगत पत्र लिखकर

जब प्रसार कार्यकर्ता नवीन चीजों की जानकारी व्यक्तिगत पत्र लिखकर लोगों तक पहुंचाता है तो यह भी व्यक्तिगत सम्पर्क का ही एक साधन है। हां उन्नत किसान अपनी समस्याओं को प्रसार कार्यकर्ता तक पत्र के माध्यम से लिखकर भेजता है तथा प्रसार कार्यकर्ता उसका समाधान भी पत्र लिखकर करता है। परन्तु आज मोबाइल व टेलीफोन

के बढते प्रचलन ने पत्र लिखने की परम्परा को लगभग बिल्कुल ही बंद कर दिया है। आज लोग तुरंत ही समस्याओं का समाधान चाहते है। ऐसी स्थिति में पत्र बिल्कुल ही पुरातन व पारंपरिक औपचारिक शिक्षण विधि ही बनाकर रह गया है।

लाभ -

- पत्र में मनोभाव होते हैं, संवेग होते हैं तथा समस्याओं का विस्तार से वर्णन रहता है।
- पत्र लिखने से प्रसार कार्यकर्ता तथा ग्रामीणों के बीच आत्मीय संबंध स्थापित हो जाता है।

सीमाएं -

- अधिक समय तथा उर्जा व्यय होता है।
- पत्र पहुंचने में काफी समय लगता है। यदि प्रसार कार्यकर्ता ने पत्र पढ़कर कहीं रख दिया अथवा उसे पढना ही भूल गया तो पत्राचार में काफी विलम्ब हो जाता है। अत: समस्याओं का समाधान नहीं हो पाता। जब वह काफी विलम्ब से समस्याओं का समाधान करता है तब उसका महत्व स्वत: ही कम हो जाता है। अर्थात् सूचनाएं अपना महत्व खो देती है।
- पत्र खरीदने में पोस्टल चार्ज लगता है।
- डाकघर से पत्र खरीदने एवं भेजने के लिए किसी न किसी को जाना पड़ता है। यदि वह व्यक्ति उस कार्य को पूर्ण कुशलता व दक्षतापूर्वक तरीके से नहीं कर पाता है तब कई कई दिन तक तो भेजने वाले पत्र उसके पॉकेट में ही पड़े रह जाते हैं।

4.6 सारांश

लोकतांत्रिक व्यवस्था में लोकमत या लोकमानस की अभिव्यक्ति के लिए लोक के साथ सम्पर्क होना अतिआवश्यक है । लोक के साथ प्रसार एवं संचार सम्पर्क करने की तीन विधियाँ मानी जाती है

(1) व्यक्तिगत सम्पर्क विधियाँ

(2) समूह सम्पर्क विधियाँ
(3) विराट जन सम्पर्क विधियाँ
इनकी अपनी कार्यप्रणाली, लाभ और सीमाएँ भी है । प्रस्तुत इकाई में प्रत्यक्ष (व्यक्तिगत) सम्पर्क विधि का विस्तार से विवेचना किया गया है । प्रसार कार्यकर्ता ग्रामीण विकास के लिए ग्रामवासियों के घर, खेत-खलिहान, गौशाला अथवा कार्यस्थल पर जाकर जनसम्पर्क स्थापित कर अपनी योजनाओं व लक्ष्यों को क्रियान्वित करता है । यह एक चुनौतिपूर्ण कार्य होता है ।

4.7 अभ्यास प्रश्न

1.व्यक्तिगत सम्पर्क विधियां के बारे में विस्तारपूर्वक समझाइये
2.समूह सम्पर्क विधियां के बारे में विस्तारपूर्वक समझाइये
3.विराट जन सम्पर्क विधियां के बारे में विस्तारपूर्वक समझाइये

4.8 संदर्भ ग्रन्थ

प्रसार शिक्षा –डा. वंदना जैन , डा पूनम कुमारी
प्रसार शिक्षा-डा बी. डी. हरपलानी
प्रसार शिक्षा- डा वृंदा सिंह

इकाई 5

संचार

5.0   उद्देश्य
5.1   प्रस्तावना
5.2   संचार का अर्थ एवं परिभाषा
5.3   सम्प्रेषण के उद्धेश्य

5.4 संचार की प्रक्रिया
5.5 संचार के उद्देश्य
5.6 संचार के प्रकार
5.6.1 अंत: वैयक्तिक संचार
5.6.2 अंतर वैयक्तिक संचार
5.6.3 समूह संचार
5.6.4 जनसंचार
5.7 सारांश
5.8 प्रश्न
5.9 संदर्भ ग्रन्थ

5.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात -

1. संचार का अर्थ एवं परिभाषा के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
2. संचार की प्रक्रिया के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
3. संचार के उद्देश्य के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
4. संचार के प्रकार के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।

5.1 प्रस्तावना

संचार एक तकनीकी शब्द है जो अंग्रेजी के कम्यूनिकेशन का हिन्दी रूपांतरण है। इसका अर्थ होता है, किसी सूचना या जानकारी को दूसरों तक पहुंचाना। इसके माध्यम से मनुष्य के सामाजिक संबंध बनते और विकसित होते हैं। मानवीय समाज की समस्त प्रक्रिया संचार पर आधारित है। इसके बिना मानव नहीं रह सकता। प्रत्येक मनुष्य अपनी जाग्रतावस्था में संचार करता है अर्थात बोलने सुनने सोचने देखने पढ़ने लिखने या विचार विमर्श में अपना समय लगाता है। जब

मनुष्य अपने हाव भाव संकेतों और वाणी के माध्यम से सूचनाओं का आदान प्रदान करता है तो वह संचार कहलाता है ।

5.2 संचार का अर्थ एवं परिभाषा

संचार का सामान्य भाषा में अर्थ है- एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक सूचना या संदेश को संप्रेषित करना या किसी सूचना या तकनीक को दूसरे तक पहुंचाना। यह शब्द संस्कृत के चर धातु से पैदा हुआ है। जिसका अभिप्राय है-चलना। अपने व्यापक अर्थ में इसका प्रयोग चलने, दौड़ने जैसी क्रियाओं के लिए होता है। लेकिन आज संचार शब्द एक तकनीकी शब्द बन चुका है। जो अंग्रेजी के कम्युनिकेशन का हिन्दी रूपांतर है। यह शब्द वास्तव में लैटिन भाषा की कम्युनिकेपर क्रिया से निकलकर आया है। जिसका आशय है to take together, confer, discourse and consult on with another यह लैटिन भाषा के कम्युनिस शब्द से भी जुड़ता है

जिसका अर्थ है to take common, to share, to import, to train, to transfer अर्थात सामान्यीकरण, सामान्य भागीदारीयुक्त सूचना, संप्रेषण यानि इसे समझ या साझा आधार भी कहा जा सकता है। संचार के स्थान पर एक अन्य शब्द संप्रेषण का भी प्रयोग किया जाता है। लेकिन कम्युनिकेशन के लिए संचार शब्द ही अधिक उपयुक्त है। इस प्रकार संचार एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से एक व्यक्ति दूसरे के विचारों को समझता है, सहभागी होता है तथा आपसी समझदारी बढ़ाता है।

एन्साइक्लोपीडिया आफ कम्यूनिकेशन के अनुसार- the transfer of thoughts and messages are contrasted with transportation of goods and persons. अर्थात विचारों या संदेशों के आदान-प्रदान को संचार कहते हैं जो चीजों और व्यक्तियों की ढुलाई या परिवहन से अलग है।

राबर्ट एंडरसन के अनुसार- वाणी, लेखन या संकेतों के द्वारा विचारों, अभिमतों अथवा सूचना का विनिमय करना संचार कहलाता है।

बैरलों के अनुसार- संचार में अर्थ संचारित नहीं होता। अर्थ न तो संचारित होते हैं और न ही स्थानांतरित होते हैं। केवल संदेश ही संचारित होते हैं तथा संदेश में अर्थ नहीं होते, वे तो संप्रेषक में होते हैं जो संदेश देते हैं।

विल्बर श्राम के अनुसार- संचार में एक व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह के साथ एक ऐक्य या सामान्यतया की स्थापना समाहित होती है।

पीटर लिटिल के अनुसार- संचार एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से सूचना व्यक्तियों या संगठनों के बीच संप्रेषित की जाती है ताकि समझ में वृद्धि हो।

जे पाल लीगन्स के अनुसार- संचार एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें दो या दो से अधिक व्यक्ति विचार, तथ्य, भावनाओं का विनिमय करते हैं ताकि दोनो की समझ बढ़े।

ए बी शनमुगन के अनुसार- ज्ञान, अनुभव, संवेदना, विचार और यहां तक कि अस्तित्व में होने वाले अभिनव परिवर्तनों की साझेदारी ही संचार है।

डा हरिमोहन के अनुसार- संचार एक जटिल प्रक्रिया का परिणाम है। जिसके द्वारा एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति के बीच अर्थपूर्ण संदेशों का आदान-प्रदान किया जाता है। ये अर्थपूर्ण संदेश भेजने वाले और संदेश पाने वालों के बीच एक समझदारी या साझेदारी बनाते हैं।

लुडबर्ग- संकेतों द्वारा होने वाला संप्रेषण संचार है ।

लीलैंड ब्राउन - मनुष्य के कार्यक्षेत्र विचारों व भावनाओं के प्रसारण व आदान प्रदान की प्रक्रिया संचार है ।

डैनिस मैक कवैल -संचार एक व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्ति को भेजे गये संदेश के संप्रेषण की प्रक्रिया है ।

कौफीन और शॉं - संचार समानुभूति का विनिमय है।

थीयो हैमान -संचार वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा सूचना व संदेश एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक पहुंचे ।

5.3 सम्प्रेषण के उद्देश्य

- समूह को संवोधित करने के कौशल का विकासी समूह को विषय वस्तु से स्पष्ट या सरल ढंग से परिचित करना ।
- पाठ को वोधगम्य बनाना।
- छात्रों को अभिप्रेरित करना ।
- उपयोगी लेखन के कौशल का विकासी करना इन्टरनेट तथा वेबसाइट के उपयोग का बोध करवाना ।

5.4 संचार प्रक्रिया

संचार प्रक्रिया में संदेश भेजने वाला प्रेषक कहलाता है और संदेश प्राप्त करने वाला प्राप्तकर्ता। दोनों के बीच एक माध्यम होता है जिसके सहयोगसे प्रेषक का संदेश प्राप्तकर्ता के पास पहुंचता है। प्राप्तकर्ता के दिल दिमाग पर प्रभाव डालता है जिससे सामाजिक सरोकारों में बदलाव आता है। देश तथा विदेश में मनुष्य की दस्तकें बढ़ती है इसलिये संचार प्रक्रिया का पहला चरण प्रेषक होता है। इसे इनकोडिंग भी कहते है । इनकोडिंग के बाद विचार सार्थक संदेश के रूप में ढल जाता है। जब प्राप्तकर्ता अपने मस्तिक में उक्त संदेश को ढाल लेता है तो संचार की भाषा में डीकोडिंग कहतें हैं। डीकोडिंग के बाद प्राप्तकर्ता उस संदेश का अर्थ समझता है। वह अपनी प्रतिक्रिया प्रेषक को भेजता है। तो उस प्रक्रिया को फीडबैक कहतें हैं।
इस प्रकार कहा जा सकता है कि यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से दो या दो से अधिक व्यक्ति संकेत, चित्र या भाषा के द्वारा अपनी सूचनाओं, भावनाओं, विचारों का आदान-प्रदान करते हैं। उपर्युक्त परिभाषाओं के संदर्भ में हमारे सामने तीन बातें उभर कर आई हैं-

1. यह विनिमय या सूचना प्रेषण मौखिक, लिखित अथवा संकेतों में ही हो सकता है लेकिन जिस रूप में हो, वह अर्थपूर्ण संदेश होना चाहिए। बिना अर्थ के यह संदेश व्यर्थ है।

2. संचार एक जटिल प्रक्रिया होती है। इससे हमारे वाक् अवयवों से लेकर अनेक प्रकारी की मशीनों का प्रयोग किया जाता है।

3. संदेश अर्थपूर्ण हो और उनका प्रभाव दूसरे लोगों पर होना चाहिए। वे कुछ प्रतिक्रिया दें, यह भी आवश्यक है।

5.5 संचार के कार्य

संचार प्रक्रिया निम्नलिखित कार्यों को संपंन करती है –

सूचना या जानकारी देना ।

- संचार से जुड़े व्यक्तियों को प्रेरित और प्रभावित करना। संचार व्यक्तियों समाजों और देशों के बीच संबंध स्थापित करता है। संचार विभिन्न तथ्यों विचारों मसलों पर व्यापक विचार विमर्श करने में सहायक होता है।
  मनुष्यों का मनोरंजन करना संचार का एक महत्वपूर्ण कार्य है। संचार राष्ट्र की आर्थिक व औद्योगिक उन्नति में सहायक होता है।

5.6 संचार के प्रकार (Types of Communication)

संचार मानव जीवन की बुनियादी जरूरतों में से एक है, जिसके न होने की स्थिति में मानव अधूरा होता है। अपने समाज में मानव कहीं संचारक के रूप में संदेश सम्प्रेषित करता है, तो कहीं प्राप्तक के रूप में संदेश ग्रहण करता है। संचार प्रक्रिया में संचारक शब्दिक संकेतों के रूप में उद्दीपकों को सम्प्रेषित कर प्राप्तक के व्यवहार को बदलने का प्रयास करता है। संचार केवल शाब्दिक नहीं होता है, बल्कि इसमें उन सभी क्रियाएं भी सम्मलित किया गया है, जिनसे प्राप्तक प्रभावित होता है। संचार प्रक्रिया में संदेश का प्रवाह संचारक से प्राप्तक तक होता है। इस प्रक्रिया में शामिल लोगों की संख्या के आधार पर संचार के प्रकारों का वर्गीकरण किया जाता है, क्योंकि मानव एक-दो लोगों से एक किस्म का तथा किसी समूह/समूदाय के साथ अन्य किस्म का व्यवहार

करता है। संचार प्रक्रिया में शामिल लोगों की संख्या के आधार पर संचार मुख्यत: चार प्रकार का होता है :-

1. अंत: वैयक्तिक संचार,
2. अंतर वैयक्तिक संचार,
3. समूह संचार, और
4. जनसंचार।

5.6.1 अंत: वैयक्तिक संचार (Intrapersonal Communication)

यह संचार की वह प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति खुद से संचार करता है अथार्त इसकी परिधि में व्यक्ति स्वयं होता है। दरअसल यह एक मनोवैज्ञानिक क्रिया है जिसमें मानव व्यक्तिगत चिंतन-मनन करता है। इसमें संचारक और प्राप्तक दोनों की भूमिका एक ही व्यक्ति को निभानी पड़ती है। अगर कोई व्यक्ति स्वप्न देखता है या कुछ सोचता है तो वह भी अंत:वैयक्तिक संचार के अंतर्गत आता है। इसके अंतर्गत् मानव अपनी केंद्रीय स्नायु-तंत्र (Central Nervous System) तथा बाह्य स्नायु-तंत्र (Perpheral Nervous System) का प्रयोग करता है। केंद्रीय स्नायु-तंत्र में मस्तिष्क आता है, जबकि बाह्य स्नायु-तंत्र में शरीर के अन्य अंग। हम यह कह सकते हैं कि जो व्यक्ति अंत:वैयक्तिक संचार नहीं करता है वो पागल है। यह एक मनोवैज्ञानिक क्रिया तथा मानव का व्यक्तिगत चिंतन-मनन है। इसमें संचारक और प्राप्तक दोनों की भूमिका एक ही व्यक्ति को निभानी पड़ती है। अंत: वैयक्तिक संचार मानव की भावना, स्मरण, चिंतन या उलझन के रूप में हो सकती है। कुछ विद्वान स्वप्न को भी अंत: वैयक्तिक संचार मानते हैं। इसके अंतर्गत् मानव अपनी केंद्रीय स्नायु-तंत्र (Central Nervous System) तथा बाह्य स्नायु-तंत्र (Perpheral Nervous System) का प्रयोग करता है। केंद्रीय स्नायु-तंत्र में मस्तिष्क आता है, जबकि बाह्य

स्नायु-तंत्र में शरीर के अन्य अंग। इस पर मनोविज्ञान और चिकित्सा विज्ञान में पर्याप्त अध्ययन हुए हंै। जिस व्यक्ति का अंत: वैयक्तिक संचार केंद्रित नहीं होता है, उसे समाज में च्पागलज् कहा जाता है। मनुष्य के मस्तिष्क का उसके अन्य अंगों से सीधा सम्बन्ध होता है। मस्तिष्क अन्य अंगों से न केवल संदेश ग्रहण करता है, बल्कि संदेश सम्प्रेषित भी करता है। जैसे, पांव में चोट लगने का संदेश मस्तिष्क ग्रहण करता है और मरहम लगाने का संदेश हाथ को सम्प्रेषित करता है।

यह एक स्व-चालित संचार प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से मानव अपना तथा अन्य दूसरों का मूल्यांकन करता है। सामाजिक विज्ञान के अध्ययन की जितनी भी प्रणालियां हैं, उन सभी का आधार अंत: वैयक्तिक संचार ही है। इसे आभ्यांतर, स्वगत या अंतरा वैयक्तिक संचार भी कहा जाता है। यह समस्त संचारों का आधार है। इसकी प्रक्रिया व्यापक होने के साथ-साथ बड़ी रहस्यवादी होती हैं। भारतीय मनीषियों ने अंत: वैयक्तिक संचार प्रक्रिया को सुधारने तथा विकास की राह पर ले जाने का लगातार प्रयास किया है, परिणामस्वरूप योग व साधना की उत्पत्ति व विकास हुआ। समाज में अंत: वैयक्तिक संचार के कई उदाहरण मौजूद हैं-

(1) शारीरिक रूप में मजबूत व्यक्ति अपनी भौतिक शक्ति के कारण सदैव दूसरों पर प्रभुत्व जमाने के लिए स्वयं से संचार करता है।

(2) निर्धन व्यक्ति सदैव अपनी भूख मिटाने के लिए स्वयं से संचार करता है।

(3) विद्यार्थी सदैव अच्छे अंक पाने के लिए स्वयं से संचार करता है।

(4) बेरोजगार व्यक्ति नौकरी पाने के लिए संचार करता है... इत्यादि।

इसी क्रम में मैथिली शरण गुप्त की रचना काफी प्रासंगिक है

कोई पास न रहने पर भी जनमन मौन नहीं रहता।

आप-आप से ही कहता है, आप-आप की ही सुनता है।।

अंत: वैयक्तिक संचार एक शरीरतांत्रिक क्रिया है, जिसके चलते मानव में मूल्य, अभिवृत्ति, विश्वास, अपनापन इत्यादि का जन्म होता है। व्यावहारिक प्रक्रिया के आधार पर इसको भौतिक-अभौतिक अथवा अंत:-बाह्य रूपों में विभाजित किया जा सकता है।

विशेषताएं : अंत: वैयक्तिक संचार की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं :-

1. इससे मानव स्वयं को संचालित करता है तथा अपने जीवन की योजनाओं को तैयार करता है।

2. मानव सुख-दु:ख का एहसास करता है।

3. अपने जीवन के लिए उपयोगी तथा आवश्यक आयामों का आविष्कार करता है ।

4. दिल और दिमाग पर नियंत्रण रखता है, 5. फीडबैक व्यक्त करता है।

5.6.2 अंतर वैयक्तिक संचार

(Interpersonal Communication)

संचार की वह प्रक्रिया जिसमें 2 लोग शामिल होते हैं। जब 2 लोग आपस में भावनाओं और विचारों का आदान प्रदान करते हैं तो उसे अंतरवैयक्तिक संचार कहते हैं। यह आमने-सामने होता है। यह दो-तरफा (Two-way) प्रक्रिया है। यह कहीं भी स्वर, संकेत, शब्द, ध्वनि, संगीत, चित्र, नाटक इत्यादि के रूप में हो सकता है। इसमें फीडबैक तुरंत और सबसे बेहतर मिलता है। उदाहरण के तौर पर किसी मासूम बच्चा को ही ले लीजिए, जो नवजात से जैसे-जैसे बड़ा होता है, वैसे-वैसे समाज के सम्पर्क में आता है और अंतर वैयक्तिक संचार को अपनाने लगता है। माता-पिता के बुलाने पर उसका हंसना, बोलना या भागना अंतर वैयक्तिक संचार का प्रारंभिक उदाहरण है। इसके बाद वह ज्यों-ज्यों किशोरावस्था की ओर बढ़ता है, त्यों-त्यों भाषा, परम्परा, अभिवादन आदि अंतर वैयक्तिक संचार प्रक्रिया से

सीखने लगता है। पास-पड़ोस के लोगों से जुडऩे में भी अंतर वैयक्तिक संचार की महत्वपूर्ण भूमिका होती हैं। साक्षात्कार, कार्यालयी वार्तालाप, समाचार संकलन इत्यादि अंतर वैयक्तिक संचार का उदाहरण है। अंतर वैयक्तिक संचार से तात्पर्य दो व्यक्तियों के बीच विचारों, भावनाओं और जानकारियों के आदान-प्रदान से है। यह आमने-सामने होता है। इसके लिए दो व्यक्तियों के बीच सम्पर्क का होना जरूरी है। अत: अंतर वैयक्तिक संचार दो-तरफा (Two-way) प्रक्रिया है। यह कहीं भी स्वर, संकेत, शब्द, ध्वनि, संगीत, चित्र, नाटक इत्यादि के रूप में हो सकता है। इसमें फीडबैक तुरंत और सबसे बेहतर मिलता है। संचारक जैसे ही किसी विषय पर अपनी बात कहना शुरू करता है, वैसे ही फीडबैक मिलने लगता है। अंतर वैयक्तिक संचार का उदाहरण मासूम बच्चा है, जो बाल्यावस्था से जैसे-जैसे बाहर निकलता है, वैसे-वैसे समाज के सम्पर्क में आता है और अंतर वैयक्तिक संचार को अपनाने लगता है। माता-पिता के बुलाने पर उसका हंसना, बोलना या भागना अंतर वैयक्तिक संचार का प्रारंभिक उदाहरण है। इसके बाद वह ज्यों-ज्यों किशोरावस्था की ओर बढ़ता है, त्यों-त्यों भाषा, परम्परा, अभिवादन आदि अंतर वैयक्तिक संचार प्रक्रिया से सीखने लगता है। पास-पड़ोस के लोगों से जुडऩे में भी अंतर वैयक्तिक संचार की महत्वपूर्ण भूमिका होती हैं।

अंतर वैयक्तिक संचार में फीडबैक का महत्वपूर्ण स्थान है। इसी के आधार पर संचार प्रक्रिया आगे बढ़ती है। साक्षात्कार, कार्यालयी वार्तालाप, समाचार संकलन इत्यादि अंतर वैयक्तिक संचार का उदाहरण है। अंतर वैयक्तिक संचार सामाजिक सम्बन्धों का आधार है। इसके लिए मात्र दो लोगों का मौजूद होना जरूरी नहीं है, बल्कि दोनों के बीच परस्पर अंत:क्रिया का होना भी जरूरी है। वह चाहे जिस रूप में हो। टेलीफोन पर वार्तालाप, ई-मेल या सोशल नेटवर्किंग साइट्स पर चैटिंग अंतर वैयक्तिक संचार के अंतर्गत् आते हैं। सामान्यत: दो व्यक्तियों के बीच वार्तालाप को ही अंतर वैयक्तिक संचार की श्रेणी में रखा जाता है, परंतु कुछ संचार वैज्ञानिक तीन से पांच व्यक्तियों के बीच

होने वाले वार्तालाप को भी इसी श्रेणी में मानते हैं, बशर्ते संख्या के कारण अंतर वैयक्तिक संचार के मौलिक गुण प्रभावित न हो। संचार वैज्ञानिकों का मानना है कि जैसे-जैसे लोगों की संख्या में बढ़ोत्तरी होगी, वैसे-वैसे अंतर वैयक्तिकता का गुण कम होगा और समूह का निर्माण होगा।

विशेषताएं : अंतर वैयक्तिक संचार बेहद आंतरिक संचार है, जिसके कारण

(1) फीडबैक तुरंत तथा बेहतर मिलता है।

(2) बाधा आने की संभावना कम रहती है।

(3) संचारक और प्राप्तक के मध्य सीधा सम्पर्क और सम्बन्ध स्थापित होता है।

(4) संचारक के पास प्राप्तक को प्रभावित करने के लिए पर्याप्त अवसर होता है।

(5) संचारक और प्राप्तक शारीरिक व भावनात्मक दृष्टि से एक-दूसरे के करीब होते हैं।

(6) किसी बात पर असहमति की स्थिति में प्राप्तक को हस्तक्षेप करने का मौका मिलता है।

(7) प्राप्तक के बारे में संचारक पहले से बहुत कुछ जानता है।

(8) संदेश भेजने के अनेक तरीके होते हैं। जैसे- भाषा, शब्द, चेहरे की प्रतिक्रिया, भावभंगिमा, हाथ पटकना, आगे-पीछे हटना, सिर झटकना इत्यादि।

5.6.3 समूह संचार

(Group Communication)

नाम से ही स्पष्ट है कि वह संचार जो समूह में किया जाता है समूह संचार कहलाता है। समूह संचार को समझने के लिए आइए सबसे पहले आपको बताते हैं कि समूह क्या है? मनुष्य अपने जीवन में किसी

समूह का सदस्य अवश्य होता है। अपनी आवश्यकतओं की पूर्ति के लिए नये समूहों का निर्माण भी करता है। समूहों से पृथक होकर मानव अलग-थलग पड़ जाता है। समूह में जहां व्यक्तित्व का विकास होता है, वहीं सामाजिक प्रतिष्ठा बनती है। समूह के माध्यम से एक पीढ़ी के विचार दूसरे पीढ़ी तक स्थानांतरित होता है। जब कुछ लोग किस उद्देश्य के लिए एक-दूसरे से पारस्परिक सम्पर्क बनाते हैं और एक दूसरे को जानते पहचानते हैं तो उसे एक समूह कहते हैं। अत: जब 2 से अधिक व्यक्ति आपस में भावनाओं और विचारों का आदान प्रदान करते हैं तो उसे समूह संचार कहते हैं। उदाहरण के लिए क्लासरूम में पढ़ाई, एक साथ किसी बात पर हंसना, कवि सम्मेलन, भाषण यह सब समूह संचार का ही उदाहरण है।यह अंतर वैयक्तिक संचार का विस्तार है, जिसमें सम्बन्धों की जटिलता होती है। समूह संचार की प्रक्रिया को समझने के लिए समूह के बारे में जानना आवश्यक है। समूह संचार को जानने के लिए समूह से परिचित होना अनिवार्य है। मानव अपने जीवन काल में किसी-न-किसी समूह का सदस्य अवश्य होता है। अपनी आवश्यकतओं की पूर्ति के लिए नये समूहों का निर्माण भी करता है। समूहों से पृथक होकर मानव अलग-थलग पड़ जाता है। समूह में जहां व्यक्तित्व का विकास होता है, वहीं सामाजिक प्रतिष्ठा बनती है। समूह के माध्यम से एक पीढ़ी के विचार दूसरे पीढ़ी तक स्थानांतरित होता है। समूह को समाज शास्त्रियों और संचार शास्त्रियों ने अपने-अपने तरीके से परिभाषित किया है। कुछ प्रमुख परिभाषाएं निम्नलिखित हैं:-

मैकाइवर एवं पेज के अनुसार- समूह से तात्पर्य व्यक्तियों के किसी ऐसे संग्रह से है जो एक दूसरे के साथ सामाजिक सम्बन्ध स्थापित करते हैं।

ऑगबर्न एवं निमकॉफ के अनुसार- जब कभी दो या दो से अधिक व्यक्ति एक साथ मिलते हैं और एक दूसरे पर प्रभाव डालते हैं तो वे एक समूह का निर्माण करते हैं।

अत: जब कुछ लोग एक निश्चित उद्देश्य की पूर्ति के लिए एक-दूसरे से पारस्परिक सम्पर्क बनाते हैं तथा एक दूसरे के अस्तित्व को पहचानते हैं तो उसे एक समूह कहते हैं। इस प्रकार से निर्मित समूह की सबसे प्रमुख विशेषता यह होती है कि सभी लोग स्वयं को समूह का सदस्य मानते हैं। समाजशास्त्री चार्ल्स एच. कूले के अनुसार- समाज में दो प्रकार के समूह होते हैं। पहला, प्राथमिक **समूह (Primary Group) -** जिसके सदस्यों के बीच आत्मीयता, निकटता एवं टिकाऊ सम्बन्ध होते हैं। परिवार, मित्र मंडली व सामाजिक संस्था आदि प्राथमिक समूह के उदाहरण हैं। दूसरा, द्वितीयक समूह (Secondary Group)- जिसका निर्माण संयोग व परिस्थितिवश या स्थान विशेष के कारण कुछ समय के लिए होता है। ट्रेन व बस के यात्री, क्रिकेट मैच के दर्शक, जो आपस में विचार-विमर्श करते हैं, द्वितीयक समूह के सदस्य कहलाते हैं।

सामाजिक कार्य व्यवहार के अनुसार समूह को हित समूह और दबाव समूह में बांटा गया है। जब कोई समूह अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए कार्य करता है, तो उसे हित समूह कहा जाता है। इसके विपरीत जब अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अन्य समूहों या प्रशासन के ऊपर दबाव डालता है, तब वह स्वत: ही दबाव समूह में परिवर्तित हो जाता है। व्यक्ति समूह बनाकर विचार-विमर्श, संगोष्ठी, भाषण, सभा के माध्यम से विचारों, जानकारियों व अनुभवाओं का आदान-प्रदान करता है, तो उसे समूह संचार कहा जाता है। इसमें फीडबैक तुरंत मिलता है, लेकिन अंतर वैयक्तिक संचार की तरह नहीं। फिर भी, यह बहुत ही प्रभावी संचार है, क्योंकि इसमें व्यक्तित्व खुलकर सामने आता है। समूह के सदस्यों को अपनी बात कहने का पर्याप्त अवसर मिलता है। समूह संचार कई सामाजिक परिवेशों में पाया जाता है। जैसे- कक्षा, रंगमंच, कमेटी हॉल, बैठक इत्यादि। कई संचार विशेषज्ञों ने समूह संचार में सदस्यों की संख्या 20 तक मानते है, जबकि कई संख्यात्मक की बजाय गुणात्मक विभाजन पर जोर देते हैं। लिण्डग्रेन (1991) के

अनुसार, दो या दो से अधिक व्यक्तियों का एक दूसरे के साथ कार्यात्मक सम्बन्ध में व्यस्त होने पर एक समूह का निर्माण होता है।

समूह संचार और अंतर वैयक्तिक संचार के कई गुण आपस में मिलते हैं। समूह संचार कितना बेहतर होगा, फीडबैक कितना अधिक मिलेगा, यह समूह के प्रधान और उसके सदस्यों के परस्पर सम्बन्धों पर निर्भर करता है। समूह का प्रधान संचार कौशल में जितना अधिक निपुण तथा ज्ञानवान होगा। उसके समूह के सदस्यों के बीच आपसी सम्बन्ध व सामन्जस्य जितना अधिक होगा, संचार भी उतना ही अधिक बेहतर होगा। छोटे समूहों में अंतर वैयक्तिक संचार के गुण ज्यादा मिलने की संभावना होती है। बड़े समह की अपेक्षा छोटे समूह में संचार अधिक प्रभावशाली होता है, क्योंकि छोटे समूह के अधिकांश सदस्य एक-दूसरे से पूर्व परिचित होते हैं। सभी आपस में बगैर किसी मध्यस्थ के विचार-विमर्श करते हैं। सदस्यों को अपनी बात कहने का मौका भी अधिक मिलता है। समूह के सदस्यों के हित और उद्देश्य में काफी समानता होती है तथा सभी संदेश ग्रहण करने के लिए एक स्थान पर एकत्रित होते हैं। प्राप्तक पर संदेश का सकारात्मक या नकारात्मक प्रभाव उत्पन्न होता है, जिसे फीडबैक के रूप में संचारक ग्रहण करता है।

विशेषताएं : समूह संचार में :-

1. प्राप्तकों की संख्या निश्चित होती है, सभी अपनी इच्छा व सामर्थ के अनुसार सहयोग करते हैं,

2. सदस्यों के बीच समान रूप से विचारों, भावनाओं का आदान-प्रदान होता है,

3. संचारक और प्राप्तक के बीच निकटता होती है,

4. विचार-विमर्श के माध्यम से समस्याओं का समाधान किया जाता है,

5. संचारक का उद्देश्य सदस्यों के बीच चेतना विकसित कर दायित्व बोध कराना होता है,

6. फीडबैक समय-समय पर सदस्यों से प्राप्त होता रहता है, और

7. समस्या के मूल उद्देश्यों के अनुरूप संदेश सम्प्रेषित किया जाता है।

4. जनसंचार

(Mass Communication)

जनसंचार 2 शब्दों से मिलकर बना है। जन+संचार के योग से हुआ है। जन का अर्थ भीड़ होता है। समूह संचार का वृहद रूप है- जनसंचार। जिस तरह से न्यूज पेपर, रेडियो, टेलीविजन, केबल, इंटरनेट, वेब पोर्टल्स का प्रयोग बढ़ता गया, ठीक उसी तरह जनसंचार के क्षेत्र का विस्तार होता गया।

जनसंचार को अंग्रेजी भाषा (Mass Communication) कहते हैं, जिसका अभिप्राय बिखरी हुई जनता तक संचार माध्यमों की मदद से सूचना को पहुंचाना है। समाचार पत्र, टेलीविजन, रेडियो, सिनेमा, केबल, इंटरनेट, वेब पोर्टल्स इत्यादि अत्याधुनिक संचार माध्यम हैं। जनसंचार का अर्थ विशाल जनसमूह के साथ संचार करने से है। दूसरे शब्दों में, जनसंचार वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा बहुल रूप में प्रस्तुत किए गए संदेशों को जन माध्यमों के जरिए एक-दूसरे से अंजान तथा विषम जातीय जनसमूह तक सम्प्रेषित किया जाता है।

आधुनिक युग में जनसंचार काफी प्रचलित शब्द है। इसका निर्माण दो शब्दों जन+संचार के योग से हुआ है। जन का अर्थ नता अर्थात् भीड़ होता है। ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी के अनुसार, जन का अर्थ पूर्ण रूप से व्यक्तिवादिता का अंत है। गिन्सवर्ग के अनुसार, जनता असंगठित और अनाकार व्यक्तियों का समूह है जिसके सदस्य सामान्य इच्छाओं एवं मतों के आधार पर एक दूसरे से बंधे रहते हैं, परंतु इसकी संख्या इतनी बड़ी होती है कि वे एक-दूसरे के साथ प्रत्यक्ष रूप से व्यक्तिगत सम्बन्ध बनाये नहीं रख सकते हैं। समूह संचार का वृहद रूप है- जनसंचार। इस शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग १९वीं सदी के तीसरे दशक के अंतिम दौर में संदेश सम्प्रेषण के लिए किया गया। संचार क्रांति के क्षेत्र में तरक्की के कारण जैसे-जैसे समाचार पत्र, रेडियो, टेलीविजन, केबल,

इंटरनेट, वेब पोर्टल्स इत्यादि का प्रयोग बढ़ता गया, वैसे-वैसे जनसंचार के क्षेत्र का विस्तार होता गया। इसमें फीडबैक देर से तथा बेहद कमजोर मिला है। आमतौर पर जनसंचार और जनमाध्यम को एक ही समझा जाता है, किन्तु दोनों अलग-अलग हैं। जनसंचार एक प्रक्रिया है, जबकि जनमाध्यम इसका साधन। जनसंचार माध्यमों के विकास के शुरूआती दौर में जनमाध्यम मनुष्य को सूचना अवश्य देते थे, परंतु उसमें जनता की सहभागिता नहीं होती थी। इस समस्या को संचार विशेषज्ञ जल्दी समझ गये और समाधान के लिए लगातार प्रयासरत रहे। इंटरनेट के आविष्कार के बाद लोगों की सूचना के प्रति भागीदारी बढ़ी है तथा मनचाही सूचना प्राप्त करना और दूसरों को सम्प्रेषित करना संभव हो सका।

संचार विशेषज्ञों ने जनसंचार की निम्नलिखित परिभाषा दी है :-

लेक्सीकॉन यूनिवर्सल इनसाइक्लोपीडिया के अनुसार- कोई भी संचार, जो लोगों के महत्वपूर्ण रूप से व्यापक समूह तक पहुंचता हो, जनसंचार है।

बार्कर के अनुसार- जनसंचार श्रोताओं के लिए अपेक्षाकृत कम खर्च में पुनर्उत्पादन तथा वितरण के विभिन्न साधनों का इस्तेमाल करके किसी संदेश को व्यापक लोगों तक, दूर-दूर तक फैले हुए श्रोताओं तक रेडियो, टेलीविजन, समाचार पत्र जैसे किसी चैनल द्वारा पहुंचाया जाता है।

कार्नर के अनुसार- जनसंचार संदेश के बड़े पैमाने पर उत्पादन तथा वृहद स्तर पर विषमवर्गीय जनसमूहों में द्रुतगामी वितरण करने की प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया में जिन उपकरणों अथवा तकनीक का उपयोग किया जाता है उन्हें जनसंचार माध्यम कहते हैं।

कुप्पूस्वामी के अनुसार- जनसंचार तकनीकी आधार पर विशाल अथवा व्यापक रूप से लोगों तक सूचना के संग्रह एवं प्रेषण पर आधारित प्रक्रिया है। आधुनिक समाज में जनसंचार का कार्य सूचना प्रेषण, विश्लेषण, ज्ञान एवं मूल्यों का प्रसार तथा मनोरंजन करना है।

जोसेफ डिविटों के अनुसार- जनसंचार बहुत से व्यक्तियों में एक मशीन के माध्यम से सूचनाओं, विचारों और दृष्टिकोणों को रूपांतरित करने की प्रक्रिया है।

जॉर्ज ए.मिलर के अनुसार- जनसंचार का अर्थ सूचना को एक स्थान से दूसरे स्थान पहुंचाना है।

डी.एस. मेहता के अनुसार- जनसंचार का अर्थ जनसंचार माध्यमों जैसे- रेडियो, टेलीविजन, प्रेस और चलचित्र द्वारा सूचना, विचार और मनोरंजन का प्रचार-प्रसार करना है।

रिवर्स पिटरसन और जॉनसन के अनुसार -

- इसमें संदेश का प्रसार अधिक होता है।
- सामाजिक परिवेश जनसंचार को प्रभावित करता है तथा जनसंचार का असर सामाजिक परिवेश पर पड़ता है ।
- इसमें दो-तरफा चयन की प्रक्रिया होती है।
- जनसंचार जनता के अधिकांश हिस्सों तक पहुंचने के लिए उपयुक्त समय का चयन करता है ।
- जनसंचार जन अर्थात् लोगों तक संदेशों का प्रवाह सुनिश्चित करता है।

डेनिस मैकवेल के अनुसार -

- जनसंचार के लिए औपचारिक तथा व्यस्थित संगठन जरूरी है, क्योंकि संदेश को किसी माध्यम द्वारा विशाल जनसमूह तक पहुंचाना होता है।
- जनसंचार विशाल, अपरिचित जनसमूह के लिए किया जाता है।
- जनसंचार माध्यम सार्वजनिक होते हैं। इसमें भाषा व वर्ग के लिए कोई भेद नहीं होता है।
- श्रोताओं की रचना विजातीय होती है तथा वे विभिन्न संस्कृति, वर्ग, भाषा से सम्बन्धित होते हैं।

- जनसंचार द्वारा दूर-दराज के क्षेत्रों में एक ही समय पर सम्पर्क संभव है।
- इसमें संदेश का यांत्रिक रूप में बहुल संख्या में प्रस्तुतिकरण या सम्प्रेषण होता है।

जनमाध्यमों के संदर्भ में मार्शल मैक्लूहान ने लिखा है कि- माध्यम का अर्थ मध्यस्थता करने वाला या दो बिन्दुओं को जोडऩे से है। व्यावहारिक दृष्टि से संचार माध्यम एक ऐसा सेतु है जो संचारक और प्राप्तक के मध्य ट्यूब, वापर, प्रवाह इत्यादि से पहुंचता है।

विशेषताएं : जनसंचार की विशेषताएं काफी हद तक संदेश सम्प्रेषण के लिए प्रयोग किये गये माध्यम पर निर्भर करती है । जनसंचार माध्यमों की अपनी-अपनी विशेषताएं होती हैं। प्रिंट माध्यम के संदेश को जहां संदर्भ के लिए सुरक्षित रखा जा सकता है, भविष्य में पढ़ा जा सकता है, दूसरों को ज्यों का त्यों दिखाया व पढ़ाया जा सकता है, वहीं इलेक्ट्रॉनिक माध्यम के संदेश को न तो सुरक्षित रखा जा सकता है, न तो भविष्य में ज्यों का त्यों देखा तथा दूसरों को दिखाया जा सकता है। हालांकि इलेक्ट्रॉनिक माध्यम के संदेश को अनपढ़ या कम पढ़ा-लिखा व्यक्ति भी ग्रहण कर सकता है, लेकिन प्रिंट माध्यम के संदेश को ग्रहण करने के लिए पढ़ा-लिखा होना जरूरी है। इलेक्ट्रॉनिक माध्यम की मदद से संदेश को एक साथ हजारों किलोमीटर दूर फैले प्राप्तकों के पास एक ही समय में पहुंचाया जा सकता है, किन्तु प्रिंट माध्यम से नहीं। वेब द्रुतगति का जनसंचार माध्यम है। इसकी तीव्र गति के कारण देश की सीमाएं टूट चुकी हैं। इसी आधार पर मार्शल मैकलुहान ने की कल्पना की। इंटरनेट आधारित वेब माध्यम की मदद से सम्प्रेषित संदेश को प्रिंट माध्यम की तरह पढ़ा, इलेक्ट्रॉनिक माध्यम की तरह देखा व सुना जा सकता है। कम्प्यूटर के की-बोर्ड पर Ctrl +S (कीज) की मदद से भविष्य के लिए सुरक्षित रखा जा सकता है। जनसंचार की विशेषताएं निम्नलिखित हैं :-

1. विशाल भू-भाग में रहने वाले प्राप्तकों से एक साथ सम्पर्क स्थापित होता है,
2. समस्त प्राप्तकों के लिए संदेश समान रूप से खुला होता है,
3. संचार माध्यम की मदद से संदेश का सम्प्रेषण किया जाता है,
4. सम्प्रेषण के लिए औपचारिक व व्यवस्थित संगठन होता है,
5. संदेश सम्प्रेषण के लिए सार्वजनिक संचार माध्यम का उपयोग किया जाता है,
6. प्राप्तकों के विजातीय होने के बावजूद एक ही समय में सम्पर्क स्थापित करना संभव होता है,
7. संदेश का यांत्रिक रूप से बहुल संख्या में प्रस्तुतिकरण या सम्प्रेषण होता है, तथा
8. फीडबैक संचारक के पास विलम्ब से या कई बार नहीं भी पहुंचता है।

5.7 सारांश

संचार व्यक्ति समाज और देशों के मध्य संबंध स्थापित करने का सशक्त मध्यम है । संचार के चार प्रमुख रूप -

(1) अन्त वैयक्तिक

(2) अंतर वयक्तिक

(3) समूह

(4) जनसंचार

इसकी व्यापकता और महंता को इंगित करते है । वर्तमान में जनसंचार से ही विश्वग्राम की परिकल्पना सम्भव हो सकी है । जनसंचार माध्यम में संदेश को तीव्र गति से भेजने की क्षमता होती है । जनसंचार माध्यमो में टेलीविजन, रेडियो, समाचार-पत्र, पत्रिका, फिल्म, विडियो, सीडी,इन्टरनेट, वेब पोर्टल्स इत्यादि आते है । वस्तुत: संचार के द्वारा

एक दूसरे से अनजान और विषम जातीय समूह तक संदेश पेसरित होता है जिससे परस्पर संस्कृति का विस्तार जी होता है ।

5.8 अभ्यास प्रश्न

1. संचार का अर्थ एवं परिभाषा बताइये
2. संचार की प्रक्रिया को विस्तारपूर्वक समझाइये
3. संचार के उद्देश्य को विस्तारपूर्वक समझाइये
4. संचार के प्रकार को विस्तारपूर्वक समझाइये

5.9 संदर्भ ग्रन्थ

1. प्रसार शिक्षा –डा. वंदना जैन , डा पूनम कुमारी
2. प्रसार शिक्षा-डा बी. डी. हरपलानी
3. प्रसार शिक्षा- डा वृंदा सिंह

इकाई-6

सामुदायिक विकास

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 सामुदायिक विकास का अर्थ एवं परिभाषा

6.3 सामुदायिक विकास के उद्देश्य

6.4 सामुदायिक विकास कार्यक्रम के सिद्धांत

6.5 सामुदायिक विकास योजना के क्षेत्र

6.6 सामुदायिक विकास कार्यक्रम का संगठन एवं कार्य

6.7 भारत में सामुदायिक विकास योजना का मूल्यांकन

6.8 सारांश

6.9 अभ्यास प्रश्न

6.10 संदर्भ ग्रन्थ

6.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययनोंपरांत विद्यार्थी -

1. सामुदायिक विकास का अर्थ एवं परिभाषा के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
2. सामुदायिक विकास के उद्देश्य के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।

3. सामुदायिक विकास कार्यक्रम के सिद्दांत के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
4. सामुदायिक विकास योजना के क्षेत्र के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
5. सामुदायिक विकास कार्यक्रम का संगठन एवं कार्य के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।

6.1 प्रस्तावना

गाँव भारत की आत्मा है, भारतवर्ष की अधिकतर जनसंख्या गाँवों में ही रहती है। अत: यह स्वाभाविक ही था कि कोई इस प्रकार की योजना चलाई जाए जिससे की गाँवों का सम्पूर्ण विकास हो सकें। इसी उद्धेश्य को लेकर देश में सामुदायिक विकास कार्यक्रम की निंव 2 अक्टूबर, 1951 को पड़ी। यह एक ऐसा आन्दोलन है जो इस बात पर विश्वास करता है कि सामुदायिक के सभी लोग सक्रिय साझोदारी से अपने जीवन और रहन-सहन के तरीकों को बेहतर बना सकते है। समुदाय का हर व्यक्ति अपने विचारों व हितों के अनुकूल आर्थिक विकास कर सकें तो भूख, बीमारी, अशिक्षा, बेकारी तथा गरीबी को दूर किया जा सकता है। पंडित जवाहरलाल नेहरू ने सामुदायिक विकास के महत्व को बताते हुए कहा था कि- ''सामुदायिक विकास योजना सारे देश में उज्ज्वल और शक्तिमान चिंगारी है, जिससे शक्ति, आशा और उत्साह की किरण निकलती है।''

("Community project are the bright, vital and dynamic spark all over India from which radiate, says of energy, hope and enthusiasm.")

6.2 सामुदायिक विकास का अर्थ एवं परिभाषा

(Meaning and Definitions of Community Development)

सामुदायिक विकास दो शब्दों में मिलकर बना है- समुदाय और विकास। इस प्रकार इसका शाब्दिक अर्थ हुआ- समुदाय का विकास। अत: इनके अर्थो की व्याख्या इस प्रकार कर सकते है-

समुदाय (Community) -समुदाय का तात्पर्य लोगों के ऐसे समूह से लगाया जाता है जो एक निश्चित भौगोलिक क्षेत्र में निवास करते है तथा जीवन निर्वाह के लिए एक दूसरे में रूचि लेते है। समुदाय एक ऐसा संगठन है, बल्कि सामाजिक संगठन है, जो परिवार तथा राज्य के बीच की कड़ी है।

समुदाय सामाजिक प्रणाली का केन्द्र है जिसके अन्तर्गत वे सामाजिक संस्थायें आती है, जो आपस में क्रिया-प्रतिक्रिया करती है, एक-दूसरे की आवश्यकताओं के विषय में विचार-विमर्श करती है और व्यक्तियों की आधारभूत आवश्यकताओं की पूर्ति करती है। इन्हीं संस्थाओं के कार्यो के कारण एक-दूसरे से सम्बन्धित होने का भाव विकसित होता है तथा एक साथ रहकर एक साथ कार्य करने की क्षमता विकसित होती है। स्पष्ट तौर पर हम कह सकते है कि समुदाय एक वृहत्तर सामाजिक व्यवस्था का एक भाग होता है। यह एक ऐसा समूह होता है जिसके सदस्यों के बीच बात-व्यवहार, आचार-विचार, विधि-विधान तथा रीति-रिवाज आदि अन्तर्सम्बन्धित होते है।

समुदाय के आवश्यक तत्वों को हम निम्नलिखित तरीकों द्वारा ठीक प्रकार समझ सकते है-

समुदाय- 1-व्यक्तियों का समूह + 2-निश्चित भू-भाग + 3-सामुदायिक भावना + 4- आत्मनिर्भरता

विकास (Development) - विकास से तात्पर्य बुद्धि अथवा परिपक्वीकरण से है। इसके अन्तर्गत नियमित तथा क्रमिक परिवर्तन होते है। मेकाइवर के अनुसार- उत्तरोत्तर दिशा में होने वाले बुद्धिपरक परिवर्तन ही विकास है

विकास शब्द से अभिप्राय सामाजिक सम्बन्धों की उन निश्चित दशाओं में विकास लाने से है जो गुणात्मक तौर पर विकास का कार्य करें। इस शब्द का प्रयोग जब किसी समुदाय में किया जाता है तो इसका अर्थ उस समुदाय की योग्यता एवं कार्यक्षमता को बढ़ाना है। अत: सामुदायिक विकास का अर्थ किसी समुदाय के ऐसे सदस्य की योग्यता

एवं कार्यक्षमता को बढ़ाना है जो किसी एक विशेष क्षेत्र में रहकर एक-दूसरे पर निर्भर हों।

सामुदायिक विकास (Community Development) - सामुदायिक विकास से तात्पर्य- समूह के जो सदस्य एक ही स्थान पर रहते हों तथा एक-दूसरें से आपसी सम्बन्धों से बँधे हो, एक-दूसरे पर निर्भर हो, उनकी योग्यताओं तथा गुणों के विकास से है। सामुदायिक विकास एक समुदाय के व्यक्तियों में निरंतर चलने वाली सामाजिक प्रक्रिया है। यह समुदाय के विभिन्न सदस्यों की सर्वमान्य तथा सामूहिक आवश्यकताओं को परिभाषित करता है । सामुदायिक विकास के लिए व्यक्ति, व्यक्तिगत तथा सामूहिक रूप् सक योजनाएँ तैयार कर अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करते है तथा समस्याओं को हल करते है। सदस्य अपनी योजनाओं का क्रियान्वयन अपने ही संसाधनों के अधिकतम उपयोग के द्वारा करते है। आवश्यकता पड़ने पर ही समुदाय से बाहर के संसाधनों, सेवाओं तथा वस्तुओं के माध्यम से करते है।

हम कह सकते हैं कि सामुदायिक विकास एक ऐसा कार्यक्रम है जिससे किसी समुदाय के लोग-

(i) अपनी आवश्यकता स्वयं निर्धारित करते है।

(ii) अपने कार्य करने के लिए स्वयं संगठित होते है।

(iii) अपनी समस्याओं के निदान के लिए स्वयं कार्य योजना बनाते हैं।

(iv) इन योजनाओं को कब-कैसे लागू किया जाए, इसकी योजना बनाते है।

(v) अपनी समस्याओं के निदान के लिए यथा सम्भव अपने ही संसाधनों का प्रयोग करते है ।

(vi) आवश्यकता पड़ने पर समुदाय के बाहर के लोगों की सेवा और संसाधनों का लाभ उठाते है।

1. अत: सामुदायिक विकास एक शान्तिप्रिय आन्दोलन है जो सामुदायिक जीवन-स्तर को बढ़ाता हैं।

परिभाषा (Definitions)

सामुदायिक विकास की परिभाषा निम्न प्रकार से की जा सकती है-

डॉ-टेलर के अनुसार- सामुदायिक विकास तकनीकी रूप से सहायता प्राप्ति और स्थानीय रूप से व्यवस्थित स्वावलम्बित कार्यक्रम है।

कार्ल टेलर (1965) के अनुसार-सामुदायिक विकास वह विधि है जिसके द्वारा ग्रामवासी स्वयं अपनी आर्थिक और सामाजिक स्थितियों को सुधारने के उद्धेश्य से चलाये जाने वाले कार्यक्रमों में संलग्न होते है और इस प्रकार वे अपनी राष्ट्रिय विकास के कार्यक्रम में प्रभावी कार्यकारी दल के रूप में कार्य करते है।

लोसबो के शब्दों में -सामुदायिक विकास योजना गहन विकास की समस्या का संगठित तथा नियोजित ढंग है।

कैम्ब्रिज सम्मेलन -यह सम्पूर्ण समुदाय के लिए जीवनयापन के अधिक अच्छे तरीकों को, अगर सम्भव हो तो समुदाय को अपनी पहल पर, प्रोन्नत करने के लिए स्वरूपित किया गया एक आन्दोलन है।

योजना आयोग के अनुसार-सामुदायिक विकास स्वयं जनता के प्रयत्नों द्वारा ग्रामीण जीवन का सामाजिक और आर्थिक रूपान्तर करने का एक प्रयत्न है।

संक्षेप में सामुदायिक विकास से तात्पर्य है कि समुदाय का विकास, समुदाय के द्वारा उसी की प्रेरणा से किया जाए।

सामुदायिक विकास एक साधन है –इसके माध्यम से समुदाय के व्यक्तियों को अपने संसाधनों तथा योग्यताओं के उपयोग द्वारा अपने विकास के लिए बनाये गये कार्यक्रमों में सहायता मिलती है।

(2) **सामुदायिक विकास एक कार्यक्रम है (C.D. is a programme)-**इसके द्वारा ग्रामीण कल्याण के लिए बनायी गई योजनाओं को क्रियान्वित किया जाता है।

(3**) सामुदायिक विकास एक आन्दोलन है (C.D. is a Movement)-**समुदाय की प्रगति के लिए एक आन्दोलन है। इससे समुदाय में आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक उत्थान होता है।

(4) **सामुदायिक विकास एक विधि है (C.D. is a Method)-** यह एक ऐसी विधि है जिसके द्वारा व्यक्ति स्वयं के साधनों का प्रयोग करके विकसित होता, विकास करता है।

(5) **सामुदायिक विकास एक प्रक्रिया है (C.D. is a Process)-** यह परम्परागत जीवन स्तर से उठकर प्रगतिशील जीवन की ओर अग्रसर होने की प्रक्रिया है।

6.3 सामुदायिक विकास के उद्देश्य

ग्रामीण जीवन के उत्थान के लिए शुरू की तीन पंचवर्षीय योजनाओं में योजना आयोग (Planning Commission) द्वारा सामुदायिक विकास कार्यक्रम पर जोर दिया गया, क्योंकि इस सत्य को स्वीकारना पड़ा कि भूख, बीमारी, अज्ञानता, अशिक्षा और बेकारी ये पाँच दैत्य है जो यहाँ जनता के विकास में बाधक है। इसे दूर करने के उद्देश्य से ही इस बात पर जोर दिया जाने लगा कि समुदाय को एक शक्ति के रूप में मानकर इसका विकास करना आवश्यक है।

सामुदायिक विकास और सहकारिता मंत्रालय, भारत सरकार ने (1962) में सामुदायिक विकास के लिए निम्नलिखित कार्यक्रम निर्धारित किये है-

- प्रत्येक गाँव में प्रभावकारी पंचायत, सहकारी समितियाँ और विद्यालय की सुविधा मुहैया कराना।
- ग्रामीण संस्थाओं द्वारा परिवार, गाँव, प्रखण्ड और जिलों में समग्र और बहुमुखी योजना बनाना। इसके अन्तर्गत निम्नलिखित योजनाएँ निर्धारित है-

  (क) कृषि उत्पादन बढ़ाना।

(ख) चलित ग्रामीण शिल्पकला और उद्योगों को सुधारना और नये उद्योगों को संगठित करना ।

(ग) आवश्यक स्वास्थ्य सेवायें प्रदान करना और प्रदत सेवाओं में सुधार कराना।

(घ) बच्चों की शिक्षा की व्यवस्था करना और प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम प्रदान करना।

(ड) ग्रामीण जनता के लिए मनोरंजन की सुविधायें प्रदान करना।

(च) आवास और पारिवारिक जीवन की स्थिति में सुधार करना।

(छ) ग्रामीण युवाओं और महिलाओं के लिए उन्नत कार्यक्रम प्रदान कराना ताकि उनका चहुँमुखी विकास हो सकें।

(ज) सिंचाई, यातायात, आवास, प्रशिक्षण, क्रय-विक्रय केन्द्रों की व्यवस्था कराना।

(झ) आत्मनिर्भरता का विकास।

(¥) ग्रामीण मनोवृत्ति में परिवर्तन।

(ट) ग्रामीण नेतृत्व का विकास कराना।

पंडित नेहरू ने सामुदायिक विकास के निम्न उद्देश्य बताये है-

(1) ग्रामीण समुदाय का बहुमुखी विकास करना।

(2) व्यक्तियों में सामुदायिक भावना पैदा करना।

(3) जिम्मेदार, आत्मविश्वासी, आत्मनिर्भर समूहों का विकास करना।

श्री वी-टी-कृष्णामाचारी ने सामुदायिक विकास के उद्देश्यों को निम्न प्रकार बताया है-

(1) ग्रामीण जनता को रोजगार दिलाना।

(2) कृषि-उत्पादन में वृद्धि करना।

(3) सहकारिता का विकास करना।

(4) सामुदायिक विकास के लिए सामुदायिक संसाधनों का अधिकतम प्रयोग करना।

साधारणतया सामुदायिक विकास के उद्देश्यों को तीन भागों में बाँटा जा सकता है-

- सामान्य उद्देश्य (General objectives)
- विशेष उद्देश्य (Specific objectives)
- आधारभूत उद्देश्य (Fundamental objectives)

A. सामान्य उद्देश्य (General Objectives)

(i) ग्रामीण उद्योग-धन्धों का विकास करना।

(ii) मनोरंजन की व्यवस्था करना।

(iii) शिक्षा की व्यवस्था करना।

(iv) आवास और अस्पताल की व्यवस्था करना।

(v) ग्रामीण परिवारों का चहुँमुखी विकास करना।

B. विशेष उद्देश्य (Specific Objectives)

(1) कृषि व्यवस्था में सुधार।

(2) ग्रामीण समाज में विराजमान समस्याओं का दूर करना।

(3) ग्रामीण संसाधनों का विकास करना।

(4) नयी खोजों को गाँव तक पहुँचाना तथा उन पर अमल करना।

(5) ग्रामीण नेतृत्व का विकास करना।

(6) सामाजिक व्यवस्था और प्रक्रियाओं में परिवर्तन लाना।

(7) स्थानीय साधनों का इस प्रकार उपयोग करना ताकि ग्रामीण जीवन विकसित हो।

(8) जनता में राष्ट्रिय की भावना जागृत करना और राष्ट्रिय योजनाओं के प्रति जागरूकता बढ़ाना।

(9) सहकारिता के आधार पर समस्याओं का हल करना।

(10) नई जानकारियों के प्रति रूचि पैदा करना।

C. आधारभूत उद्देश्य (Fundamental Objectives)

(1) विशेषज्ञों की सहायता से ग्रामीणों को यह बताना कि वह अपने सीमित साधनों का प्रयोग इस प्रकार करें कि उनकी समस्याएँ दूर हो जाएँ।

(2) ग्रामीणों को रोजगार दिलाना।

(3) जनता की सुख-सुविधाओं का ध्यान रखना और सुख-सुविधाएँ पहुँचाना।

अत: सामुदायिक विकास का प्रमुख उद्देश्य ग्रामीणों का सर्वांगीण विकास है। इसके अन्तर्गत कृषि, पशुपालन, सिंचाई, सहकारिता, स्वास्थ्य/शिक्षा, ग्राम पंचायत तथा ग्रामीण जीवन के सभी पक्ष सम्मिलित किये जाते है।

संक्षेप में, सामुदायिक विकास का उद्देश्य ग्रामीण जनसमुदाय को आत्मनिर्भर बनाना, कृषि एवं ग्रामीण उद्योग धंधों का विकास करना तथा उनके जीवन स्तर में सुधार लाना है, जिससे वे भी देश के पुनर्निर्माण में अपना योगदान दे सकें और कल्याणकारी राज्य की ओर अपने कर्त्तव्यों के प्रति जागृत हो सकें।

6.4 सामुदायिक विकास कार्यक्रम के सिद्धान्त

सामुदायिक विकास कार्यक्रम के सिद्धान्त निम्नलिखित है-

(1) अनुभूत आवश्यकताओं एवं रूचियों का सिद्धान्त (Principle of Felt needs and Interests)-जनता को

प्रयत्नषील होने के लिए आवश्यक है कि कार्यक्रम जनता की अनुभूत आवश्यकताओं के अनुरूप हो, नहीं तो जनता प्रयत्नशील नही होगी और कार्यक्रम में सहयोग नही करेगी। हर व्यक्ति अपने आवश्यकताओं के प्रति सर्तक रहता है और उसकी पूर्ति के लिए जिज्ञासु रहता है। लोगों को जब उनकी समस्याओं के हल मिलते है तथा उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति होती है, तभी कोई भी कार्यक्रम सफल समझा जाता है।

(2) जड़ से आरम्भ करने का सिद्धान्त (Principle of Grass-root Begining)-जिस समुदाय या गाँव में ये कार्यक्रम चलाये जा रहें हों उस समुदाय या गाँव के सभी सदस्यों को इस कार्यक्रम के सम्बन्ध में सम्पूर्ण तथा विस्तृत जानकारी (जैसे किस प्रकार का कार्यक्रम चलाया जा रहा है, कितने व्यय में क्या हो रहा है, क्या हो चुका है, क्या होने जा रहा है तथा इसका परिणाम उनके लिए क्या होगा आदि) देना होगा।

(3) नमनीयता का सिद्धान्त (Principle of Flexibility)-उस ग्राम सामुदायिक संगठन, जिस पर गाँव में सामुदायिक विकास चलाने का दायित्व है, को अपनी संगठनात्मक प्रक्रियाओं (Organizational Process) को लोचपूर्ण या नमनीय बनाये रखना चाहिए। इससे इस संगठन को विपरीत परिस्थितियों के साथ सामंजस्य स्थापित करने में सुविधा होती है।

(4) सहयोग का सिद्धान्त (Principle of Co-operative)- कार्यक्रम के सफल निष्पादन के लिए आवश्यक है कि कार्यक्रम से जुड़े अधिकारियों, कार्यकर्ताओं तथा ग्रामीणों के बीच उत्तम सामंजस्य तथा प्रभावी रूप से काम करने वाली संचार-व्यवस्था का उपयोग किया जाए। इससे इन लोगों के बीच परस्पर निकट का और गहन सम्बन्ध बना रहता है। इससे एक-दूसरे की भावनाओं, विचारों, कठिनाईयों, आवश्यकताओं तथा समस्याओं को भली-भाँति समझने का अवसर मिलता है तथा उनके बीच

मिलजुल कर काम करने (Working jointly) की संस्कृति पनपती है।

(5) सहभागिता का सिद्धान्त (Principle of Participation)- सामुदायिक विकास कार्यक्रमों को चलाने का दायित्व जिस ग्राम संगठन पर हो उस संगठन को अपने कार्यक्रमों को सरलता से निशपादित करने में किसी सरकारी, अर्द्ध-सरकारी एवं ऐच्छिक संस्था के सहयोग को स्वीकार करना चाहिए तथा बदलें में उन्हें भी अपना प्रभावी तथा सक्रिय सहयोग उपलब्ध कराना चाहिए। सहभागिता के फलस्वरूप लोगों में कार्यक्रमों के प्रति आस्था बढ़ती है और उनके वयवहार में परिवर्तन सहज-स्वाभाविक रूप से आने लगता है। सामुदायिक विकास का कोई भी कार्यक्रम तब तक सफल नही हो सकता, जब तक किसी ना किसी रूप में स्थानीय लोगों की सहभागिता ना हो।

(6) स्थानीय नेतृत्व का सिद्धान्त (Principle of Local Leadership)- सामुदायिक विकास कार्यक्रम प्रारम्भ करने के साथ-साथ उस क्षेत्र में क्षेत्रीय या स्थानीय नेतृत्व भी विकसित किया जाना चाहिए। एक विकसित नेतृत्व से कार्य निष्पादन सफल होता है। ग्रामीणों का विश्वास अपने नेता पर अधिक होता है। वे उसकी बात स्वीकारने में नही हिचकिचाते। उन्नत प्रकार के बीज, किसी नये कृषि संयंत्र या उर्वरक आदि के विषय में जब उनका अपना आदमी बोलता है तो प्रभाव दूसरा पड़ता है। गाँवों में नये विचार प्रस्तुत करने में ग्रामीण नेतृत्व का महत्वपूर्ण योगदान रहता है।

(7) धीमा किन्तु सतत् विकास का सिद्धान्त (Principle of Slow but Continuous Development) - सामुदायिक विकास इस बात पर निर्भर है कि इसके अन्तर्गत जो भी कार्यक्रम हो रहें है उनकी गति कैसी है? शीघ्रता से सफलता नही भी मिल सकती है। सर्वप्रथम समुदाय की समस्या देखनी चाहिए, इस सम्बन्ध में बातचीत करनी चाहिए। बातचीत के बाद समस्या के समाधान

के लिए योजना बनानी चाहिए। योजना चलाने के लिए लोगों में इच्छा जागृत करनी चाहिए जिससे कि वे नये कार्यक्रम को कर सकें।

(8) सांस्कृतिक विभेद्य का सिद्धान्त (Principle of Cultural Difference)- सामुदायिक कार्यक्रम समुदाय के सांस्कृतिक जीवन, परम्पराओं आदि को ध्यान में रखकर चलाना चाहिए। ऐसा सम्भव है कि कोई भी योजना एवं पद्धति किसी एक क्षेत्र के अनुरूप है तो दूसरी क्षेत्र में असफल या अनुपयुक्त। क्षेत्र परिवर्तन होने पर निवासियों के "शैक्षणिक स्तर, बौद्धिक स्तर, रूचियों और मान्यताओं में भी अन्तर देखें जा सकते है।

(9) सांस्कृतिक परिवर्तन का सिद्धान्त (Principle of Cultural Change)- सामुदायिक विकास कार्य द्वारा सांस्कृतिक परिवर्तन आना आवश्यम्भावी है। सांस्कृतिक परिवर्तन को शिक्षा, यातायात के साधन, औद्योगीकरण, आर्थिक सम्पन्नता, राजनीतिक चेतना जैसे तत्व प्रभावित करते है जो सामुदायिक विकास के अंग भी है। इन कार्यक्रमों के माध्यमों से वह बाहरी दुनिया, अन्य सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवेश से परिचित ही नही होता, वरन् उन्हें अपनाता भी है। इस प्रकार व्यक्ति के रहन-सहन, रीति-रिवाज, परम्पराएँ, मान्यताएँ सभी में परिवर्तन आते है जो सांस्कृतिक परिवर्तन के द्योतक है।

(10) स्थानीय दशा की अनुसारता का सिद्धान्त (Principle of Local Condition Base)- कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए स्थानीय, भौतिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक दशाओं का अध्ययन ठीक प्रकार होना आवश्यक है। विपरीत भौगोलिक परिस्थियों के फलस्वरूप अनेक विकास कार्यक्रम अवरूद्ध हो जाते है। हमारे देश में अभी भी अनेक गाँव ऐसे है जहाँ पानी की सुविधा उपलब्ध नही। ऐसी दशा में वे गाँवों के मुख्य धंधें कृषि कार्य का निष्पादन तो कर ही नही सकते। ऐसे में इन क्षेत्रों में कृषि योजना बनाते समय, पानी की व्यवस्था करना ही मुख्य कार्य हो जाता है। पशुधन, ट्रेक्टर, उर्वरक, उन्नत बीजों की उपलब्धि होने पर ही उन्नत खेती की कल्पना की जा सकती है । उदाहरणार्थ,

बिजली की उपलब्धि होने पर ही मोटर-पम्प का उपयोग किया जा सकता है।

(11) स्थानीय संसाधनों के प्रयोग का सिद्धान्त (Principle of Utilization of Local Resources)-सामुदायिक विकास तभी सम्भव है जब स्थानीय मानवीय एवं भौतिक साधनों को पहचानकर उनका भरपूर उपयोग किया जाए। गाँव की युवा शक्ति का उपयोग खेती के साथ-साथ सड़क-निर्माण, भवन निर्माण, बाल-शिक्षण, प्रौढ़ शिक्षण, स्वास्थ्य केन्द्र के रखरखाव आदि में किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त उन्हें लघु उद्योगों में लगाकर उनके आय के साधनों का विस्तार किया जा सकता है। इससे ग्रामीणों के खाली समय का उपयोग ही नही होगा, वरन् उनकी आमदनी में भी बढ़ोतरी होगी।

(12) प्रजातांत्रिक प्रकृति का सिद्धान्त (Principle of Democratic Nature)- सामुदायिक विकास का ढाँचा पूर्णत: प्रजातांत्रिक है। इसमें हर व्यक्ति के विकास की बात की जाती है। हर व्यक्ति विकास कार्यक्रम का अंग समझता है। योजनाओं का निर्माण, कार्यान्वयन किस प्रकार किया जाए कि आधिकाधिक लाभ की प्राप्ति हो सके- इसका विचार सब मिल-बैठकर करते है। इसके माध्यम से ग्रामीण पंचायत को भी एक स्वस्थ स्वरूप मिलता है।

(13) राष्ट्रिय नीतियों एवं कार्यक्रम की अनुसारता का सिद्धान्त (Principle of Accordanee with National Policies & Programmes)-समुदाय के उत्थान के लिए सरकारी स्तर पर अनेक नीतियाँ निर्धारित की जाती है तथा योजनाएँ बनायी जाती है। ये योजनाएँ मुख्य रूप से ग्रामीण उद्योग धन्धों, साक्षरता कार्यक्रम, स्वास्थ्य एवं स्वच्छता, गृह- निर्माण, मजदूरी-दर, मातृ एवं शिशु कल्याण आदि से सम्बन्धित होती है। सामुदायिक विकास तभी सम्भव है जब इसके कार्यक्रम सरकार की नीतियों को ध्यान में रखकर बनाये जाए। इस प्रकार ग्रामीण समुदाय देश की मुख्य धारा से जुड़ पायेगा।

(14) मूल्यांकन का सिद्धान्त (Principle of Evaluation) - सामुदायिक विकास कार्यक्रमों का लगातार मूल्यांकन होते रहना चाहिए, क्योंकि इससे कार्यक्रमों की सफालता या असफलता का

पता चल जायेगा, जिससे इनको दूर करके कार्यक्रम को सुचारू रूप से चलाया जा सके।

ग्रामीण क्षेत्रों में सर्वांगीण विकास के सामुदायिक विकास कार्यक्रम एक महत्वपूर्ण देन है। इसका भरपूर लाभ उठाने के लिए आवश्यक है कि इसके सिद्धान्तों का पालन किया जाए।

नगर सामुदायिक कल्याण कार्यक्रम का विस्तार

(Extension of Urban Community Development Programme)

किसी समुदाय की खुषहाली और उन्नति के लिए राज्य द्वारा अपनाये जाने वाले विभिन्न आदेशों में सामुदायिक कल्याण के लिए चलायी जा रही योजनाओं और कार्यक्रमों का विशेष महत्व है। नगर व ग्रामीण दोनों ही समाजों के उत्थान के लिए सामुदायिक कल्याण के कार्यक्रम बनाते है। नगर सामुदायिक कल्याण कार्यक्रमों का अब बड़े पैमाने पर विस्तार हो गया है। नगर सामुदायिक कार्यक्रमों में समाज के उन विभिन्न वर्गो को सम्मिलित कर लिया गया है, जो अभी तक इन सेवाओं से वंचित थे। नगर सामुदायिक विकास कार्यक्रम निम्नलिखित है-

(i) केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड के द्वारा कल्याण विस्तार योजनायें।

(ii) फोर्ड फाउण्डेशन की मदद से दिल्ली और अहमदाबाद की नगरपालिकाओं द्वारा।

(iii) जमशेदपुर में टाटा आपरन एण्ड स्टील कम्पनी के द्वारा।

(iv) भारत सेवक समाज की मदद से योजना आयोग के द्वारा ‘समाज-नागरिक कार्यक्षेत्र’ द्वारा।

(v) बड़ौदा में अमेरिकन फ्रेण्ड्स सर्विस कमेटी के द्वारा।

(vi) राज्य सरकारों और स्थानीय नगरपालिकाओं के सहयोग से स्वास्थ्य मंत्रालय द्वारा 13 शहरों में 14 कार्यक्रमों द्वारा।

(vii) सर्विस सिविल इन्टरनेशनल और स्वालोज (Swollows) ऑफ स्वीडन की मदद से मद्रास की गन्दी बस्तियों का कल्याण

6.5 सामुदायिक विकास योजना का क्षेत्र

भारत में चलाए जा रहे सामुदायिक विकास कार्यक्रम का प्रधान क्षेत्र है- कृषि। इस कृषि उद्योग को अधिक-से-अधिक विकसित करना, विज्ञान पर आधृत करना, उन्नत करना तथा राष्ट्र के लिए अधिक-से-अधिक लाभप्रद बनाना आदि इसके क्षेत्र में शामिल है। इसके अतिरिक्त कृषि से ही जुड़े अन्य क्षेत्र (जैसे उत्तम प्रकार के बीज, उर्वरक, कीटनाशक तैयार करना एवं उनका सुरक्षित प्रयोग करना, उन्नत प्रकार के वैज्ञानिक आधार पर विकसित कृषि उपकरण तैयार करना, कृषि उत्पादों का संग्रहण, परिरक्षण तथा क्रय-विक्रय करना तथा पशुधन की देख-रेख करना आदि) भी इस क्षेत्र के अन्तर्गत ही आते है। लघु एवं कुटीर उद्योग (जैसे मछलीपालन, मुर्गीपालन एवं भेड़पालन तथा हस्तशिल्प कला-उद्योग आदि) को विकसित एवं प्रचलित करने का काम इसी क्षेत्र के अन्तर्गत आता है। इसी प्रकार संचार, यातायात, परिवहन, जन-स्वास्थ्य, स्वच्छता एवं शुचिता, शिक्षा, रोजगार एवं आवास की व्यवस्था करना इसी के अन्तर्गत आता है। इसके अतिरिक्त मातृकल्याण एवं शिशु विकास, महिला कल्याण एवं उत्थान, बाल विकास तथा जन-कल्याण आदि इसके क्षेत्र में शामिल है।

6.6 सामुदायिक विकास कार्यक्रम का संगठन एवं कार्य

भारत में सामुदायिक विकास कार्यक्रम केन्द्रीय एवं प्रान्तीय या राज्य स्तर पर चलाए जाते है। केन्द्र एवं राज्य मंत्रिपरिषद में सामुदायिक विकास के लिए मंत्री होते है। केन्द्र, राज्य, प्रमण्डल, मण्डल,

अनुमण्डल, प्रखण्ड एवं ग्राम स्तर पर इसके कार्यक्रमों को संचालित करने के लिए संगठन होता है। केन्द्र के सामुदायिक विकास कार्यक्रम सहकारिता एवं पंचायत मंत्रालय द्वारा संचालित एवं मूल्यांकित किया जाता है। राज्य के सामुदायिक विकास मंत्रालय की सहायता करने के लिए एक गैर-सरकारी सामुदायिक विकास समिति भी होती है। राज्य का मुख्यमंत्री इस समिति का अध्यक्ष और राज्य का विकास आयुक्त इस समिति का पदेन सचिव होता है। इसके अतिरिक्त इसमें कुछ मनोनीत सदस्य भी होते है। जिला स्तर पर जिला परिषद तथा प्रखण्ड या अंचल स्तर पर प्रखण्ड विकास पदाधिकारी अथवा अंचलाधिकारी द्वारा सामुदायिक विकास कार्यक्रमों का संचालन एवं मूल्यांकन किया जाता है। ग्राम स्तर पर कार्यकर्ता (VLW) द्वारा कार्य संचालित किया जाता है।

कार्य (Functions)

सामुदायिक विकास कार्य कई स्तर पर होता है। इससे कार्य का निष्पादन सुगमतापूर्वक होता है। कार्यों का संचालन एवं प्रबन्ध केन्द्र, राज्य, जिला, विकासखण्ड व गाँव के स्तर पर अलग-अलग सरकारी व गैर-सरकारी संगठनों द्वारा किया जाता है जिसका विवरण निम्नवत् है-

(1) केन्द्र स्तर (Central Level)-इस स्तर पर सामुदायिक विकास कार्य को चलाने के लिए गैर- सरकारी संगठन के रूप में एक केन्द्रीय समिति होती है जिसे राष्ट्रिय विकास परिषद (National Development Council) कहते है। इस परिषद का मुख्य कार्य पूरे देश में आर्थिक विकास के कार्यक्रमों का नियोजन करना व चलाना होता है। इस परिषद को समय-समय पर सलाह देने के लिए एक सलाहकार समिति होती है। इस सलाहकार समिति के सदस्य कृषि, वित्त, स्वास्थ्य, खाद्य, शिक्षा व वैज्ञानिक अनुसंधान मंत्रालयों के मंत्री व सचिव होते है। मंत्रालय में मंत्री, उपमंत्री एवं सेक्रेटरी व डिप्टी सेक्रेटरी संयुक्त रूप से विकास कार्यो के लिए जिम्मेदार होते है। `

अत: सामुदायिक विकास के लिए उपरोक्त दोनों संगठन ही

संयुक्त रूप से कार्य करते है। इस स्तर पर मुख्य रूप से कार्य का नियोजन, साधनों की व्यवस्था व आवश्यक दिशा-निर्देशन व समन्वय ही होता है।

(2) राज्य स्तर (State Level)- इस स्तर पर सामुदायिक विकास के कार्यों को चलाने के लिए गैर-सरकारी संगठन के रूप में राज्य विकास परिषद (State Development Council) होती है। इस परिषद का अध्यक्ष प्रदेश का मुख्यमंत्री होता है। अन्य सदस्य कृषि, शिक्षा, वित्त, सहकारी व सिंचाई मंत्रालय के मंत्री होते है। राज्य विकास परिषद का मुख्य कार्य पूरे राज्य में विकास के कार्यो को चलाना और संचालित करना।

(3) जिला स्तर (District Level)-जिला स्तर पर, गैर-सरकारी संगठन के रूप में विकास कार्यो को करने के लिए जिला परिषद (District Board) होती है। इसका एक अध्यक्ष होता है जिसका चुनाव होता है। सम्पूर्ण जिले की ग्राम सभा वोट बैंक होती है। पचास हजार (50,000) ग्रामसभा के सदस्यों की संख्या पर एक सदस्य का चुनाव होता है। इन चुने हुए सदस्यों द्वारा जिला परिषद के अध्यक्ष का चुनाव होता है। इस परिषद का मुख्य कार्य, जिले के स्तर पर सामुदायिक विकास कार्यक्रम का कार्यान्वयन करना, ब्लॉक समितियों के कार्यों का अवलोकन व समय-समय पर परामर्श देना होता है। जिलाधिकारी, जिला परिषद का सचिव होता है। सरकारी संगठन के रूप में सामुदायिक विकास के कार्यो को चलाने के लिए जिला स्तर पर जिला नियोजन समिति (District Planning Committee) होती है। इसका सचिव जिला नियोजन अधिकारी (D.P.O.) होता है। जिला स्तर के अधिकारी विकास के कार्यों का प्रबन्ध संचालन करते है। मुख्य दायित्व जिलाधिकारी का होता है। उपर्युक्त अधिकारी जिलाधिकारी को हर प्रकार से सहायता करते है।

(4) ब्लॉक स्तर (Block Level)-गैर-सरकारी संगठन के रूप में ग्राम विकास के कार्यो को चलाने के लिए ब्लॉक विकास समिति

(Block Development Committee) होती है । इस समिति के अध्यक्ष को ब्लॉक प्रमुख (Block Pramukh) कहते है। ब्लॉक की सभी ग्रामसभाओं के सदस्य, ब्लॉक विकास समिति के चुनाव के लिए वोट करते है। प्रत्येक ग्रामसभा की दो हजार (2,000) की संख्या पर समिति के एक सदस्य का चुनाव होता है। चुने सदस्य ब्लॉक प्रमुख का चुनाव करता है।

सरकारी संगठन के रूप में ग्राम विकास के कार्यो को चलाने के लिए ब्लॉक स्तर पर, सामुदायिक विकास ब्लॉक ऑफिस (C.B. Block Office) होता है। ब्लॉक विकास पदाधिकारी विकास के कार्य ठीक से चलाने के लिए काम करते है। इस स्तर पर कार्यक्रम को

कार्यान्वित करना, मूल्यांकन करना, सरकारी व गैर-सरकारी संगठनों का मुख्य कार्य है।

(5) ग्राम स्तर (Village Level)-ग्राम स्तर पर गैर-सरकारी संगठन के रूप में ग्राम पंचायत (Village Panchayat) ग्रामीण विकास के सभी कार्य करती है। ग्राम प्रधान, ग्राम पंचायत का अध्यक्ष होता है। ग्राम प्रधान व पंचायत के अन्य सदस्यों का निर्वाचन ग्राम सभा द्वारा होता है।

ग्रामसभा -ग्राम के सभी व्यक्ति (स्त्री एवं पुरूश) जिनकी आयु 18 वर्श या इससे ऊपर है व वोट देने का अधिकारी है, ग्रामसभा कहलाते है।

सरकारी संगठन के रूप में विकास के कार्यो को चलाने के लिए ग्राम विकास अधिकारी (Village Development Officer) होता है। प्रत्येक ब्लॉक में लगभग 10 V.D.O.S. होते है, ग्राम विकास कार्यो की सफलता इन्ही के कन्धों पर होती है।

सामुदायिक विकास योजना के कार्यक्रम- इसके अन्तर्गत अग्रलिखित कार्यक्रम चलाये जाने की व्यवस्था है-

Organisational Set up and Working of C.D. Programme

Level	Official	Non-Official
Central Level	Ministry Community Development ↓ Member ↓ Minister C.D. ↓ Dyp Minister C.D. Co-Ordination ↓ through Secretary ⟷ ↓ - Negociations Dyp Secretary - Conferences - Seminars	Parliament ↓ National Development Council ↓ Chairman-P.M. ↓ Advisory Board- Minister Agri, Finance, Food, Education, Community Development, Scientific Research and Members Planning Commission and Concerned secretaries.
State Level	Minister Community Development ↓ Members ↓ Minister C.D. Works as ↓	State Legeslative ↓ State Development Committee ↓ Chairman. C.M. ↓

	Secretary Secretary -Guides ↓ - Directs Development - Co-ordinates Commissioner	Advisory Board- Minister C.D., Agrit, Education, Finance, Health & Food and Concerned Sceretaries.
District Level	Direct Planning Committee ↓ Chairman – D.M. Secretary – D.P.O. Works as Members – D.A.O., Secretary D.P.O., D.I.O., Helps in D.L.O. – Co-ordination District plant - Guidence Protection officer - Direction	Zila Parishad ↓ Chairman – Adsyksha Secretary – D.M. Members – All elected members by Gram Sabha's of the district @ 1 member for 50,000 gram sabha voters.
Block Level	C.D. Block Office ↓ Incharge – B.D.O. Assistants – A.D.O., Works as	Block Development Committee ↓ Chairman –

	Agril, Co-operative, Secretary Panchayat, Social Helps in Welfare, Plant - Planning & Protection. Execution Statistics, I.S.B. and of the A.H. B.O. P.R.D. Programmes	Pramukh Secretary – B.D.O. Members – All elected members by Gram Sabha's of the block @ 1 B.D.C. member for 2000 gram sabha voters.
Village Level	Village Development Officer (V.D.O.'s) Works as Secretary ↓ Helps in Panchayat - Planning and Secretary Execution of the Programmes.	Gram Panchayt ↓ Chairman – Village Pradhan Members – 7 to 15 Members elected by Gram Sabha as per its strength.

(क) कृषि- इसमें भूमि सुधार, सिंचाई की व्यवस्था, बीज-खाद की व्यवस्था, सब्जी की खेती और पशु नस्ल सुधार का कार्यक्रम चलाये जाते है।

(ख) सहकारिता का विकास- नई सहकारी समिति का खोलना तथा पुरानी का पुनर्गठन का कार्य होता है।

(ग) रोजगार की व्यवस्था करना-इसके अन्तर्गत ग्रामीण और कुटीर उद्योग-धन्धे चलाये जाते है, जिससे ग्रामीणों को रोजगार मिल सकें।

(घ) यातायात- सड़को की व्यवस्था और अन्य यातायात के साधनों की व्यवस्था की जाती है।

(ड) शिक्षा- अनिवार्य और नि:शुल्क शिक्षा की व्यवस्था के कार्यक्रम चलाये जाते है।

(च) स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्यक्रम- स्वच्छता का कार्यक्रम, बीमारी की देखभाल और जच्चा- बच्चा की व्यवस्था का कार्यक्रम विशेष रूप से चलाये जाते है।

(छ) प्रशिक्षण- शिल्पकला और दस्तकारों के लिए प्रशिक्षण और तकनीकी शिक्षा का विशेष प्रबन्ध रहता है।

(ज) गृह निर्माण का कार्यक्रम-पुराने मकानों की दशा ठीक कराने तथा नये मकान बनाने के लिए सहायता और सलाह देने का कार्यक्रम चलता है।

(झ) समाज कल्याण-सामुदायिक मनोरंजन तथा समाज कल्याण के संगठन के कार्यक्रम चलाये जाते है।

प्रमुख तत्व (Chief Elements)

भारत में चलाये जा रहे सामुदायिक विकास कार्यक्रम को आधार प्रदान करने वाले तत्वों में निम्नांकित प्रमुख है-

(i) भारत की ग्रामीण जनसंख्या के आर्थिक एवं सामाजिक स्थर को अधिक-से- अधिक उन्नत करने का लक्ष्य।

(ii) कृषि, फार्म, गृह, सार्वजनिक सेवाओं को उन्नत करना।

(iii) फसल, पशुधन, स्वास्थ्य, शिक्षा तथा सहकारिता आदि सेवाओं तथा स्थानीय नेतृत्व विकसित करने का लक्ष्य।

(iv) ग्राम समुदाय की स्त्री-पुरुष और युवा वर्ग में विकासात्मक परिवर्तन का लक्ष्य।

(v) सामुदायिक विकास कार्यक्रम के नियोजन, क्रियान्वयन, मूल्यांकन आदि जैसे कार्य में लगे प्रखण्ड, अनुमण्डल, मण्डल, प्रमण्डल, राज्य एवं राष्ट्रिय स्तर के अधिकारी एवं कार्यकर्ता जैसे तत्त्व प्रमुख है।

6.7 भारत में सामुदायिक विकास योजना का मूल्यांकन

भारत जैसे विकासशील देश में सामुदायिक विकास कार्यक्रम की आवश्यकता से इन्कार नहीं किया जा सकता। जो जनता अन्धकार में भटक रही है, जहाँ, गरीबी, अशिक्षा, अन्धविश्वास, साधनों की कमी, स्वास्थ्य चिकित्सा सुविधाओं का अभाव, मकानों की समस्या आदि अनेक समस्याएँ है वहाँ सामुदायिक विकास कार्यक्रम अन्धेरें में रोशनी की एक किरण के समान है। भारत के गाँव अब तेजी से विकास के मार्ग पर चल पड़े है। पर, यह भी सच है कि इस कार्यक्रम से जितने लाभ की आशा की गई थी उतना लाभ प्राप्त नहीं हो सका है, क्योंकि ये योजनाएँ सही ढ़ंग से संचालित नही हो पायी है। इन बिन्दुओं पर हम निम्नलिखित प्रकार से चर्चा करेंगे-

भारत में सरकारी अधिकारी ने यह जानने की कोशिश नही की कि ग्रामीण समुदाय की आवश्यकताएँ क्या है? सरकारी नीति ठीक भी है या नही।

ग्रामीण नेतृत्व में कमी के कारण कार्य को सफलता नहीं मिली है। जो भी प्रोजेक्ट चलाये जाते है वे जनता द्वारा चुने हुए नही होते। अत: ग्रामीण नेतृत्व अपने समुदाय को उत्प्रेरित करने में कठिनाई महसूस करता है।

ग्रामीण स्तर के कार्यकर्ता जो अपने समुदाय को कृषि सम्बन्धी जानकारी देने के लिए निर्देषित किये गये थे-उनको अच्छी प्रशिक्षण नही दिया गया। इस प्रकार वह जनता को अच्छी तरह प्रेरित नही कर सके।

ग्रामीण स्तर के कार्यकर्ता इस बात के लिए बाध्य किये गये कि वे रिकार्ड रखने और रिपोर्ट जमा करने में समय लगायें। फलत: जो समय उन्हे समुदाय के विकास कार्यो के लिए लगाना था-रिकोर्ड रखने में लगाने लगे। इसका बुरा असर विकास कार्यो पर पड़ना स्वाभाविक था।

बलवन्त राय मेहता समिति ने इस योजना की कड़ी आलोचना की है। कहा- योजना ग्रामीण नेतृत्व प्राप्त करने में असफल रही। ग्राम पंचायत से ऊपर के संगठन भी बहुत कम इस योजना में भाग ले रहे है। समितियों ने भी कोई शक्ति का परिचय नही दिया।

प्रो. दूबे ने बताया कि सामुदायिक विकास योजना का आदर्श सारे समुदाय का बहुमुखी विकास कराना है किन्तु यदि सूक्ष्मता से देखा जाए तो यह पता चलेगा कि इसके लाभ का अधिकतर भाग अभिजात्य वर्ग को पहुँचता है। अधिकांश प्रभावी किसान ही इससे लाभान्वित होते है। गरीब इन्सान बहुत ही कम लाभ प्राप्त कर सके है।

- आवश्यक उपकरणों की कमी।
- जनता में पर्याप्त सहयोग का अभाव।
- सरकारी विभागों में समन्वयन की कमी।
- ग्रामसेवक, सेविकाओं की कमी आदि।

आज आवश्यकता इस बात की है कि इस कार्यक्रम को दूर किया जाए। ऐसा करने पर ही भारत के गाँवों को उनका खोया हुआ प्राचीन गौरव व यश पुन: प्राप्त हो सकेगा। तथा बापू एवं नेहरू के सपने साकार हो सकेंगे।

6.8 सारांश

सामुदायिक विकास एक सतत् गतिशील सामाजिक प्रक्रिया है जो समुदाय के व्यक्तियों में विकास के आधारभूत लक्ष्यों से प्रेरित होती है। यह एक शान्तिप्रिय आंदोलन है जो सामुदायिक जीवन स्थर को बढाता है । सामुदायिक विकास में ग्रामीण जीवन के सभी पक्ष जैसे कृषि, पशुपालन, सिंचाई, स्वास्थ्य शिक्षा, सहकारिता, जन जागरूकता ग्रामीण संसाधन सम्मिलित किए जाते है । इन सभी क्षेत्रो का विकास कर ग्रामीण जीवन स्थर में सुधर लाना सामुदायिक विकास का ध्येय है । इकाई में वर्णित सामुदायिक विकास के सिद्धांतों और संगठन की जानकारी ग्रामीण जन को अवश्य होनी चाहिए जिससे वह स्वंय का विकास करते हुए कल्याणकारी राज्य की और अपने कर्त्तव्य के प्रति जाग्रत हो सके ।

6.9 अभ्यास प्रश्न

1. सामुदायिक विकास का अर्थ एवं परिभाषा को समझाइये
2. सामुदायिक विकास के उद्देश्य को समझाइये
3. सामुदायिक विकास कार्यक्रम के सिद्दांत को समझाइये
4. सामुदायिक विकास योजना के क्षेत्र को समझाइये
5. सामुदायिक विकास कार्यक्रम का संगठन एवं कार्य को समझाइये

6.10 संदर्भ ग्रन्थ

प्रसार शिक्षा –डा. वंदना जैन , डा पूनम कुमारी

प्रसार शिक्षा-डा बी. डी. हरपलानी

प्रसार शिक्षा-

इकाई 7

संचार प्रक्रिया के तत्व

7.0 उद्देश्य
7.1 प्रस्तावना
7.2 संचार प्रक्रिया सूचना प्रसारण
7.3 संचार प्रक्रिया की अवधारणा
7.4 संचार प्रक्रिया के तत्व
7.5 संचार की प्रक्रिया
7.6 संचार के मॉडल
7.7 सारांश
7.8 अभ्यास प्रश्न
7.9 संदर्भ ग्रन्थ

7.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययनोपरांत विद्यार्थी -

1. संचार प्रक्रिया सुचना प्रसारण की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
2. संचार प्रक्रिया की अवधारणा की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
3. संचार प्रक्रिया के तत्व की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
4. संचार की प्रक्रिया की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
5. संचार के मॉडल की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।

7.1 प्रस्तावना

संचार (Communication) : संचार शब्द का सामान्य अर्थ होता है- किसी सूचना या संदेश को एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक पहुंचाना या सम्प्रेषित करना। शाब्दिक अर्थों में संचार अंग्रेजी भाषा के Communication शब्द का हिन्दी रूपांतरण है। जिसकी उत्पत्ति लैटिन भाषा के Communis शब्द से हुई है, जिसका अर्थ होता है सामान्य (Commun), अर्थात्... संचार शब्द से तात्पर्य सूचना देने वाले संचारक (Sender) और सूचना ग्रहण करने वाले प्राप्तक (Receiver) के मध्य उभयनिष्ठता स्थापित करने से है। इससे संचारक

और प्राप्तक के मध्य समझदारी व साझेदारी विकसित होती है। दूसरे शब्दों में कहें तो संचार एक ऐसा प्रयास है जिसके माध्यम से एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के विचारों, भावनाओं एवं मनोवृत्तियों में सहभागी बनता है। संचार का आधार 'संवाद' और सम्प्रेषण है।

संचार प्रेषक या प्राप्तकर्ता को सूचना भेजने की प्रक्रिया है जिसमे जानकारी पहुंचाने के लिए ऐसे माध्यम (medium) का प्रयोग किया जाता है जिससे संप्रेषित सूचना प्रेषक और प्राप्तकर्ता दोनों समझ सकें यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिस के द्वारा प्राणी विभिन्न माध्यमों के द्वारा सूचना का आदान प्रदान कर सकते हैं संचार की मांग हैं कि सभी पक्ष एक समान भाषा का बोध कर सकें जिस का आदान प्रदान हुआ हो, संचार एक श्रावानिक (auditory) माध्यम हैं (जैसे कि) बोली, गान और कभी कभी आवाज का स्वर एवं गैर मौखिक (nonverbal), शारीरिक माध्यम जैसे की शारीरिक हाव भाव (body language), संकेत बोली (sign language), सम भाषा (paralanguage), स्पर्श (touch), नेत्र संपर्क(eye contact) अथवा लेखन (writing) इत्यादि का प्रयोग।

संचार कई स्तरों पर (एक एकल कार्रवाई के लिए भी), कई अलग अलग तरीकों से होता है और अधिकतम प्राणियों के लिए, साथ ही कुछ मशीनों के लिए भी .यदि समस्त नहीं तो अधिकतम अध्ययन के क्षेत्र संचार करने के लिए ध्यान के एक हिस्से को समर्पित करते हैं, इसलिए जब संचार के बारे में बात की जाए तो यह जानना आवश्यक है की संचार के किस पहलू के बारे में बात हो रही है।

बहरहाल, संचार के आमतौर पर कुछ प्रमुख आयाम साथ में वर्णित है:- विषय वस्तु (किस प्रकार की वस्तुएं संचारित हो रहीं हैं), स्रोत, स्कंदन करने वाला, प्रेषक या कूट लेखक (encoder) (किस के द्वारा), रूप (किस रूप में), चैनल (किस माध्यम से), एवं गंतव्य, रिसीवर, लक्ष्य या कूटवाचक (decoder) (किस को) एवं उद्देश्य या व्यावहारिक पहलू.पार्टियों के बीच, इत्यादि संचार में शामिल है वह कर्म जो ज्ञान और अनुभव प्रदान करें, सलाह और आदेश दे और सवाल पूछें, संचार

के विभिन्न शिष्टाचार के कई रूपों में से उस का रूप समूह संप्रेषण की क्षमता पर निर्भर करता है संचार, तत्त्व और रूप साथ में संदेश (message) बनाते हैं जो गंतव्य (destination) की ओर भेजा जाता हैलक्ष्य ख़ुद, दूसरा व्यक्ति (person) या हस्ती, दूसरा अस्तित्व (जैसे एक निगम या हस्ती के समूह) हो सकते हैं

7.2 संचार प्रक्रिया सूचना प्रसारण

संचार प्रक्रिया सूचना प्रसारण (information transmission) के तीन स्तरों द्वारा नियंत्रित) नियमों के रूप में देखा जा सकता है

वाक्यात्मक (Syntactic) (संकेतों और प्रतीकों का औपचारिक गुण),

व्यावहारिक (pragmatic) (संकेतों के बीच रिश्तों के साथ संबंध / अभिव्यक्ति और उनके प्रयोक्ताओं) और

शब्दार्थ विज्ञान (semantic) (संकेत और चिह्न के बीच के संबंधों का अध्ययन और वह क्या प्रर्दशित करते हैं

इसलिए, संचार सामाजिक संवाद है जहाँ कम से कम दो बातचीत करने वाले एक समान चिह्नों और शब्दार्थ विज्ञान (semiotic) समुच्चय नियमों में भागीदार हों. कुछ अर्थों में यह सामान्यतः आयोजित शासन अन्तः व्यक्तिगत संवाद (intrapersonal communication) सहित दिनचर्या या स्वयं वार्तालाप के माध्यम से स्वतः संवाद (auto communication) की अवहेलना करता है

7.3 संचार की अवधारणा (Concept of Communication)

संचार एक अनवरत प्रक्रिया है। इसकी उत्पत्ति पृथ्वी पर मानव सभ्यता के साथ हुई है। प्रारंभिक युग में मानव अपनी भाव-भंगिमाओं और प्रतीक चिह्नों के माध्यम से संचार करता था, किन्तु आधुनिक युग में सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में क्रांतिकारी अनुसंधान के कारण संचार बुलन्दी पर पहुंच गया है। रेडियो, टेलीविजन, सिनेमा, टेलीफोन, मोबाइल, फैक्स, इंटरनेट, ई-

मेल, वेब साइट्स, टेलीप्रिन्टर, इंटरकॉम, टेली-कान्फ्रेंसिंग, केबल, समाचार पत्र, पत्रिका इत्यादि संचार के अत्याधुनिक माध्यम हैं। संचार माध्यमों को अत्याधुनिक बनाने में युद्धों की भूमिका महत्वपूर्ण रही है। 20 वीं शताब्दी के मध्य तक संचार को स्वतंत्र विषय नहीं माना जाता था। राजनीतिशास्त्र, समाजशास्त्र, मानवशास्त्र तथा मनोविज्ञान के विशेषज्ञ अपने विषय की जरूरत के मुताबिक अध्ययन करते थे। हालांकि, इसकी विशिष्टता का एहसास दुनिया को प्रथम विश्व युद्ध (1914-1918) के बाद होने लगा था। एक स्वतंत्र विषय के रूप में इसके अध्ययन की आवश्यकता तब महसूस की गयी, जब द्वितीय विश्व युद्ध (1939-1945) के दौरान जर्मनी के तानाशाह शासक हिटलर के प्रचार मंत्री गोयबल्स ने कहना शुरू किया- '*किसी झूठ को बार-बार दोहराओ तो सच हो जाता है*'। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद पूरी दुनिया दो गुटों में विभाजित हो गयी थी। एक गुट का साम्राज्यवादी अमेरिका तथा दूसरे गुट का साम्यवादी सोवियत संघ नेतृत्व करने लगा। दोनों महाशक्तियों के बीच विदेशी उपनिवेश से मुक्त होने वाले भारत जैसे कुछ तीसरी दुनिया के देश थे, जिन्हें अपने गुट में शामिल करने के लिए महाशक्तियों के बीच होड़ मची थी। इसके लिए दोनों अपने सैन्य बलों को अत्याधुनिक हथियारों (नाभिकीय व जैविक बमों) तथा खुफिया तंत्रों को अत्याधुनिक संचार माध्यमों से लैस करने में लगे थे। इसी दौरान अमेरिकी प्रतिरक्षा विभाग ने इंटरनेट का आविष्कार किया। सोवियत संघ के विघटन के बाद अमेरिका ने अपने इंटरनेट का दरवाजा दुनिया को उपयोग करने के लिए खोल दिया है, जो वर्तमान समय में सबसे त्वरित गति का संचार माध्यम है।

7.4 संचार के तत्व (Elements of Communication)

संचार एक सतत् प्रक्रिया है संचार की प्रक्रिया में मुख्य रुप से 6 तत्व भाग लेते हैं। जो संचार की प्रक्रिया को निरंतर जारी रखने के लिए

अत्यंत आवश्यक हैं। जिसमें निम्न छः तत्व एक निश्चित उद्देश्य की पूर्ति के लिए आपस में क्रिया-प्रतिक्रिया करते हैं ।

(i) संचारक (Communicator) -संचार की प्रक्रिया में जो संदेश को प्रेषित करता है उसे संचारक कहते हैं। संचार प्रक्रिया में संचारक की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। दूसरे शब्दों में यह भी कह सकते हैं कि संचारक ही संचार प्रक्रिया की शुरूआत करता है। संचारक को कम्युनिकेटर, सेंडर, स्रोत, सम्प्रेषक, एनकोडर, संवादक इत्यादि नामों से जाना जाता है। संचार प्रक्रिया में संचारक की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। यह प्राप्तक की समस्याओं एवं आवश्यकताओं के अनुरूप संदेश का निर्माण करता है। संचारक संदेश का स्रोत व निर्माता होता है। दूसरे शब्दों में, संचारक वह व्यक्ति होता है जो संचार प्रक्रिया की शुरूआत करता है। इसे कम्युनिकेटर, सेंडर, स्रोत, सम्प्रेषक, एनकोडर, संवादक इत्यादि नामों से जाना जाता है। सम्प्रेषित संदेश का प्राप्तक पर क्या और कितना प्रभाव होगा, यह संचारक के सम्प्रेषण कला और ज्ञान के स्तर पर निर्भर करता है।

(ii) संदेश (Message) - संचारक या संप्रेषक जो कुछ प्रेषित करता है या भेजता है उसे हम संदेश कहते हैं। दूसरे शब्दों में- प्राप्तक से संचारक जो कुछ कहना चाहता है वह संदेश है। संदेश लिखित, मौखिक, प्रतीकात्मक तथा शारीरिक हाव-भाव के रूप में होता है। संचार प्रक्रिया में विचारों व अनुभवों का सम्प्रेषण होता है। विचार व अनुभव को ही संदेश कहते हैं। दूसरे शब्दों में- प्राप्तक से संचारक जो कुछ कहना चाहता है वह संदेश है। संदेश लिखित, मौखिक, प्रतीकात्मक तथा शारीरिक हाव-भाव के रूप में होता है। संदेश को अंतर्वस्तु (Contents) भी कहा जाता है। प्राय: संदेश का निर्माण अंत:वैयक्तिक संचार के रूप में होता है, लेकिन यह जरूरी नहीं है वह उसी रूप में प्राप्तक तक पहुंचे। एक संदेश अलग-अलग माध्यमों से अलग-अलग प्राप्तकों तक अलग-अलग रूपों में पहुंचता है। संदेश का निर्माण करते समय संचारक को संदेश की विषय वस्तु, संदेश की विवेचना, संदेश माध्यम, प्राप्तक के ज्ञान का स्तर इत्यादि को ध्यान में

रखना चाहिये। इनमें से किसी एक का गलत चयन होने पर प्रभावी संचार संभव नहीं है।

(iii) माध्यम (Channel) - संचारक संदेश को प्राप्तक तक पहुंचाने के लिए जिस चीज या वस्तु का प्रयोग करता है उसे माध्यम कहते हैं। संचार प्रक्रिया मे माध्यम सेतु की तरह होता है, जो संचार और प्राप्तक को जोडने का कार्य करता है। संदेश किस तरह के श्रोताओं तक, किस गति से तथा कितने समय में पहुंचाना है, यह माध्यम पर निर्भर करता है। समाचार पत्र, टेलीविजन चैनल, रेडियो, वेब पोर्टल्स, ई-मेल, फैक्स, टेलीप्रिंटर, मोबाइल इत्यादि संचार के अत्याधुनिक माध्यम हैं। संचार प्रक्रिया मे माध्यम सेतु की तरह होता है, जो संचार और प्राप्तक को जोडने का कार्य करता है। संदेश किस तरह के श्रोताओं तक, किस गति से तथा कितने समय में पहुंचाना है, यह माध्यम पर निर्भर करता है। समाचार पत्र, टेलीविजन चैनल, रेडियो, वेब पोर्टल्स, ई-मेल, फैक्स, टेलीप्रिंटर, मोबाइल इत्यादि संचार के अत्याधुनिक माध्यम हैं। सम्प्रेषित संदेश की सफलता उसके माध्यम पर निर्भर करती है। उदाहरणार्थ, समाचार पत्र व ई-मेल से भेजा गया संदेश केवल साक्षर लोगों के बीच, जबकि रेडियो व टेलीविजन से सम्प्रेषित संदेश साक्षर व निरक्षर दोनों के बीच प्रभावी होता है। इसका तात्पर्य है कि माध्यम और संदेश के बीच सामंजस्य पर संचार की प्रभावशीलता निर्भर करती है।

(iv) प्राप्तक (Receiver) - संचारक माध्यम का उपयोग कर जिस व्यक्ति तक संदेश पहुंचाता है या जिसको ध्यान में रखकर संदेश प्रेषित करता है हम उसे प्राप्तक कहते हैं। दूसरे शब्दों में वो व्यक्ति जो संचारक द्वारा भेजे गये संदेश को ग्रहण करता है या प्राप्त करता है उसे प्राप्तक कहते हैं। प्राप्तक संदेश ग्रहण कर उस पर विचार करता है फिर अपनी प्रतिक्रिया संचारक तक पहुंचाता है। प्राप्तक उस व्यक्ति को कहते है, जिसको ध्यान में रखकर संचारक अपने संदेश का निर्माण, उचित माध्यम का चुनाव और सम्प्रेषण करता है। प्राप्तक कोई एक व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह हो सकता है। प्राप्तक को संग्राहक, ग्रहणकर्ता, प्राप्तकर्ता, रिसीवर, डिकोडर इत्यादि नामों से जाना जाता

है। संचारक द्वारा सम्प्रेषित संदेश को प्राप्तक पढक़र, सुनकर, देखकर, चख कर व स्पर्श कर ग्रहण करता है। देखने या सुनने या पढने या सोचने की क्षमता के अभाव में प्राप्तक संदेश के अर्थो को शत-प्रतिशत ग्रहण नहीं सकता है।

(v) फीडबैक (Feedback) - संचारक द्वारा भेजे गए संदेश को ग्रहण करने के पश्चात प्राप्तक उसपर मंथन या विचार करता है जिसके बाद वह संचारक को उस संदेश के संबंध में जवाब प्रेषित करता है। प्राप्तक द्वारा प्रेषित किये गए जवाब को हम प्रतिक्रिया (FEEDBACK) कहते है। फीडबैक सकारात्म और नकारात्मक दोनों हो सकता है। संचार की प्रक्रिया में फीडबैक काफी महत्वपूर्ण होता है। फीडबैक के बिना सही अर्थों में संचार अधूरा है। संचारक से संदेश ग्रहण करने के उपरांत प्राप्तक उस पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करता है, जिसे प्रति-उत्तर, प्रतिपुष्टि व फीडबैक कहा जाता है। बेहतर संचार के लिए बेहतर फीडबैक का होना आवश्यक है। फीडबैक से ही पता चलता है कि संचारक के संदेश को प्राप्तक ने ग्रहण किया है या नहीं। अनुभवी संचारक सम्प्रेषण के दौरान ही प्राप्तक से फीडबैक लेना शुरू कर देता है, क्योंकि वह जैसे ही बोलना शुरू करता है, वैसे ही प्राप्तक अपने चेहरे व हाव-भाव से प्रतिक्रिया व्यक्त करना शुरू कर देता है। फीडबैक से संचारक को पता चलता है कि संदेश सम्प्रेषण में गलती हो रही है या नहीं। फीडबैक सकारात्मक या नकारात्मक तथा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष हो सकता है।

(vi) शोर (Noise) -संचार प्रक्रिया में शोर एक प्रकार का अवरोध है, जो सम्प्रेषित संदेश के प्रभाव को कम करता है। शोर को बाधा भी कहा जाता है। संचारक जिस रूप में संदेश को भेजता है, उसी रूप में प्राप्तक तक शत-प्रतिशत पहुंच जाये तो माना जाता है कि संचार प्रक्रिया में कोई अवरोध नहीं है। लेकिन ऐसा कम ही होता है। सभी सम्प्रेषित संदेश के साथ कोई न कोई शोर अवश्य जुड़ जाता है, जो संचारक द्वारा भेजा गया नहीं होता है। उदाहरणार्थ, रेडियो या टेलीविजन पर आवाज के साथ सरसराहट का आना। मोबाइल पर

वार्तालाप के दौरान आसपास की ध्वनियों का जुड़ जाना इत्यादि। संचार प्रक्रिया में शोर एक प्रकार का अवरोध है, जो सम्प्रेषित संदेश के प्रभाव को कम करता है। शोर को बाधा भी कहा जाता है। संचारक जिस रूप में संदेश को भेजता है, उसी रूप में प्राप्तक तक शत-प्रतिशत पहुंच जाये तो माना जाता है कि संचार प्रक्रिया में कोई अवरोध नहीं है। लेकिन ऐसा कम ही होता है। सभी सम्प्रेषित संदेश के साथ कोई न कोई शोर अवश्य जुड़ जाता है, जो संचारक द्वारा भेजा गया नहीं होता है। उदाहरणार्थ, रेडियो या टेलीविजन पर आवाज के साथ सरसराहट का आना। मोबाइल पर वार्तालाप के दौरान आसपास की ध्वनियों का जुड़ जाना इत्यादि।

7.5 संचार की प्रक्रिया (COMMUNICATION PROCESS)

संचार प्राणवायु की तरह है, इसके बिना मानव का जिंदा रहना संभव नहीं है। आदिकाल से ही संचार की प्रक्रिया सतत चली आ रही है। हालांकि आज के समय में संचार के नए-नए माध्यम आ जाने से संचार की प्रक्रिया में तेजी आई है, लेकिन आधुनिक संचार माध्यमों में भी संचार प्रक्रिया का सैद्धांतिक रुप एक जैसा ही है।

संचार प्रक्रिया को हम चार भागों में बांटते है-

1. पहली प्रक्रिया : संचार की इस प्रक्रिया में मुख्य रूप से संचार के 3 तत्व भाग लेते हैं- 1. संचारक 2.संदेश 3.प्राप्तक। इसमें संचारक यानी संदेश भेजने वाला द्वारा सम्प्रेषित संदेश सीधे प्राप्तक यानी संदेश प्राप्त करने वाला तक पहुंचता है।

संचार की इस प्रक्रिया को ONE-WAY-COMMUNICATION(एक मार्गीय संचार) भी कहते हैं।

उपर बनाये गए तस्वीर से यहा साफ है कि संचार की इस प्रक्रिया में संचारक और प्राप्तक की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। संचार तभी

प्रभावी या सार्थक होगा, जब संचारक और प्राप्तक, मानसिक व भावनात्मक दृष्टि से एक ही धरातल पर हो तथा संचारक द्वारा भेजे गए संदेश के अर्थों को संदेश प्राप्त करने वाला समझता हो।

2. दूसरी प्रक्रिया : आइए अब जानते हैं कि संचार की दूसरी प्रक्रिया क्या है और इसमें कौन से तत्व भाग लेते हैं। संचार की इस प्रक्रिया के अंतर्गत् संचारक यानी संदेश भेजने वाला और प्राप्तक यानी संदेश को प्राप्त करने वाला दोनों क्रमश: एक-दूसरे की भूमिका निभाते हैं। अथार्त एक बार संचारक प्राप्तक बनता है तो एक बार प्राप्तक संचारक की भूमिका में होता है। इस प्रकार की प्रक्रिया से संचारक और प्राप्तक दोनों के मध्य एक पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित होता है।

संचार की यह प्रक्रिया TWO-WAY-COMMUNICATION (द्वि-मार्गीय संचार प्रक्रिया) भी कहलाती है।

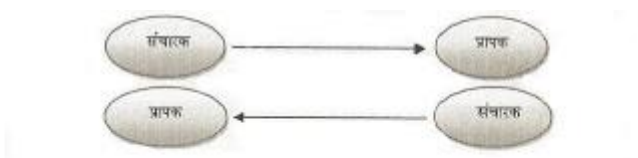

उपर बनाई गई तस्वीर से यह स्पष्ट है कि संचार कि यह प्रक्रिया TWO WAY COMMUNICATION होने के कारण निरंतर चलती रहती है। इस प्रक्रिया में संचारक यानी संदेश भेजने वाले से संदेश ग्रहण करने के उपरांत प्राप्तक जैसे ही कुछ कहना शुरू करता है, वैसे ही संचारक की भूमिका में आ जाता है। उसकी बातों को सुनते समय संचारक की भूमिका बदलकर प्राप्तक जैसी हो जाती है।

3. तीसरी प्रक्रिया : संचार की इस आखिरी प्रक्रिया में संचारक यानी संदेश भेजने वाला यह निर्णय लेता है कि उसे कब, क्या, किसे और किस माध्यम (Channel) से भेजना है। दूसरे शब्दों में संचारक संदेश भेजने के लिए संचार माध्यम का चयन करता है।

उपर बनाई गई तस्वीर से यह स्पष्ट है कि संचारक अपने संदेश और प्राप्तक की स्थिति के अनुसार संचार माध्यम का चुनाव करता है। संचारक अपने संदेश को बोलकर, लिखकर, रेखाचित्र बनाकर या शारीरिक क्रिया द्वारा सम्प्रेषित कर सकता है। संदेश प्राप्त करने वाला सुनकर, पढक़र, देखकर या छूकर संदेश को प्राप्त कर सकता है।

चौथी प्रक्रिया : संचार की इस प्रक्रिया में प्रतिक्रिया (FEEDBACK) का काफी महत्व है। इस प्रक्रिया के अंतर्गत संदेश प्राप्त करने वाला संचार के संदेश को ग्रहण करने के बाद उसे समझता है। समझने के बाद प्राप्तक बोलकर, लिखकर या अपनी भाव-भंगिमाओं से प्रतिक्रिया (Feedback) व्यक्त करता है।

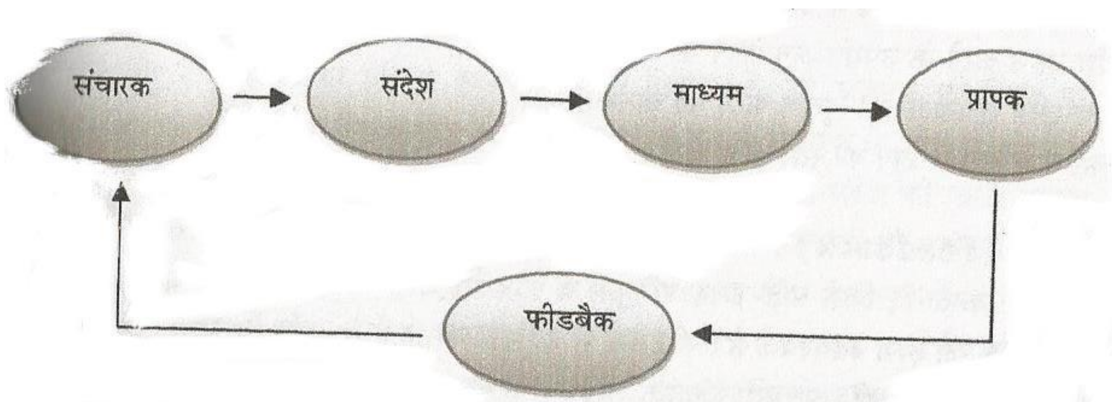

उपर बनाए गए तस्वीर से यह स्पष्ट है कि संचार प्रक्रिया के दौरान प्राप्तक से फीडबैक प्राप्त करते हुए एक कुशल संचारक अपनी बात को आगे बढ़ाता है तथा संदेश में आवश्यकतानुसार बदलाव भी करता है। फीडबैक न मिलने की स्थिति में संचारक का उद्देश्य अधूरा रह जाता है।

पांचवी प्रक्रिया : संचार की इस प्रक्रिया में संदेश भेजने वाला अपने संदेश को गुप्त भाषा में कूट करता है और किसी माध्यम से सम्प्रेषित करता है। प्राप्तक संदेश को प्राप्त करने के बाद गुप्त भाषा को समझ (Decode) लेता है तथा अपना फीडबैक व्यक्त कर देता है, तो संचार प्रक्रिया पूरी हो जाती है। इस प्रक्रिया में कई तरह की बाधाएं आती है, जिससे संदेश कमजोर, विकृत और अप्रभावी हो जाता है।

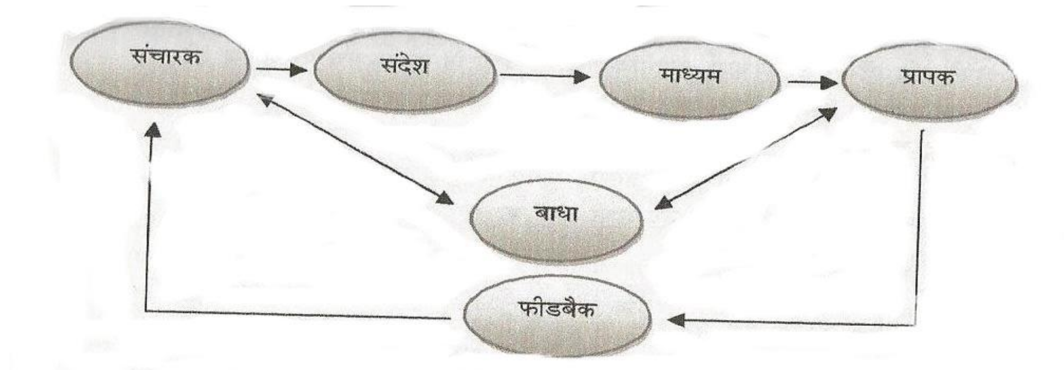

उपरोक्त रेखाचित्र में संचारक वह व्यक्ति है जो संचार प्रक्रिया को प्रारंभ करता है। संदेश शाब्दिक और अशाब्दिक दोनों तरह का हो सकता है। किसी माध्यम से संदेश प्राप्तक तक पहुंचता है। प्राप्तक संदेश को प्राप्त करने के बाद व्याख्या (Decode) करता है, फिर प्रतिक्रिया (Feecback) व्यक्त करता है। तब प्राप्तक कहलाता है। इस प्रक्रिया में कुछ बाधा (Noise) उत्पन्न होती है, जिससे संचार का प्रवाह/प्रभाव कम हो जाता है।

7.6 संचार के मॉडल

धरती पर मानव का विकास होने के साथ-साथ संचार में भी तेजी आई। संचार के लिए नए-नए तरीके अपनाए जाने लगे। अत: जैसे-जैसे संचार प्रक्रिया के विकास होने लगा ठीक उसी तरह संचार के मॉडलों में भी अंतर आया और इसका विकास होता गया। संचार का अध्ययन मॉडल के अध्ययन के बिना अधूरा माना जाता है। कई संचारविदों ने अलग-अलग समयों पर संचार के कई प्रारूपों का प्रतिपादन किया है। संचार के कुछ मॉडल निम्न है । संचार की प्रक्रिया का अध्ययन एक विज्ञान है। यह प्रक्रिया जटिल है। विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न तरीके से इस प्रक्रिया का वर्णन किया है। संचार की प्रक्रिया को बताने वाला चित्र मॉडल कहलाता है। इन मॉडलों से हमें संचार की गतिशील और सक्रिय प्रक्रिया समझने में आसानी होती है। ये संचार के सिद्धांत और इसके तत्वों के बारे में भी बताते हैं। संचार मॉडल से हमें पता चलता है कि संचार में किन-किन तत्वों की क्या भूमिका है और ये एक दूसरे का कैसे प्रभावित करते हैं?

संचार की शुरुआत लाखों साल पहले जीव की उत्पत्ति के साथ मानी जाती है। संचार की प्रक्रिया और इससे जुड़े कई सिद्धांत की जानकारी हमें प्राचीन ग्रथों से मिलती है। लेकिन उन जानकारियों पर और अध्ययन की आवश्यकता है। अरस्तू की व्याख्या के आधार पर कुछ विद्वानों ने संचार के सबसे पुराने मॉडल को बनाने की कोशिश की है। आप उसके बारे में जानते हैं?

करीब 2300 साल पहले ग्रीस के दार्शनिक अरस्तू ने अपनी किताब ”रेटॉरिक” में संचार की प्रक्रिया के बारे में बताया है। रेटॉरिक का हिन्दी में अर्थ होता है भाषण देने की कला। अरस्तू ने संचार की प्रक्रिया को बताते हुए पाँच प्रमुख तत्वों की व्याख्या की है। संचार प्रेषक (भेजने वाला), संदेश (भाषण), प्राप्तकर्त्ता, प्रभाव और विभिन्न अवसर।

ऑसगुड - श्राम का संचार प्रारूप (OSGOOD-SCHRAMM'S MODAL OF COMMUNICATION)

इस मॉडल को चाल्स ई.ऑसगुड ने प्रतिपादित किया है। आपको बता दें कि ऑसगुड एक मनोभाषा विज्ञाननी थे। इस मॉडल को उन्होंने साल-1954 में प्रतिपादित किया। इस मॉडल के अनुसार संचार गत्यात्मक और परिवर्तनशील होता है, जिसमें शामिल होने वाले संचारक और प्राप्तक इनकोडिंग औग डिकोडिंग के साथ-साथ संदेश की व्याख्या भी करते हैं। इस मॉडल के अनुसार एक समय ऐसा आता है जब संचारक की भूमिका बदलकर प्राप्तक की हो जाती है तो वहीं प्राप्तक की भूमिका बदलकर संचारक की हो जाती है। अत: संचारक और प्राप्तक दोनों को व्याख्याकार की भूमिका निभानी पड़ती है।

इस मॉडल को हम सर्कुलर प्रारुप भी कहते है।

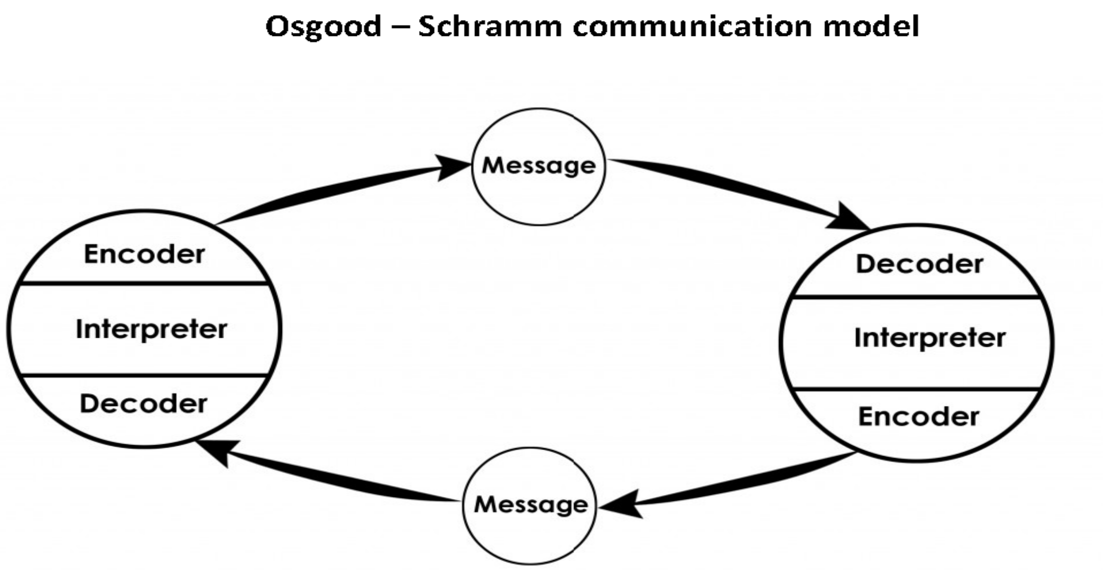

लॉसवेल फार्मूला (LASSWELL'S FORMULA)

यह मॉडल हेराल्ड डी. लॉसवेल ने प्रतिपादित किया। लॉसवेल अमेरिका के प्रसिद्ध राजनीतिशास्त्री हैं, इन्होंने संचार का ऐसा फार्मूला प्रतिपादित किया जो प्रश्न के रूप में था। उन्होंने बताया कि संचार कि प्रक्रिया को समझने के लिए सबसे बेहतर तरीका ये है कि निम्न पांच प्रश्नों के उत्तर का तलाश किया जाए। ये प्रश्न निम्न है-

- कौन (who)
- क्या कहा (says what)
- किस माध्यम से (in which channel),
- किससे (To whom) और
- किस प्रभाव से (with what effect)।

इसे निम्न तस्वीर के माध्यम से समझा जा सकता है।

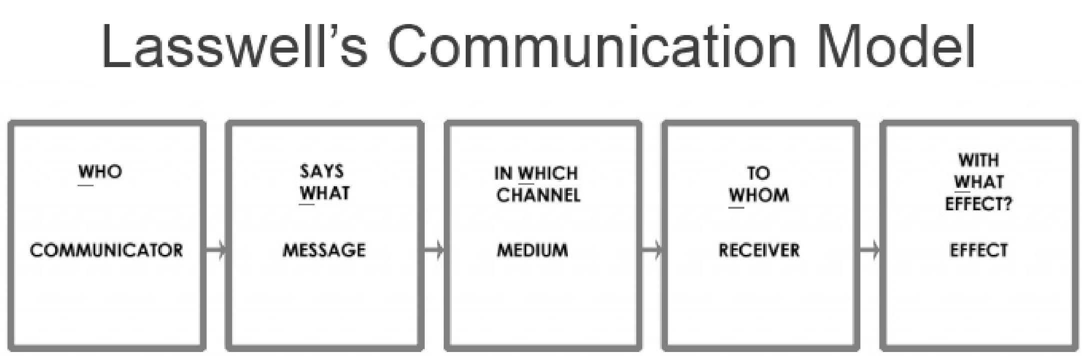

लॉसवेल फार्मूले की सीमाएं या कमियां:

- लॉसवेल का यह मॉडल एक रेखीय संचार प्रक्रिया पर को दर्शाता है, जो वन वे कम्युनिकेशन करता है।
- इस मॉडल में फीडबैक का उल्लेख नहीं किया गया है।
- संचार की परिस्थिति का स्पष्ट उल्लेख नहीं किया गया है।
- इस मॉडल में संचार के दौरान जो व्यवधान या रूकावट होती है उसे नजर अंदाज किया गया है।

संचार का SMCR प्रारूप (SMCR MODAL OF COMMUNICATION)

संचार के इस मॉडल को डेविड के. बरलो ने साल 1960 में प्रतिपादित किया।

जो कि निम्न है-

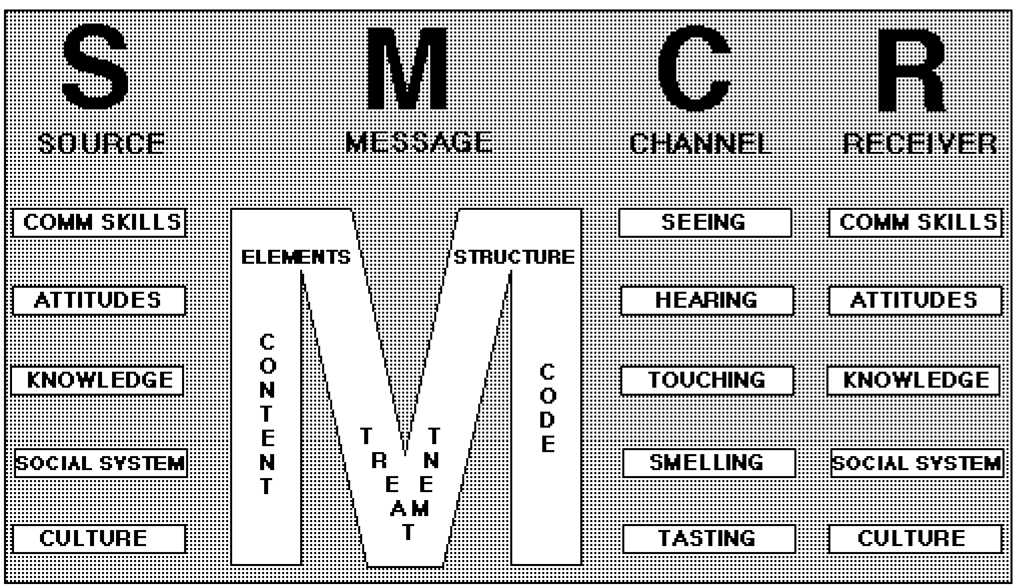

इस मॉडल में S-M-C-R का अर्थ है :-

S : Source (प्रेषक)

M : Message (संदेश)

C : Channel (माध्यम)

R : Receiver (प्राप्तक)

प्रेषक (Source) : जो किसी बात, भावना या विचार को किसी माध्यम से दूसरे तक पहुंचाता है उसे प्रेषक कहते हैं। संचार में प्रेषक का अहम योगदान है। प्रेषक बोलकर, लिखकर, संकेत देकर संचार कर सकता है।

संदेश (Message) : प्रेषक जो विचार या भावना दूसरे तक पहुंचाता है उसे संदेश कहते है। संदेश किसी भी रुप में शाब्दिक या अशाब्दिक संकेतिक इत्यादि रुप में हो सकती है। संदेश भाषाई दृष्टि से हिन्दी, अंग्रेजी, फारसी इत्यादि तथा चित्रात्मक दृष्टि से फिल्म, फोटोग्राफ इत्यादि के रूप में हो सकती है।

माध्यम (Channel) : माध्यम की मदद से ही संचारक संदेश को प्राप्तक तक पहुंचता है। संचार के दौरान प्रेषक द्वारा कई प्रकार के माध्यमों का उपयोग किया जा सकता है। प्राप्तक देखकर, सुनकर, स्पर्श कर, सूंघ कर तथा चखकर संदेश को ग्रहण कर सकता है।

प्राप्तक (Receiver) :संदेश को ग्रहण करने में प्राप्तक का महत्वपूर्ण योगदान होता है। यदि प्राप्तक की सोच सकारात्मक होती है तो संदेश अर्थपूर्ण होता है। इसके विपरीत, प्रेषक के प्रति नकारात्मक सोच होने की स्थिति में संदेश भी अस्पष्ट होता है।

इस मॉडल की सीमाएं या कमियां

इस संचार मॉडल में संचार प्रक्रिया का उल्लेख नहीं है।

5. एक तरफा संचार प्रारूप- (ONE-WAY COMMUNICATION MODAL)

इस मॉडल में यह बताया गया है कि अपने नाम के अनुसार ही यह संचार एक तरफा होता है इसमें संचारक अपनी बात, भावना, विचार प्राप्तक तक तो पहुंचाता है लेकिन प्राप्तक की तरफ से कोई प्रतिक्रिया

नहीं मिलती है। अगर प्राप्तक कोई प्रतिक्रिया देता भी है तो वह संचारक तक नहीं पहुंचता है।

उदाहरण- टीवी पर जब भी आप समाचार सुनते हैं तो उस वक्त आप सिर्फ समाचार को सून ही सकते हैं। आप उस समय चाहकर भी अपनी प्रतिक्रिया टीवी एंकर या समाचार प्रस्तोता तक नहीं पहुंचा सकते।

इस प्रक्रिया की परिकल्पना सबसे पहले हिटलर और रूजवेल्ट जैसे तानाशाह शासकों ने की, लेकिन इसका प्रतिपादन 20 वीं शताब्दी के तीसरे दशक के दौरान अमेरिकी मनोवैज्ञानिकों ने किया।

सीमाएं और कमिया- इस मॉडल की सबसे बड़ी त्रुटी ये है कि इसमें सूचना के प्रवाह को केवल संचार माध्यमों की मदद से दिखाया गया है, लेकिन समाज में सूचना का प्रवाह संचार माध्यमों के बिना भी प्रत्यक्ष रूप से होता है।

6. दो तरफा संचार प्रारूप (TWO- WAY COMMUNICATION MODAL)

संचार के इस मॉडल में संचारक और प्राप्तक दोनों को एक-दूसरे की भूमिका निभानी पड़ती है। इस मॉडल के अनुसार संचारक और प्राप्तक दोनों ही व्याख्याकार की भूमिका में होते हैं। इस मॉडल में जब संचारक अपनी बातों को प्राप्तक तक पहुंचाता है तब प्राप्तक भी अपनी प्रतिक्रिया यानी फीडबैक देता है। इसमें प्रत्यक्ष रुप से बात होती है। इस प्रकार के संचार के लिए टेलीफोन, मोबाइल, ई-मेल, एसएमएस, ई-मेल, सोशल नेटवर्किंग साइट्स, चैटिंग, जैसे माध्यमों की आवश्यकता पड़ती है।

इस प्रारुप को इस तस्वीर से समझा जा सकता है।

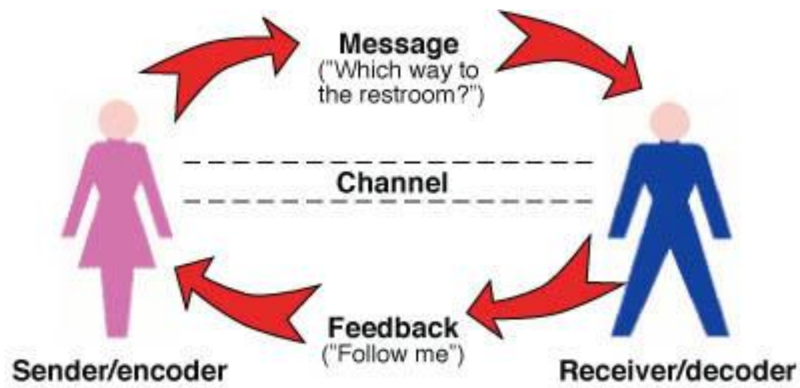

7.7 सारांश

स्पष्ट हैं कि संचार एक ऐसी क्रिया है जिसके द्वारा अर्थ का निरूपण एवं संप्रेषण सांझी समझ पैदा करने के प्रयास में किया जाता है, यह एक अन्त: व्यक्तिगत, अन्तर व्यक्तिगत, और समूह में अवलोकन, वार्ता, विश्लेषण और मूल्याकंन के द्वारा सम्पन्न होता है । संचार के पांच महत्वपूर्ण तत्व होते है - संचारक, संदेश, माध्यम, प्रापक और फीडबैक । संचार कि प्रक्रिया इन्हीं तत्वों से गुजर कर सम्पन्न होती है ।

7.8 अभ्यास प्रश्न

1. संचार प्रक्रिया सूचना प्रसारण की जानकारी दीजिये ?
2. संचार प्रक्रिया की अवधारणा के बारे में विस्तारपूर्वक समझाइये
3. संचार प्रक्रिया के तत्व के बारे में विस्तारपूर्वक समझाइये
4. संचार की प्रक्रिया के बारे में विस्तारपूर्वक समझाइये
5. संचार के मॉडल के बारे में विस्तारपूर्वक समझाइये

7.9 संदर्भ ग्रन्थ

प्रसार शिक्षा –डा. वंदना जैन , डा पूनम कुमारी

प्रसार शिक्षा-डा बी. डी. हरपलानी

प्रसार शिक्षा- डा वृंदा सिंह

इकाई-8

संचार के क्षेत्र एवं कार्य (Scope and Functions of Communication)

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 संचार के प्रकार

8.3 संचार के क्षेत्र

8.4 संचार के कार्य

8.5 मौखिक तथा अशाब्दिक संप्रेषण का आपेक्षिक महत्व

8.6 सारांश

8.7 अभ्यास प्रश्न

8.8 संदर्भ ग्रन्थ

8.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययनोपरांत विद्यार्थी-

1. संचार के प्रकार के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
2. संचार के क्षेत्र के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
3. छात्र संचार के कार्य के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
4. मौखिक तथा अशाब्दिक संप्रेषण का आपेक्षिक महत्व के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।

8.1 प्रस्तावना

संचार प्रेषक की प्राप्तकर्ता को सूचना प्राप्तकर्ता भेजने की प्रक्रिया है जिसमे जानकारी पहुंचाने के लिए ऐसे माध्यम (medium) का प्रयोग किया जाता है जिससे संप्रेषित सूचना प्रेषक और प्राप्तकर्ता दोनों समझ सकें यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा प्राणी विभिन्न माध्यमों के द्वारा सूचना का आदान प्रदान कर सकते हैं संचार की मांग हैं कि सभी पक्ष एक समान भाषा का बोध कर सकें जिस का आदान प्रदान हुआ हो, संचार श्रावानिक (auditory) माध्यम हैं (जैसे की) बोली, गान और कभी कभी आवाज़ का स्वर एवं गैर अशाब्दिक (nonverbal), शारीरिक माध्यम जैसे की शारीरिक हाव भाव (body language), संकेत बोली (sign language), सम भाषा (paralanguage), स्पर्श (touch), नेत्र संपर्क(eye contact) अथवा लेखन (writing) का प्रयोग - एक ऐसी क्रिया है जिस के द्वारा अर्थ का निरूपण एवं संप्रेषण (convey) सांझी समझ पैदा करने का प्रयास में किया जा सके। इस क्रिया में असंख्य कुशलताओं के रंगपटल की आवश्यकता है अन्तः व्यक्तिगत (intrapersonal) और अन्तर व्यक्तिगत (interpersonal) प्रक्रमण, श्रवण, अवलोकन, वार्ता, पूछताछ, विश्लेषण और मूल्यांकनइन प्रक्रियाओं का उपयोग विकासात्मक है और जीवन के सभी क्षेत्रों के लिए स्थानांतरित है : घर, स्कूल, सामुदायिक, काम और परे.संचार के द्वारा ही सहयोग और पुष्टिकरण होते हैं। संचार विभिन्न माध्यमों द्वारा संदेश भेजने की अभिव्यक्ति है चाहे वह मौखिक अथवा अमौखिक हो।

संचार आमतौर पर कुछ प्रमुख आयाम साथ में वर्णित है: विषय वस्तु (किस प्रकार की वस्तुएं संचारित हो रहीं हैं), स्रोत, स्कंदन करने वाला, प्रेषक या कूट लेखक (encoder) (किस के द्वारा), रूप (किस रूप में), चैनल (किस माध्यम से), गंतव्य, रिसीवर, लक्ष्य या कूटवाचक (decoder) (किस को) एवं उद्देश्य या व्यावहारिक पहलू.पार्टियों के बीच, संचार में शामिल है वे कर्म जो ज्ञान और अनुभव प्रदान करें, सलाह और आदेश दें और सवाल पूछें यह कर्म अनेक रूप ले सकते है, संचार के विभिन्न शिष्टाचार के कई रूपों में से उस का

रूप समूह संप्रेषण की क्षमता पर निर्भर करता है संचार, तत्त्व और रूप साथ में संदेश (message) बनाते हैं जो गंतव्य (destination) की ओर भेजा जाता है लक्ष्य ख़ुद, दूसरा व्यक्ति (person) या हस्ती, दूसरा अस्तित्व (जैसे एक निगम या हस्ती के समूह) हो सकते हैं

संचार प्रक्रिया या सूचना प्रसारण (information transmission) के तीन स्तरों द्वारा नियंत्रित नियमों के रूप में देखा जा सकता है-

1. वाक्यात्मक (Syntactic) (संकेतों और प्रतीकों का औपचारिक गुण),
2. व्यावहारिक (pragmatic) (संकेतों के बीच रिश्तों के साथ संबंध / अभिव्यक्ति और उनके प्रयोक्ताओं)
3. शब्दार्थ विज्ञान (semantic) (संकेत और चिह्न के बीच के संबंधों का अध्ययन और वह क्या प्रर्दशित करते हैं

संचार का क्षेत्र बहुत ही विस्तृत है। इसके बिना तो मानव जीवन की ठहर जाता है। व्यक्ति जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त तक किसी न किसी तरीके से संचार करता ही रहता है। एक बालक जन्म लेता है ते जन्म के साथ ही इस संसार से रोकर संचार करता है। फिर धीरे धीरे संचार के तरीके में बदलाव आता है। अब वह हाथ पैरों तो पटक कर, चहरे पर विभिन्न भाव लाकर, तोतली बोली बोलकर संचार कार्य करता है। धीरे धीरे उसकी संचार प्रक्रिया में परिष्कृति आती है और वह बोलकर, गाकर, लिखकर, खेल-कूद करके संचार कार्य करता है। औद्योगिक क्षेत्रों, व्यापारिक प्रतिष्ठानों, शैक्षणिक संस्थानों में संचार का बड़ा ही महत्वपूर्ण योगदान है। इसका अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि यदि पूरे दिन भर के लिए पूर्णत: ठप्प हो जाती है तथा कम्पनी को, औद्योगिक संस्थानों को भारी नुकसान उठाना पड़ता है। उपभोक्ता (जनता) तक पहुंचाता जाता है तभी इसकी सार्थकता रहती है अन्यथा इसका कोई महत्व नहीं रह जाता ।

8.2 संचार के प्रकार

भाषा

भाषा वक्याविन्यासी (syntactically) संकेतों कि संगठित प्रणाली है जैसे की वाणी की आवाज़, सप्रतीक अंतराल, या लिखित (written) चिह्न जो विचार या भाव संचारित करता है यदि संचार भाषा संकेतों, वाणी, ध्वनि, भाव या लिखित चिह्नों के माध्यम से वार्तालाप को कहते हैं, तो क्या जानवर की एक भाषा को संचार रुप मे जाना जा सकता है ? पशुओं के पास भाषा का कोई लिखित रूप नहीं होता, किंतु वार्तालाप के लिए भाषा का उपयोग करते हैं। इस मायने में, पशु भाषा को संचार कहा जा सकता है

मानवीय (Human) बोली एवं लिखित भाषा को संकेत (symbol) की प्रणाली कहा जाता है । अधिकतम मानवीय भाषायें ध्वनि (sound) या भाव (gesture) का प्रयोग चिह्नों के लिए करते हैं जो अपने आस पास वालों से संचार में मदद देते हैं हजारों मानवीय भाषायें हैं और उन में कईं समानताएं हैं, हालांकि इन समानताओं में भी भिन्नता है भाषा और बोली (dialect) के बीच कोई परिभाषित रेखा (no defined line) नहीं है, किंतु भाषा प्रवीण मेक्स वेंरैइच (Max Weinreich) को इस कहावत का श्रेय दिया जाता है की भाषा एक सेना और एक नौसेना वाली एक बोली है(a language is a dialect with an army and a navy) निर्मित भाषा जैसे एस्पेरान्तो क्रमादेश भाषाएं और विभिन्न गणितीय रचना मानवीय भाषा के सांझे गुणों से सीमित नहीं हैं

संवाद

संवाद दो या आधिक अस्तित्वों के बीच एक पारस्परिक (reciprocal)वार्तालाप (conversation) है । शब्द का मूल पांडुरंग सम्बन्ध युनानी (Greek) भाषा में διά(diá माने के द्वारा + + λόγος(लोगोस माने वाक्) अव्धार्नैयें जैसे अर्थ आद्यंत बहने की तरह) आवश्यक्तः यह नही दर्शाते जैसे मानव इस शब्द को प्रयोग में लाने लगे हैं, उपसर्ग διά(diá - के द्वारा) और δι- (di- दो) के बीच

उलझन के कारण यह समझा जाने लगा की संवाद केवल दो पक्षों के बीच होता है

अमौखिक संचार

अशाब्दिक संप्रेषण (non-verbal communication /NVC) से तात्पर्य सामान्यतः शब्द रहित संदेशों को भेजने एवं प्राप्त करने की संप्रेषण प्रक्रिया से है। अर्थात् भाषा ही संप्रेषण का एकमात्र माध्यम नहीं है, कुछ अन्य माध्यम भी हैं। इस प्रकार के संप्रेषण के लिए 'अवाचिक संप्रेषण', 'वाचेतर संपेप्रण'; 'अशाब्दिक संचार' आदि शब्दों का भी प्रयोग होता है।

अशाब्दिक संप्रेषण को शारीरिक हाव-भाव एवं स्पर्श (हैपटिक संप्रेषण), शारीरिक भाषा एवं भावभंगिमा, चेहरे की अभिव्यक्ति या आँखों के संपर्क से भी संप्रेषित किया जा सकता है। एन वी सी (NVC) को वस्तु सामग्री संप्रेषण यथा -वस्त्र, बालों की स्टाइल या स्थापत्य, प्रतीकों व चित्रों के माध्यम से भी संप्रेषित किया जा सकता है। आवाज या वाणी में पैरालैग्वेज नामक अशाब्दिक तत्व सम्मिलित होते हैं जिनमें आवाज की गुणवत्ता, भावना, बोलने के तरीके के साथ-साथ ताल, लय, आलाप एवं तनाव जैसे छन्द शास्त्र संबंधी लक्षण भी सम्मिलित हैं। नृत्य को भी अशाब्दिक संप्रेषण माना जाता है। इसी तरह, लिखित पाठ में भी अशाब्दिक तत्व होते हैं जैसे - हस्तलेखन तरीका, शब्दों की स्थान संबंधी व्यवस्था या इमोटिकॉन (emoticons) का प्रयोग किया जाता है

हालांकि, अशाब्दिक संप्रेषण का अधिकतर अध्ययन आमने-सामने की अंतःक्रिया (बातचीत) पर ध्यान केन्द्रित करता है, जहाँ इसे तीन प्रमुख क्षेत्रों में वर्गीकृत किया जा सकता है - वातावरणिक दशायें जहाँ संप्रेषण घटित होता है, संप्रेषण का शारीरिक चरित्रचित्रण एवं अंतःक्रिया (बातचीत) के दौरान संप्रेषकों का व्यवहार.[1]

गैर मौखिक संचार, संचार की वह प्रक्रिया है जिस मैं शब्दों के प्रयोग के बिना संदेश (message) भेजा और प्राप्त किया जाता है। ऐसे

संदेशों में भाव (gesture), शारीरिक भाषा (body language) अथ्वा मुद्रा (posture); चेहरे की अभिव्यक्ति (facial expression) और नेत्र संपर्क, वास्तु संचार जैसे पहनावा (clothing) केश सज्जा (hairstyles) अथवा निर्माण या चिन्ह और इन्फोग्राफिक्स - (info graphics) आठ तत्वों का समाविष्ट हो सकता है । इसी तरह लिखित ग्रंथों में अमौखिक तत्व जैसे लिखावट की शैली, शब्दों की स्थानिक व्यवस्था, या भाव्व्यक्तिकारानाभिरूप (emoticons) का उपयोग किया जाता हैं । अंग्रेज़ी शब्द 'इमोशन' (या एमोते) और 'आइकन' की खिचडी, 'एमोतिकों' एक चिन्ह या चिह्नों का समूह है जो लिखित या संदेश रुपी भावनात्मक अंतर्वस्तु को व्यक्त करने के लिए प्रयोग किया जाता है ।

1 मौखिक संचार

2 अमौखिक संचार

1. मौखिक संचार - इस क्षेत्र के विद्वान "शाब्दिक" शब्द के सख्त अर्थ का प्रयोग करते हैं, जिसका मतलब "शब्द से संबंधित या शब्द का " है तथा वे मौखिक या बोले गये संप्रेषण के पर्यायवाची के रूप में "मौखिक संप्रेषण" प्रयोग नहीं करते. अतएवं, मौखिक ध्वनियाँ जो कि शब्द नहीं मानी जातीं, जैसे कि घुरघुराना या शब्द रहित गायन या गुनगुनाना आदि अशाब्दिक हैं। संकेत भाषा तथा लेखन को सामान्यतः शाब्दिक संप्रेषण का रूप माना जाता है क्योंकि दोनों में शब्दों का इस्तेमाल होता है - यद्यपि वाणी की तरह दोनों में पराभाषीय तत्व हो सकते हैं एवं जो प्रायः अशाब्दिक संदेशों में दिखलायी देते हैं । अशाब्दिक संप्रेषण किसी भी माध्यम द्वारा हो सकता है।

जब हम बोलते (या सुनते) हैं तो हमारा ध्यान शारीरिक भाषा की जगह शब्दों पर होता है। लेकिन हमारे बारे में कोई भी निर्णय उक्त दोनों पर निर्भर है। एक दर्शक शाब्दिक और गैर शाब्दिक, दोनों संकेतों पर एक साथ ध्यान देता है। शरीर संचालन स्वयं में सकारात्मक या नकारात्मक नहीं होता, अपेक्षाकृत इसके, स्थिति एवं संदेश ही

मूल्यांकन को तय करेंगे." हम सभी प्रतिदिन प्रात: सोकर उठने से लेकर रात्रि को सोने से पहले तक हजारों हजार बार मौखिक रूप से संचार करते हैं Dahama के शब्दों में "On an average a person spends about 70% of his active time on communication verbally – listening, speaking, reading and writing. In other words each of spends about 10 or 11 hours a day as verbal communication." अत: मौखिक रूप से बोलकर हम अपनी बातों, विचारों, भावनाओं का आदान प्रदान करते हैं। अपनी समस्याओं को सुलझाते हैं। आदेश निर्देश अनुसार दैनिक क्रियाकलापों को सम्पन्न करते हैं। जैसे प्रात:काल सोकर उठते ही बड़ों को नमस्ते कहना, छोटों को प्यार करना, बच्चों को ब्रश करने के लिए कहना, चाय पीने के लिए आग्रह करना, फिर नाश्ता तैयार करने के लिए कहना। अत: बातचीत द्वारा संचार प्रक्रिया आरंभ हो जाती है। इस प्रकार हम दिन भर में आधे से ज्यादा समय तक मौखिक संचार द्वारा अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं तथा विचारों को आदान प्रदान करते हैं।

2. अमौखिक संचार

इसके अन्तर्गत हमारे भाव-भागिमाएं, चेहरे की अभिव्यक्ति, बातचीत करते समय शारीरिक मुद्राओं का प्रदर्शन, हाथों को हिलाना आदि आते हैं। हम मौखिक संचार करते समय भाव-भंगिताओं, चेहरे के हाव भाव के प्रदर्शन से संचार प्रक्रिया को ओर भी अधिक जीवंत बना देते हैं। यदि संचार करते समय ऐसा प्रतीत होता है कि श्रोता हमारी बातों पर ध्यान नहीं दे रहे हैं तो हम बोलने का ढंग बदल लेते हैं। उन्हें बोरियत से बचाने के लिए हंसी मजाक की कुछ फुहारें भी छोड़ते हैं। उनका ध्यानकर्षण के लिए एक तरफा नहीं अपितु द्वितरफा संचार कहते है तथा उन्हीं से प्रश्नों का उत्तर पूछते हैं । उनके ध्यान को अपनी तरफ आकर्षित करने के लिए देखिए, सुनिए, ध्यान दीजिए, चुप रहिए आदि का प्रयोग करते हैं। बीच बीच में कहावतों तथा मुहावरों का प्रयोग करते हैं। एक अच्छा वक्ता बड़ी ही चतुराई से दर्शक का मन

मोह लेता है। अपने शब्द जाल से उन्हें इस तरह से बांध लेता है कि श्रोता उठना ही नहीं चाहता। ऐसे वक्ता का भाषण नहीं सुन पाना श्रोता का अखरता है।

3. लिखित संचार

जब हम अपनी बातों को श्रोता तक लिखित रूप में पहुंचाते हैं तो वह लिखित संचार कहलाता है। परन्तु ऐसा संचार शिक्षित लोगों के साथ ही हो सकता है। अशिक्षित जनता इसका लाभ नहीं ले पाती हैं। इसके लिये भाषा का ज्ञान होना जरूरी है।

4. समूह संचार

जब हम अपनी बातों को समूह तक पहुंचाते हैं चाहे वह गोष्ठी के माध्यम से हो, कार्यशाला के माध्यम से हो अथवा अन्य किसी भी माध्यम से तो वह समूह संचार कहलाता है। कठपुतली का खेल, नाटक, प्ले ग्रुप पोस्टर, चार्ट फ्लैश कार्ड आदि के माध्यम से हम एक छोटे से समूह को शिक्षित कर सकते हैं।

5. स्व संचार -

जब हम सोचते हैं, विचारते हैं, मंथन करते है, म नही मन कुछ कुछ करने ही ठानते हैं तो ऐसा संचार स्व संचार कहलाता है। उपर्युक्त सभी संचारों के बारे में विस्तृत से अध्ययन पूर्व में किया जा चुका है।

8.3 संचार के क्षेत्र

संचार का निम्नलिखित क्षेत्रों में विशेष योगदान हैं -

1. प्रबंधन के क्षेत्र में

प्रबंधन तथा उत्पादन के क्षेत्र में संचार का बहुत अधिक महत्व है। विशेषकर प्रसार कार्य तो बिना संचार के हो ही नहीं सकता है। यदि प्रबंधन को शरीर मानें तो संचार उसकी आत्मा है। बिना आत्मा के शरीर का जैसे कोई मोल नहीं होता, ठीक उसी प्रकार बिना संचार के प्रबंधन का कोई स्थान ही नहीं है। जब नवीन चीजों का आविष्कार किया जाता है तो विज्ञापन के माध्यम से इसे घर घर तक पहुंचाया

जाता है। विज्ञापन जितना अधिक प्रभावशाली होता है, उसका उतना ही व्यापक असर होता है। हम लोग नित्य प्रति ही रेडिया तथा टेलिविजन के विज्ञापनों को देखते सुनते हैं। विज्ञापन के माध्यम से चीजों को बाजार में बेचा जाए, परन्तु उनका विज्ञापन नहीं किया जाए तो उस वस्तु की जानकारी लोगों के नहीं हो पाती है। परिणामत: उसका विक्रय कम हो जाता है। इसीलिये उत्पादन अखबार, टीवी चैनलों, रेडियो, फिल्म शो, पत्र पत्रिकाओं आदि माध्यम से वस्तु का विज्ञापन करता है। अत: उत्पादन का प्राथमिक उद्देश्य वहीं रहता है कि उत्पादित वस्तु का ज्यादा से ज्यादा विज्ञापन किया जाए । प्रचार प्रसार किया जाए । O.P. Dahama के शब्दों में ("in industrial management most of the working, day is spent is talking, giving information to subordings, receiving information from top management and transmiting it to them. Meeting and interviewing automation develops even the mere machine operator will spend more time is manipulating symbols.

2. संचार उद्योग के क्षेत्र में

संचार उद्योग में संचार शोधकर्ताओं का बहुत बडा योगदान है। वे विज्ञापन को तहर की भाषा व शैली तैयार करते हैं जो अत्यधिक प्रभावशाली होता है। जिसकी अमिट छाप श्रोता के मन मस्तिष्क पर पड़ जाती है, जैसे - रिन साबुन का इतना अधिक विज्ञापन किया जाता है कि हम बाजार में साबुन खरीदने के लिए जाते हैं तो पहले हमारी नजर रिन साबुन पर ही पड जाती है तथा हम रिन साबुन ही खरीदते हैं। इसी प्रकार बालक टी.वी. में मैगी, चॉकलेट, नुडल्स, आदि चीजों का विज्ञापन देखते हैं तथा इन्हें खरीदने व खाने के लिए मांग करते हैं। जिन वस्तुओं का जितना अधिक प्रसार प्रचार होता है, उसकी मांग उतनी ही ज्यादा होती है।

3 कृषि क्षेत्र

कृषि क्षेत्र में संचार का बहुत अधिक महत्व है। एक कृषक अपने पैदावार में तभी बढोतरी कर सकता है, जब वह आधुनिक ढंग से खेती करें । अत्याधुनिक उपकरणों/यंत्रों का प्रयोग करें । उन्नत बीज तथा खाद का प्रयोग करे। समय पर सिंचाई, निराई, गुडाई करें। इसके लिए उसे नवीनतम सूचाओं की जानकारी होनी चाहिए। अन्यथा वह कृषि क्षेत्र में पिछड़ जाएगा। कृषि के क्षेत्र में क्या अनुसंधान हो रहे है कौनसी फसल किस माह में बोयी जाए, कौन से खाद बीज उर्वरक का प्रयोग किया जाए, कब कीटनाशकों का प्रयोग किया जाए, कब कटाई की जाए, आज की तिथि में फसल की कीमत बाजार में क्या है। इन सभी बातों की जानकारी अत्याधुनिक संचार साधनों से हो जाती है। भारत में, पंजाब के कृषक कृषि के क्षेत्र में अग्रणी है तथा उत्तम किस्म की फसल उत्पादन करते है। जबकि बिहार, उत्तर प्रदेश, राजस्थान तथा बंगाल के कृषक उस ढंग से खेती न करके न तो उतना अधिक उत्पादन कर पाते हैं और न ही उन्नत किस्मों की फसल का ही उत्पादन कर पाते हैं।

4 शिक्षण संस्थानों में

सीखने सिखाने, पढ़ने लिखने, प्रशिक्षण देने, प्रशिक्षण ग्रहण करने का कार्य संचार के बिना संभव ही नहीं है। यह तो शिक्षण संस्थान का हृदय है। जिसके सफल तरीके से काम करने पर ही शिक्षण संस्थान का नाम होता है। विद्यार्थियों को पढ़ाने के लिए शिक्षक मौखिक संचार करते है। ब्लैकबोर्ड पर लिखकर समझाते है। चार्ट, पोस्टर, फोल्डर, पम्पलेट का प्रयोग करते हैं। शिक्षण को और अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए प्रोजेक्टर का प्रयोग करते हैं। अत: संचार के बिना तो शिक्षण संस्थान मात्र एक निर्जीव पदार्थों से बना हुआ (ईंट, चूना गारा, सीमेंट, लोहा आदि) भवन है ।

स्मरण रहे। संवादहीनता के कारण रिश्ते टूट जाते हैं। कई सारी बाधाएं जीवन में इसीलए भी आती है कि हम दूसरे लोगों से सही ढंग से संचार नहीं कर पाते है।

8.4 संचार के कार्य

संचार के बिना सारा संसार सूना है। यदि संचार नहीं हो तो न तो हम एक दूसरे की भावनाओं को जान, सुन, समझ पाएंगे और न ही उनकी समस्याओं का समाधान हो कर पाएंगे। अत: समस्या समाधान ही पहली सीढी है संचार। अर्थात् भावनाओं/विचारों/तथ्यों/सूचनाओं की अभिव्यक्ति। मानव सभ्यता के विकास का सबसे बडा तथा महत्वपूर्ण कारण ही संचार है। संचार के कारण ही आज सम्पूर्ण विश्व एक छोटा सा गांव की तरह हो गया है। हम सात समदंर पार अपने नाते रिश्तेदारों से पलक झपकाते ही बातें कर लेते हैं तथा अपनी बातें बता देते हैं। इतना ही नहीं, वहां उनके घर में क्या घटित हो रहा है। इसकी जानकारी भी हमें Live Telecast से हो जाती है। टेलीफोन, इन्टरनेट, सेटेलाइट, टेलीविजन, वीडियो, कैमरा आदि इसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है, आज व्यक्ति अकेला होकर भी अकेला नहीं रह गया है। वह घर बैठे अनेक लोगों से सम्पर्क साध लेता है। अपना मनोरंजन कर लेता है तथा समझ का सही ढंग से सदुपयोग कर लेता है। अत: संचार के कार्यों को शब्दों में बांध पाना उतना ही कठिन कार्य है जितना कि रेत का महल खडा करना तथा पानी से पानी पर पानी को लिखना। संचार के बिना तो हमारी दिनचर्या ही ठप्प हो जाती है।

Lee Thayer ने संचार के मुख्य चार कार्य बतायें हैं, ये निम्नानुसार हैं -

1. सूचना कार्य

संचार का सबसे पहला तथा प्रमुख कार्य है सूचनाओं को आदान प्रदान करना । हमारे चारों तरफ के वातावरण से क्या घटित हो रहा है इसकी सूचना हमें अखबार, टीवी, पत्र पत्रिकाओं, रेडियो, कम्प्यूटर आदि से ही पाती है। जरा सोंचे यदि संचार माध्यम नहीं हो तो कैसे तथा किस प्रकार एक रोगी अपनी तकलीफ के बारे में चिकित्सक को बता सकता है। दूर देश में बैठा व्यक्ति अपने सगे संबंधियों तथा आत्मीय जनों से कैसे बातें कर सकता है तथा अपने बारे में बता सकता है। इसलिये सूचनाओं के क्षेत्र में संचार का अमूल्य स्थान है।

2. कमांड या निर्देशानात्मक कार्य

कमांड करने तथा निर्देश देने व प्राप्त करने में संचार का अति महत्वपूर्ण स्थान है जिसे कदापि नकारा नहीं जा सकता है। हम अपने से छोटों को घर में भी कई प्रकार के निर्देश देते रहते है। इसी प्रकार ऑफिस में अपने कर्मचारियों को सभा बुलाकर, टेलीफोन से सम्पर्क स्थापित करके, पत्र लिखकर, इन्टरनेट के जरिये से निर्देश देते रहते है कि क्या करना, कब करना है, कैसे करना है, किन तक लाभ पहुंचाना, है किन कार्यों को बिल्कुल भी नहीं करना इत्यादि है । किस समय तक कार्य को पूरा कर देना हैं आदि बातों की समस्त जानकारी आदेशों, निदेर्शों के माध्यम से देना ही कमांड या निर्देशात्मक कार्य कहलाता है - O.P. Dahama के शब्दों में Theose who are hierarchically superior (in famaliy, business milltary, civic or personal life) often intiate either for the purpose of infoming their sub ordinates or for the purpose of telling them what to do, how to do” घर के बड़े बुर्जुग हो अथवा कार्यालय के बॉस, जब कुछ कहते हैं, निर्देश देते हैं तो दूसरे सदस्य उनकी बातों को मानते हैं। उनके कहे अनुसार कार्य करते हैं जैसे अधिकारी कार्यालय से किसी कर्मचारी को कोई बात करता है अथवा कार्य करने का निर्देश देता है तो कर्मचारी को खुशी होती है कि बॉस ने उसे ही उस कार्य के लिए चुना है। वह सभी कर्मचारियों से अधिक योग्य तथा सक्षम है। अत: वह कार्य करके प्रसन्न होता है। David Barlo ने संचार के इस कार्य का वर्णन करते हुए लिखा है कि कोई भी कर्मचारी अपने बॉस के निर्देशानुसार किसी भी कार्य को इन चार शर्तों पर ही करता हैं -

1. He can and does understand the communication
2. At the time of his decision he beliveves that it is not in consistant with the purpose of organization
3. At the time his decision he believes it to be compatible with is personal interest as whole and
4. He is albe mentally and physically to comply with it.

संचार का यह कम्पांडिंग कार्य मुख्य रूप से अपवाद हैं जहां पिता पुत्र को, बहु सास को, मां बेटी को, बड़े भाई छोटे भाई बहिन को विभिन्न प्रकार से आदेश निर्देश देते रहते हैं तथा कार्य करवाते रहते है।

3 प्रभावशील हृदयग्राही -

संचार का तीसरा महत्वपूर्ण प्रमुख कार्य है - लोगों के ज्ञान, कार्य-कुशलता, व्यवहार तथा अभिवृत्ति में परिवर्तन लाना। यह कार्य कैसे तथा कब किए जाएं जिससे कि दूसरे लोग प्रभावित हों। अर्थात् दूसरे लोगों को प्रभावित करना तथा उनके पीछे पडकर उनके व्यवहार, ज्ञान एवं मनोवृत्ति में परिवर्तन लाना संचार का कार्य है। Aristole के अनुसार - संचार का मुख्य उद्देश्य हृदय में स्वीकारना है। जब संचार के माध्यम सशक्त तथा प्रभावशाली होते हैं तो लोगों के बातों, विचारों, तथ्यों, अभिवृत्तियों एवं व्यवहार में परिवर्तन लाना आसान होता है।

4 समेकित (समन्वित) कार्य -

संचार का चौथा महत्वपूर्ण कार्य है - समेकित कार्य। यहां समेकित का अर्थ है - बिखराव को रोकना। सभी के साथ मिल जुलकर कार्य करना। विश्व बंधुत्व की भावना का विकास करना। व्यक्ति चाहे जिस किसी भी धर्म, समुदाय, वर्ग, समाज व राष्ट्र का हो सभी से प्रेमपूर्वक रहना तथा देशहित में कार्य करना। लोगों के भीतर पनप रहे अहम् को दूर करना। संचार का यह कार्य सर्वाधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि किसी भी देश की एकता तथा अखंडता के लिये यह अत्यावश्यक है कि सभी लोग मिल जुलकर रहें। देश हित में कार्य करें। विकास में अपना योगदान दें। आर्थिक रूप से समृद्ध होकर अपना तथा अपने परिवार व समाज का कल्याण करें। सभी प्रकार की बुराइयों से दूर रहें।

17 वीं शताब्दी में मनोविज्ञान संकाय की स्थापना की गई। जिसमें मस्तिष्क तथा आत्म के बीच अंतर स्पष्ट करने के लिए प्रयास किया गया है। यह Mind soul dualism का मुख्य उद्देश्य संचार के दो स्वतंत्र कार्यों को बताना है। वहीं आत्मा का संबंध संवेग से है। कहने का अर्थ होता है कि जब हम किसी को कोई सुखद समाचार देते हैं तो

देने वाने का भी मन आनंदित व प्रफुल्लित रहता है तथा प्राप्तकर्ता भी खुश से झूम उठता है।

यदि हम संचार के उद्देश्यों पर विचार करें तो दो बातें हमारे समक्ष प्रकट होती है -

1. कौन का उद्देश्य

संचार का प्रथम उद्देश्य है कौन अर्थात जो बातें बतायी जा रही है, जो विचार दिये जा रहें जें जो उपकरण तैयार किये जा रहे है । वह किसके लिए जा रहे है। उसके लाभार्थी कौन हैं । कौन हैं सूचना प्राप्तकर्ता, अथवा श्रोता । क्या वह युवक है, युवती है कृषक है व्यापारी है शिक्षक है, विद्यार्थी है, चिकित्सक है, मंत्री है विधायक है, गा्रमीण जनता है, शहरी जनता है। अर्थात् दूसरे लोग उसे पढ़े । गायक गाता है ताकि दूसरे लोग उसके गीत को सुने। चिकित्सक चिकित्सा की पढाई इसलिये करता है ताकि वह रोगियों का इलाज कर सके। यदि लेखक ऐसी किताबें लिखें तो विद्यार्थी के लिये काम की नहीं हो तो उसका लिखना व्यर्थ हो जाता है। इसी प्रकार वक्ता भाषण देता है परन्तु यदि श्रोता इस भाषण को सुने ही नहीं तो उसका भाषण देना बेकार हो जाता है। क्योंकि लोग एकाग्रता से सुनते ही नहीं है। अत: संचार का प्रथम उद्देश्य है कौन । कौन है श्रोता प्राप्तकर्ता, लाभार्थी जिसके लिए संचार कार्य किये जा रहे है।

2. कैसे का उद्वेश्य

संचार के निमित संदेश कैसे पंहुचाये, जांए संवाद किस तरह से दिए जाएं कि वह श्रोता के मन मस्तिष्क को झकझोर कर रख दे तथा हम जो व्यवहार में परिवर्तन लाना चाहते है वह हो जाए । अच्छा संवाद भी व्यक्ति के दिलो दिमाग पर तब तक असर नही करता है जब तक कि उसे अच्छी तरह से उच्चारित करके श्रोता तक नहीं पहुंचाया जाए। उदाहरणार्थ कुछ शिक्षक के पढ़ाने का ढंग उतना अच्छा होता है कि उसकी कक्षा में विद्यार्थियों की भीड उमड़ती हैं वहीं कुछ शिक्षक इतना नीरस ढंग से पढ़ाते हैं कि विद्यार्थी कक्षा में उपस्थित ही नहीं होते

बल्कि उस शिक्षक को उस कक्षा से हटाने की मांग भी करते हैं। यदि उस शिक्षक को उनके कक्षा से नहीं हटाया जाता है तो वह आंदोलन तक कर देते है। अत: संदेश को श्रोता तक पहुंचाने के लिए प्रभावशाली विधि का चयन किया जाए

संचार के क्षेत्र एवं कार्य -मात्र एक नजर में

(Scope and Functions of Communication: At a Glance)

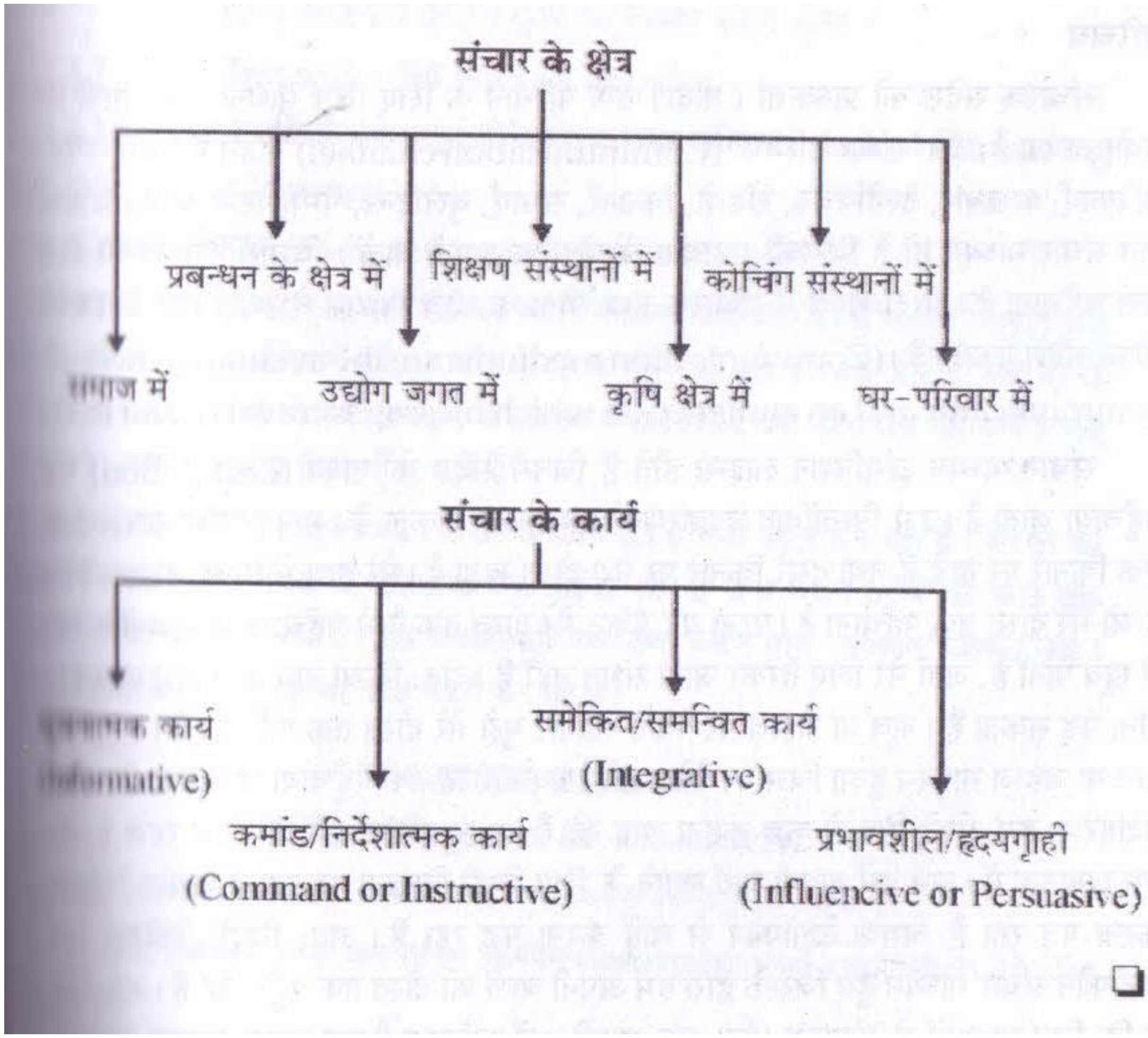

8.5 मौखिक तथा अशाब्दिक संप्रेषण का आपेक्षिक महत्व

एक दिलचस्प प्रश्न है कि : जब दो व्यक्ति आमने सामने संप्रेषण कर रहें हो, शाब्दिक रूप से कितना अर्थ संप्रेषण किया जाता है, तथा कितना अशाब्दिक रूप से संप्रेषित होता है। इसे अल्बर्ट मेहराबियां ने अन्वेषित किया है तथा दो शोध पत्रों में प्रकाशित किया है बाद के शोध पत्र में निष्कर्ष निकाला है कि : "यह सुझाव दिया गया है कि

समकालिक शाब्दिक, मौखिक तथा चेहरे के मनोभाव संप्रेषण का संयुक्त प्रभाव उनके स्वतंत्र प्रभावों का क्रमशः .07, .38 तथा। 55 गणकों के साथ भारित योग होता है। बोले गये शब्दों, वॉइस टोन तथा चेहरे की अभिव्यक्ति से कुल अर्थ में क्रमशः 7%, 38% तथा 55% योगदान होता है, से प्राप्त यह "नियम" व्यापक रूप से उद्धत किया जाता है। इसे सभी प्रकार के लोकप्रिय पाठ्यक्रम में, "वैज्ञानिकों ने पाया है कि..."जैसे बयानों के साथ प्रस्तुत किया जाता है।" वास्तव में, यद्यपि, यह अत्यंत कमजोर रूप से स्थापित है। प्रथम, यह एकल टेपरिकार्डेड शब्दों के अर्थों के निष्कर्ष पर आधारित है, जैसे कि, एक बहुत ही कृत्रिम संदर्भ. दूसरा, आंकड़े दो विभिन्न अध्ययनों को मिलाकर प्राप्त किये जाते हैं जो कभी मिलाये नहीं जा सकते तीसरा, यह केवल सकारात्मक बनाम नकारात्मक संप्रेषण से संबंधित होता है। चौथा, यह केवल महिलाओं से संबंधित होता है, क्योंकि पुरुष अध्ययन में भाग नहीं लेते।

तब से, अन्य अध्ययनों ने अधिक स्वाभाविक परिस्थितियों के अन्तर्गत शाब्दिक तथा अशाब्दिक संकेतों के आपेक्षिक योगदान का विश्लेषण किया है। विषयों को दिखाये गये वीडियो टेप्स का प्रयोग करते हुए आर्गिल ने विनम्र/हावी रवैये के संप्रेषण का विश्लेषण किया है तथा पाया है कि अशाब्दिक संकेतों में शाब्दिक संकेतों का 4.3 गुना प्रभाव होता है। अत्यधिक महत्त्वपूर्ण प्रभाव यह था कि शरीर मुद्रा ने अत्याधिक कुशल तरीके से बेहतर स्थिति सम्प्रेषित की है। दूसरी ओर, हसी एट ऑल ने एक व्यक्ति के सुखी/दुखी होने के आयाम पर अध्ययन किया तथा पाया कि आवाज के कम से कम उतार चढ़ाव के साथ बोले गये शब्दों में बगैर आवाज की फिल्म में देखी गई चेहरे की अभिव्यक्तियों की अपेक्षा 4 गुना अधिक प्रभाव होता है। इस प्रकार बोले गये शब्दों तथा चेहरे की अभिव्यक्तियों का आपेक्षित महत्व विभिन्न सेटअप का प्रयोग करते हुये अध्ययन में अत्यधिक अलग हो सकता है।

शाब्दिक तथा अशाब्दिक संप्रेषण की परस्पर क्रिया

सम्प्रेषण करते समय अशाब्दिक संदेश, शाब्दिक संदेशों के साथ 06 प्रकार से परस्पर क्रिया कर सकते हैं- दोहराकर, टकराव से, पूरक बनकर, स्थानापन्न कर, नियमित करके तथा उच्चारण/संयमित करके.

दोहराना

दोहराना में शाब्दिक संदेश को मजबूत करने के लिये हावभाव का प्रयोग सम्मिलित होता है, जैसे कि विचार-विमर्श के लक्ष्य को इंगित करना

टकराव

एक ही परस्पर क्रिया में शाब्दिक तथा अशाब्दिक संदेश कई बार परस्पर विरोधी अथवा टकराव के संदेश भेज सकते हैं। सत्य को अभिव्यक्त करते समय एक व्यक्ति आँख मिलाकर बात न करने के कारण बातचीत के दौरान संदेश प्राप्तकर्ता के मन में मिश्रित भाव पैदा कर सकता है। टकराव युक्त संदेश विभिन्न कारणों से घटित हो सकते हैं जो प्रायः अनिश्चितता, ढुलमुल रवैये अथवा कुंठा की अनुभूति से उत्पन्न होते हैं।[17] जब मिले जुले संदेश व्यक्त होते हैं तब अशाब्दिक संप्रेषण स्थिति को स्पष्ट करने के लिये अतिरिक्त सूचना प्राप्त करने के लिये व्यक्तियों द्वारा प्रयोग किया जाने वाला प्रमुख साधन है; जब बातचीत के दौरान व्यक्ति मिश्रित संदेश अनुभव करते हैं। जब शारीरिक संचालन और स्थिति पर अधिक ध्यान दिया जाता है ।

पूरक

जब शाब्दिक तथा अशाब्दिक सम्प्रेषण एक दूसरे के पूरक बनते हैं, तब संदेश की सटीक व्याख्या आसान बन जाती है। सम्प्रेषण लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिये प्रयास करते समय भेजी गई सूचना को सुदृढ़ करने के लिये शाब्दिक संदेशों को विस्तृत करने के लिये अशाब्दिक संकेतों का प्रयोग किया जा सकता है; जब अशाब्दिक संकेत शाब्दिक विनिमय की दृढ़ता से पुष्टि करते हैं,

स्थानापन्न कर

अशाब्दिक आचरण कई बार संदेश के सम्प्रेषण के लिये एकमात्र चैनल के रूप में प्रयोग किया जाता है। व्यक्ति, चेहरे की अभिव्यक्ति, शारीरिक संचलन तथा शारीरिक स्थिति को उनके साथ जुड़ी विशिष्ट भावनाऐं तथा अभिप्राय के लिये पहचानना सीखते हैं। अशाब्दिक संकेतों को संदेश को व्यक्त करने के लिये बगैर शाब्दिक सम्प्रेषण के प्रयोग किया जा सकता है; जब अशाब्दिक आचरण संदेश को प्रभावी रूप से सम्प्रेषित नहीं करता, समझ को बढ़ाने के लिये शाब्दिक विधियों का प्रयोग किया जाता है।

नियमित करनाः

अशाब्दिक आचरण भी हमारे वार्तालाप को नियमित करता है। उदाहरण के लिये, किसी की भुजा को पकड़ने से यह संकेत मिलता है कि आप बात करना अथवा अवरोध करना चाहते हैं।

उच्चारण/संयमित करना

अशाब्दिक संकेत शाब्दिक संदशों की व्याख्या को बदलने के लिये प्रयोग किये जाते हैं। स्पर्श, आवाज का स्वर या पिच तथा हावभाव आदि ऐसे साधन हैं, जो कि व्यक्तियों द्वारा भेजे गये संदेश का उच्चारण करने अथवा उसे बढ़ाने के लिये प्रयोग किए जाते हैं; अशाब्दिक आचरण को भी शाब्दिक संदेश के पहलुओं को भी संयमित करने अथवा कम करने के लिये प्रयोग किया जा सकता है।उदाहरण के लिए, एक व्यक्ति जो शाब्दिक रूप से गुस्सा अभिव्यक्त कर रहा है, शाब्दिक संदेश का उच्चारण मुट्ठी से धक्का देकर कर सकता है।

8.6 सारांश

संचार कई स्तरों पर कई अलग- अलग तरीको से होता है प्राणियों के बीच मशीन और प्राणी के बीच पशु और प्राणी के बीच स्व या आत्म के साथ समूह के महत्व संचार को जानने के लिये संचार के क्षेत्र उसके

कार्य और प्रक्रिया को समझना नितांत आवश्यक हैं शाब्दिक और अशाब्दिक सम्प्रेषण की परस्पर क्रिया को समझ कर हम अधिकांश सम्प्रेषणीय बन सकते है ।

8.7 प्रश्न

1. संचार के प्रकार के बारे में बताइए
2. संचार के क्षेत्र की विस्तृत जानकारी दीजिये
3. संचार के कार्य की विस्तृत जानकारी दीजिये
4. मौखिक तथा अशाब्दिक संप्रेषण का आपेक्षिक महत्व को समझाइये

8.8 संदर्भ ग्रन्थ

प्रसार शिक्षा –डा. वंदना जैन , डा पूनम कुमारी

प्रसार शिक्षा-डा बी. डी. हरपलानी

प्रसार शिक्षा- डा वृंदा सिंह

इकाई 9

गैर सरकारी संगठन

9.0 उद्देश्य
9.1 प्रस्तावना
9.2 कपार्ट
9.3 चेतना
9.4 केपर
9.5 सेवा
9.6 पंचायती राज
9.7 सारांश
9.8 अभ्यास प्रश्न
9.9 संदर्भ ग्रन्थ

9.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययनोंपरांत विद्यार्थी-

1. कपार्ट की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
2. चेतना की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
3. केपर की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
4. सेवा की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
5. पंचायती राज की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।

9.1 प्रस्तावना

गैर सरकारी संगठन (**NGO**) एक ऐसा शब्द है जो बिना किसी सरकारी भागीदारी या प्रतिनिधित्व के साथ प्राकृतिक या कानूनी

व्यक्तियों के द्वारा बनाए गए विधिवत संगठित गैर सरकारी संगठनों को संदर्भित करने के लिए व्यापक रूप से स्वीकार किया गया है। उन मामले में जिनमें गैर सरकारी संगठन पूरी तरह से या आंशिक रूप से सरकारों द्वारा निधिबद्ध होते हैं, NGO अपना गैर-सरकारी ओहदा बनाए रखता है और सरकारी प्रतिनिधियों को संगठन में सदस्यता से बाहर रखता है। शब्द इंटरगवर्नमेंटल ओर्गेनाइज़ेशन के विपरीत, "गैर सरकारी संगठन" एक आम उपयोग का शब्द है, लेकिन इसकी कानूनी परिभाषा नहीं है। कई न्यायालयों में इस प्रकार के संगठनों को "नागरिक समाज संगठन" के रूप में परिभाषित किया जाता है या अन्य नामों से निर्दिष्ट किया जाता है।

अनुमान है कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सक्रिय गैर सरकारी संगठनों की संख्या 40,000 है। राष्ट्रीय संख्या और भी अधिक है: रूस में 277,000 गैर सरकारी संगठन हैं। भारत में 1 मिलियन और 2 मिलियन के बीच गैर सरकारी संगठन होने का अनुमान है

गैर सरकारी संगठनों की शुरुआत प्राचीन काल से हुई थी। अंतरराष्ट्रीय गैर सरकारी संगठनों के इतिहास का तिथि-निर्धारण कम से कम 1839 से है।[4] रोटरी, बाद में **रोटरी इंटरनेशनल**, 1905 में स्थापित किया गया था। अनुमान लगाया गया है कि 1914 तक 1083 गैर सरकारी संगठन स्थापित हो चुके थे । अंतरराष्ट्रीय गैर सरकारी संगठन गुलामी-विरोध आंदोलन और महिला मताधिकार आंदोलन में महत्वपूर्ण थे और **विश्व निरस्त्रीकरण सम्मेलन** के समय एक चोटी पर पहुंच गए। हालांकि, वाक्यांश "गैर सरकारी संगठन" 1945 में **संयुक्त राष्ट्र संगठन** की स्थापना के साथ ही लोकप्रिय प्रयोग में आया, **संयुक्त राष्ट्र चार्टर** के अध्याय 10 के अनुच्छेद 71 में उन संगठनों के लिए सलाहकार भूमिका के प्रावधानों के साथ, जो ना तो सरकारी है और न ही राज्य सदस्य . **"अंतर्राष्ट्रीय गैर सरकारी संगठन" (INGO)** की परिभाषा पहली बार 27 फ़रवरी 1950 को **ECOSOC** के 288 (X) संकल्प में दी गई है: इसे, "कोई भी अंतरराष्ट्रीय संगठन जो एक अंतर्राष्ट्रीय संधि द्वारा स्थापित नहीं है" के रूप में परिभाषित किया गया

है। विकास में, गैर सरकारी संगठनों और अन्य समूहों की महत्वपूर्ण भूमिका को अजेंडा 21 के अध्याय 27 में मान्यता दी गई, जिसके परिणामस्वरूप संयुक्त राष्ट्र और गैर सरकारी संगठनों के बीच एक सलाहकार रिश्ते के लिए तीव्र व्यवस्था की गई ।

9.2 कपार्ट

जन कार्यों एवं ग्रामीण तकनीक के विकास हेतु एक परिषद् का गठन किया गया है जिसे संक्षेप में कपार्ट (Capart) कहते हैं। अध्ययन में सुविधा की दृष्टि से इस अध्याय में इसे सर्वत्र कपार्ट (Capart) कहा गया है।

कपार्ट का परम एवं प्रमुख उद्देश्य है '-जनता के कार्यों को आगे बढ़ाना तथा ग्रामीण तकनीक का विकास करना।

दृष्टि कपार्ट का विजन है - विभिन्न सरकारी एजेन्सियों तथा गैर सरकारी संगठनों के साथ गत्यात्मक एवं उत्प्रेरक भूमिका निभाना तथा जन नीतियों को प्रभावित करना। इसके संगठनों के साथ ग्रामीण भारत के विकास में हर संभव मदद करना ताकि ग्रामीणों का विकास हो।

(The vision of Capart is to play a dynamic and catalytic role with the various government agencies and NGO's influence public policy and contribute its share towards the many sided development of Rural India)

उद्देश्य - जैसा कि हम पूर्व में पढ़ चुके हैं कपार्ट का मुख्य उद्देश्य है गैर सरकारी संगठनों एवं सरकारी एजेन्सियों के साथ मिलकर काम करना तथा ग्रामीण क्षेत्रों में कार्यरत गैर सरकारी संगठनों को सशक्त बनाना। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु यह -

- उन्हें संवाद निर्माण करने के लिए प्रेरित करता है।
- उनके विचारों, सोचों को सम्मान देती है।
- उनकी आवाज को सुनती है।
- उनके संसाधनों का विकास करती है।

- उनके क्रियाकलापों/गतिविधियों के लिए धन उपलब्ध करवाती है।
- उनके हाथों को मजबूत करना, विशेषकर महिलाओं, विकलांगों तथा समाज के कमजोर वर्गों के लिए जो NGOs कार्य कर रहे हैं उन्हें हर प्रकार की सुविधाएं उपलब्ध करवाती है।
- ग्रामीण समृद्धि के लिए कंधे से कंधा मिलकार चलना। अर्थात् हर तरह का सहयोग प्रदान करना।

संक्षिप्त इतिहास - कपार्ट का पंजीकरण सामाजिक पंजीकरण एक्ट 1860 के तहत किया था। इसके पूर्व कपार्ट की विभिन्न गतिविधियां दो समाजों के अन्तर्गत की जाती थी -

जन कार्यों के लिए विकास - इनकी पंजीकरण संख्या 4433 थी तथा

ग्रामीण तकनीक के विकास हेतु परिषद - इसकी पंजीकरण संख्या थी 12945।

उपरोक्त दोनों ही संगठनों का एक ही उद्देश्य था - ग्रामीण भारत का उत्थान करना तथा ग्रामीणों की वर्तमान दशा में सुधार लाना एवं उनके रहन सहन के स्तर एवं जीवन स्तर में सुधार लाना। अत: इनके उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए इन दोनों को मिलाकर एक साथ ही Societies Registration Act 1860 के अन्तर्गत पंजीकृत किया गया।

कपार्ट के मुख्य कार्य -

- ग्रामीणों को समृद्ध तथा साधन सम्पन्न बनाने में सहयोग देने वाले प्रोजेक्टों को सहयोग एवं सहायता प्रदान करना। उन्हें अच्छे कार्य करने के लिए प्रेरित करना तथा अवसर उपलब्ध करवाना।
- ग्रामीण विकास हेतु कार्य कर रहे सरकारी संगठनों को मजबूत करना एवं सशक्त करना।
- ग्रामीण क्षेत्रों में नई खोजों/अनुसंधानों/विचारों/तकनीकों के विकास एवं प्रसारण हेतु सदैव प्रयत्नशील रहना ताकि लोग उसे अपनाकर जीवन सुखद बना सकें।

- विभिन्न गैर सरकारी संगठनों एवं स्वैच्छिक संस्थाओं के मध्य समन्वयक की तरह कार्य करना तथा उनके बीच मधुर संबंध स्थापित करना।
- सूचनाओं एवं आंकड़ों बैंक के लिए Clearing House की तरह कार्य करना।
- ग्रामीण तकनीकों को निर्माता तक पहुंचाना तथा वृहद् स्तर पर सामग्री/यंत्र/उपकरण तैयार करने के लिए प्रेरित करना। उन यंत्रों को बिकवाने के लिए प्रयास करना। जरूरतमंद लोगों को छूट के साथ कम दाम पर उपलब्ध करवाने की व्यवस्था करना।
- जो संस्थाएं प्राकृतिक संसाधनों एवं पर्यावरण संरक्षण के लिए कार्य कर रही है उन्हें उत्साहित करना तथा कार्यक्रम चलाने में उनकी मदद कना।
- जो संस्थान शोध तथा विकास कार्य कर रहे हैं उन्हें बल प्रदान करना तथा सशक्त बनाना। विशेषकर वे संस्थाएं जो ग्रामीण भारत के निर्माण में सकारात्मक भूमिका निभाते हैं। नवीन संस्थाओं को खोलने के लिए प्रेरित करना तथा हर संभव प्रयास करना।
- ग्रामीण भारत के उत्थान एवं विकास हेतु जो राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाएं कार्य कर रही है, उन्हें सहयोग एवं सहायता प्रदान करना तथा उनके सबके मध्य मधुर संबंध स्थापित करना।
- ग्रामीण विकास हेतु प्रशिक्षण कार्यक्रम, कार्यशाला, सम्मेलन, व्याख्यान, फोरम, सेमिनार आदि को प्रयोजन एवं आयोजन करना जिसमें स्त्रियों की भूमिका, उनकी रूचियों, कर्तव्यों एवं अधिकारों एवं विशेष ध्यान दिया जाए। इस हेतु स्त्रियों को जागरूक बनाया जाता है।
- ग्रामीण विकास तथा तकनीक के क्षेत्र में जो स्वैच्छिक तथा सरकारी संगठन एवं एजेन्सियों कार्य कर रही है उन्हें बढ़ाने तथा उनके मध्य बेहतर संबंध स्थापित करने के लिए प्रशिक्षण

कार्यक्रम, सेमिनार, कार्यशाला, बैठकें आदि का आयोजन करना।

- शोध कार्यों, सर्वेक्षण, मूल्याकन आदि हेतु तथा उच्च तकनीकों के विकास हेतु छात्रवृत्ति, फेलोशिप, पुरस्कार आदि की व्यवस्था करना। इससे लोगों में कार्य करने की भावना जागृत होती है। कपार्ट के उद्देश्यों की पूर्ति होती है। उन्नत एवं प्रगतिशील समाज का विकास होता है।
- सर्वांगीण विकास में लगे हुए प्रोजेक्टों को वित्तीय सुविधाएं प्रदान करना, दिशा निर्देश देना, संगठित करना तथा उनमें समन्वय स्थापित करना भी कपार्ट का एक महत्वपूर्ण कार्य है। यह लोगों को रोजगार उपलब्ध करवाता है। उन्हें आत्मनिर्भर तथा स्वावलम्बी बनने में सहयोग देता है ताकि लोग बेहतर जीवन जी सकें।
- दिव्यांगों, वंचितों, लगड़ों, लूलों, अंधों, मानसिक रूप से कमजोर लोगों तथा इसी तरह के अन्य लोग जो सामाजिक एवं आर्थिक रूप से पिछड़े हैं, लाचार है, उन्हें सामान्य जीवन जीने के लायक बनाना ताकि वे अपने दुखों से पार पाकर सुखद, सुखमय एवं सम्मानित जीवन जी सकें। इसके लिए उन्हे प्रशिक्षण दिया जाता है। रोजगार उपलब्ध करवाया जाता है।
- अनुसूचि जाति/जनजाति बंधुआ मजदूरों तथा महिलाओं के विकास के लिए कार्यक्रम तैयार करना तथा उनका क्रियान्वयन करना।
- कपार्ट विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में अपने कार्यों के बारे में प्रकाशन करवाता है। शोध पत्र छपवाता है। कपार्ट द्वारा दी जाने वाली सेवाओं को पुस्तकों में भी छापा जाता है। इस प्रकार कपार्ट की योजनाएं कार्य विधियों एवं उद्देश्यों को पहुंचाया जाता है।
- स्वस्थ समाज के निर्माण तथा विकास में संलग्न सभी संस्थाओं, संगठनों एवं एजेन्सियों को हर संभव मदद करना, उन्हें आर्थिक

सहायता उपलब्ध करवाना, शिक्षा सामग्री एवं अन्य तकनीकी सहायता उपलब्ध करवाने की जिम्मेदारी भी कपार्ट निभाती है।

- ग्रामीणों के बीच जागरूकता उत्पन्न करना। गैर सरकारी संगठनों के माध्यम से उन्हें कार्य करने के लिए प्रेरित करना। बौद्धिक सम्पदा धारा के अन्तर्गत वे अपनी सेवाओं को विश्व व्यापार संगठन तक पहुंचाता है तथा उनकी बौद्धिक सम्पदा की रक्षा करता है। सारांश में कपार्ट जनता के साथ स्वैच्छिक संगठनों के माध्यम से कार्य करती है।

9.3 चेतना

स्वास्थ्य, शिक्षा, प्रशिक्षण तथा पोषण जागरूकता केन्द्र को संक्षेप में चेतना (Chetna) कहते हैं। इस संगठन की शुरूआत सबसे पहले गुजरात में नेहरू फाउण्डेशन विकास की देखरेख एवं संरक्षण में की गयी।

इतिहास - सन् 1980 में Care (Co-operative American Relief for Everywhere) गुजरात ने सामुदायिक विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत पोषण विज्ञाननी के पद हेतु एक विज्ञापन निकाला। Care गुजरात विक्रम ए साराभाई सामुदायिक विज्ञान केन्द्र (VIkram A Sarabhai Community Science Centre के Collaboration के साथ चलाया जाता है। इस विज्ञानकेन्द्र में उम्मीदवार के चयन हेतु तीन Criteria रखे गये -

1. ऐसा व्यक्ति जो सुदूर ग्रामीण तथा जनजाति प्रदेशों में माह में कम से कम 20 दिन कार्य कर सकें।
2. स्थानीय भाषाओं की जानकारी रखता हो।
3. उसे चौंपहियों वाहन चलाना आता हो, विशेषकर जीप चलाना जानता हो।

इस विज्ञापन को इन्दु कपूर ने काफी महत्व दिया। इन्दु आहार एवं पोषण विज्ञान में **Post Graduate** थी। इन्होंने इस पद पर नियुक्ति दी

तथा पूरे तन मन से उत्साहित होकर कार्य किया । इनका प्रमुख कार्य था - पोषण एवं स्वास्थ्य शिक्षा कार्यक्रम को आगे बढ़ाना तथा इनके बीच समन्वय स्थापित करना । सन् **1978** में वरिष्ठ वैज्ञानिक झुग्गी झौंपडी में रहने वाले बालकों के लिए पोषण तथा स्वास्थ्य शिक्षा में संबंधित कार्यक्रम विकसित किये थे। मीनाक्षी शुक्ला जो विक्रमी ए साराभाई सामुदायिक विज्ञान केन्द्र में पोषण कार्यक्रम में कार्य कर रही थी, ने स्वैच्छिक सहयोग देना प्रारंभ किया तथा पोषण संबंधी बातें एवं अन्य डॉक्यूमेन्ट को स्थानीय भाषा में अनुवाद करना प्रारंभ किया तथा पोषण विज्ञान में विशिष्टता होने के कारण इन्दु ने समस्याओं तथा शंकाओं के समाधान हेतु मीनाक्षी शुक्ला से सम्पर्क साधा तथा मिल जुलकर कार्य किया। उनके इस योगदान को पदम श्री कार्तिकेय साराभाई जो नेहरू फाउंडेशन की ट्रस्टी थी, ने काफी सराहा। इसके बाद ही समूचे गुजरात के 10 ब्लॉकों में फैले हुए 100 गांवों को कवर करते हुए पोषण तथा स्वास्थ्य शिक्षा हेतु पायलॉट कार्यक्रम क्रियान्वयन हेतु प्रस्ताव रखा गया। यह कार्यक्रम मुख्य रूप से ग्रामीण क्षेत्रों, जनजाति क्षेत्रों, अनुसूचि जनजाति क्षेत्रों तथा शहरी क्षेत्रों में चलाया जाने लगा।

चेतना का प्रमुख उद्देश्य था समूचे गुजरात में लोगों को स्वास्थ्य शिक्षा तथा पोषण की जानकारी देना तथा उन्हें जागरूक बनाना। इस कार्यक्रम का नाम रखा गया था - पोषण तथा स्वास्थ्य कार्य समन्वित कार्यक्रम । एक वर्ष बाद इन्दु की ही एक कनिष्ठ साथी पल्लवी नायक ने प्रोजेक्ट को ज्वाइन किया। इसके बाद मीनाक्षी शुक्ला ने भी स्थायी रूप से इस प्रोजेक्ट में अपनी नियुक्ति दी। इस प्रकार इन्दु, पल्लवी, मीनाक्षी, इन तीनों के सम्मिलित प्रयासों से इस संगठन को काफी बल मिला तथा इन तीनों ने मिलकर चेतना नामक संगठन का निर्माण कर लिया है। चेतना का पूरा नाम Centre for Health Educatipn Training and Nutrition Awareness CHETNA । अब चेतना की सम्पूर्ण गतिविधियों तथा क्रियाकलाप Nehru Foundation For Development की छत्रछाया में चलाया जाने लगा।

चेतना के कार्य -

1. स्वास्थ्य शिक्षा तथा पोषण जागरूकता संबंधी महत्वपूर्ण बातों को सरल भाषा में छपवाना।
2. स्वास्थ्य शिक्षा तथा पोषण संबंधी सुन्दर एवं आकर्षक चित्रों को छपवाना एवं लोगों में वितरित करना।

विभिन्न दृश्य - श्रव्य शिक्षण सामग्री के माध्यम से जन जन तक पोषण एवं स्वास्थ्य की जानकारी देना।

न्यूनतम दाम में पोषण एवं स्वास्थ्य शिक्षण संबंधी बातों को लीफलेट, पैम्फलेट आदि माध्यमों से जनता के बीच बंटवाना।

अहमदाबाद में स्वास्थ्य शिक्षा तथा पोषण जागरूकता से संबंधित कार्यक्रम चलाये गये। इसमें महिलाओं को विशेष रूप से जोडा गया क्योंकि वे ही घर की कर्ता धर्ता होती हैं तथा उन्हीं के कंधों पर घर का सम्पूर्ण भार रहता है। परिवार के सदस्यों के लिए संतुलित तथा पोष्टिक भोजन उपलब्ध कराने की जिम्मेदारी उन्ही के कंधों पर रहती हैं।

चेतना की गतिविधियों एवं कार्यों को सुचारू रूप से चलाने में गुजरात सरकार का भी काफी योगदान रहा। सरकार ने वृहत् स्तर पर पोषण तथा स्वास्थ्य शिक्षा से संबंधित शिक्षण सामग्रियें को छपवाया तथा वितरित किया। इससे चेतना का काफी प्रचार प्रसार हुआ तथा शीघ्र ही दर्शकों की संख्या पोषण तथा स्वास्थ्य संबंधी जानकारी प्राप्त करने के लिए बढ़ने लगी। इतनी ही नहीं UNICEF नई दिल्ली ने भी चेतना की टीमों से सम्पर्क साधा तथा यूनिसेफ ने चेतना से शैक्षणिक किट को तैयार करने के लिए आग्रह किया तथा **GOBIFF** तैयार करवाया।

GOBIFF से तात्पर्य हैं - बालकों की स्वास्थ्य रक्षा एवं देखभाल करना जिसमें

G= Growth Monitoring (वृद्धि को बढ़ावा देना)

O = Oral Rehydration (मौखिक पुनर्जलीकरण)

B = Breast Feeding (स्तनपान)

I = Immunization (प्रतिरक्षण)

F = Family Planning (परिवार नियोजन)

F = Female Education (स्त्री शिक्षा)

इसके बाद से चेतना के कार्यों एवं गतिविधियों में काफी विस्तार हुआ।

चेतना ने केवल गुजरात अपितु सम्पूर्ण देश में पोषण तथा स्वास्थ्य शिक्षा के क्षेत्र में अद्धितीय कार्य किया। हिन्दी भाषी क्षेत्रों, विशेषकर उत्तर प्रदेश में इसकी विभिन्न गतिविधियां आयोजित की जाने लगी। विभिन्न शैक्षणिक किट का निर्माण एवं वितरण किया जाने लगा जिसमें से बाल सेविका , शिशु सुरक्षा, रक्तअल्पता, तथा स्त्री स्वास्थ्य किट अधिक प्रचलित है।

चेतना ने सन् 1982 में शिशु पालना गृह कार्यकर्ताओं के लिए एक कार्यशाला का आयोजन किया जिसमें उन्हें समन्वित बाल विकास योजना के उद्देश्यों का प्रमुख स्थान दिया गया तथा इसी पर विस्तृत चर्चा की गई कि किस तरह से ICDS के उद्देश्यों को पूरा किया जा सकता है। मई 1984 में IIla Vakharia ने टीम (Chetna) में चौथा सदस्य के रूप में ज्वाइन किया। ज्योति गोडे ने भी अगस्त 1984 में चेतना में अपनी नियुक्ति दी। इन सभी ने मिलकर चेतना के कार्यों को आगे बढ़ाया।

चेतना की गतिविधियों में वर्ष 1984-85 अधिक महत्वपूर्ण रहा। स्वास्थ्य शिक्षा तथा पोषण जागरूकता से संबंधित सूचनाओं तथा शिक्षण सामग्रियों की एक प्रदर्शनी दिल्ली में लगायी गई जिसका काफी सकारात्मक परिणाम रहा।

सुरक्षित प्रसव तथा गर्भवती एक धात्री माता के देखभाल हेतु चेतना के सदस्यों द्वारा ग्रामीण तथा जनजाति क्षेत्रों में प्रशिक्षण दिया जाने लगा जिससे ग्रामीण चेतना काफी लाभान्वित हुई। परिणामत: चेतना ने काफी ख्याति प्राप्त कर ली तथा इसकी पहचान अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय स्तर पर होने लगी। Indu Kapoor ने चेतना के कार्यों को आगे बढ़ाने के उद्देश्य से इसकी रिपोर्ट की। कई वित्तीय एजेन्सियों, राजनीतिज्ञों

एवं समाज सुधारकों को भेजा तथा उनसे सहायता देने का अनुरोध किया। फोर्ड फाउंडेशन के भारतीय प्रतिनिधि चेतना के कार्यों तथा रिपोर्ट से काफी प्रभावित हुए तथा नेहरू फाउण्डेशन की मैनेजिंग ट्रस्टी से सम्पर्क स्थापित किया एवं इस संबंध में विस्तृत जानकारी प्राप्त की।

अगस्त 1984 में चेतना को Food Foundation on Child Survival Project से वित्तीय सहायता प्राप्त हुई। इसके बाद ही चेतना ने किराये का भवन लिया तथा स्वतंत्र रूप से कार्य करने लगा।

वर्ष 1990 तक चेतना के कार्यों एवं गतिविधियों में आशानुरूप वृद्धि हुई। अब चेतना मातृत्व सुरक्षा तथा शिशु कल्याण के साथ ही स्त्री शिक्षा, स्वास्थ्य शिक्षा, बेटी बचाओं कार्यक्रम पर भी प्रशिक्षण देने लगा।

आज चेतना के प्रारंभ हुए 30 वर्ष से भी ज्यादा हो गये हैं। तब से लेकर आज तक चेतना पूर्ण मनोयोग से अपने मिशन को पूरा करने में जुटा हुआ है।

चेतना के उद्देश्य -

स्त्रियों एवं बालकों के उत्तम स्वास्थ्य के लिए स्वास्थ्य शिक्षा एवं पोषणात्मक जानकारी प्रदान करना।

स्वास्थ्य शिक्षा एवं पोषण से संबंधी शिक्षण सामग्रियों का प्रकाशन करना।

मातृ एवं नवजात शिशु सुरक्षा पर ध्यान देना। सुरक्षित प्रसव कराने तथा मातृ शिशु मृत्यु दर पर नियंत्रण पाने के लिए कार्यशाला, सम्मेलन, सेमिनार, बैठकें आदि आयोजित करना तथा कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित करना।

भोजन एवं पोषण की गुणवत्ता को बढ़ाने के लिए कार्य करना।

महिलाओं को आत्म निर्भर बनाने तथा बालिका शिक्षा हेतु विभिन्न कार्यक्रम चलाना।

विभिन्न गैर सरकारी संगठनों, एजेन्सियों, स्वयं सहायता समूहों से संबंध स्थापित करना तथा उनके सहयोग से स्वास्थ्य शिक्षा एवं पोषण संबंधी कार्यक्रम चलाना।

राज्य तथा राष्ट्र स्तर पर महिलाओं को सशक्त करने एवं कन्या बचाने के लिए ठोस नीतियां बनाना।

वर्तमान में भारत में स्त्री पुरूष लिंगानुपात गड़बड़ा गया। कन्या शिशु को गर्भ में ही हत्या कर दी जाती है। प्रसव के दौरान ही अनेक गर्भवती माताओं की जान चली जाती है। अनेक शिशु अपना प्रथम वर्ष गांठ भी नहीं मना पाते है और काल के गाल में समा जाते हैं। लड़कियों की शादी अल्प उम्र में करने उनका स्वास्थ्य स्तर निम्न से निम्नतर होता जाता है। बार बार के प्रसव, गर्भपात आदि होने से उनका स्वास्थ्य गडबडा जाता है। इतना ही नहीं लडके लडकियों के पालन पोषण में भी ग्रामीण इलाकों में काफी भेदभाव रखा जाता है। जहां लडकों को दूध सहित पूर्ण पोष्टिक आहार उपलब्ध करवाया जाता है। वहीं लडकियों को भरपेट भोजन तक नसीब नहीं होता है। उसे घर के कामकाज में ही पारंगत किया जाता है तथा शिक्षा से वंचित रखा जाता है। इन्हीं कुरीतियों एवं भेदभाव को दूर करने के लिए चेतना कृत संकल्प है। प्रत्येक बालक को जीने, उत्तम स्वास्थ्य, पोषण तथा शिक्षा प्राप्त करने का पूरा हक है। अत: इन्हें पोष्टिक एवं संतुलित आहार पर्याप्त मात्रा में मिलना ही चाहिए, चाहे वह लडका हो या लडकी।

9.4 सेवा

भारत में जो गरीब महिलाएं अनौपचारिक क्षेत्रों जैसे फैक्टरी, कपडा मिल, दुकानों, घरों आदिक में काम करती है उनके हितों के लिए एक मंडली बनायी गई है जिसका नाम रखा गया है। महिलाओं की स्वरोजगार मंडली/संघ इसे संक्षिप्त में **सेवा** कहते हैं। इस अध्ययन में महिलाओं की स्वरोजगार मंडली को सेवा के रूप में सर्वत्र चर्चा की गई है। सेवा एक व्यापारिक संघ है जो गरीब महिलाओं के कल्याणार्थ बनाया गया है। सेवा की स्थापना सन् 1972 में हुई। इसकी स्थापना

गांधीजी की विचारधारा को मानने वाली, नागरिक अधिकार नेता डॉ. इला भट्ट के नेतृत्व में हुई।

सेवा का मुख्य कार्यालय गुजरात के अहमदाबाद में स्थित है। यह भारत के विभिन्न राज्यों में सफलतापूर्वक कार्य कर रहा है। सन् 2008 तक सेवा के सदस्यों की संख्या 966, 139 थी। वर्तमान में इसकी संख्या 120000 हो गई है। इसके सदस्य वे ही महिला बन सकती है जो स्वरोजगार करके धन अर्जित करती है अथवा छोटे मोटे व्यापार चलाते है। इन गरीब महिलाओं को सरकारी नौकरी करने वालों की तरह न तो नियमित रूप से वेतन मिलता है और न ही किसी दूसरे प्रकार का लाभ। ये मुख्यत: मजदूर वर्ग की होती है जो मेहनत मजदूरी करके जीवन यापन करती है। ये महिलाएं आर्थिक रूप से पूर्णत: असुरक्षित होती है। भारत का कुल श्रमिक का 93 प्रतिशत श्रमिक अनौपचारिक क्षेत्रों में काम करते है। इसी प्रकार कुल महिला श्रमिकों का 94 प्रतिशत महिला श्रमिक अनौपचारिक क्षेत्रों में कार्यरत है। जिनका जीवन अत्यन्त ही असुरक्षित अंधकारमय रहता है। ये महिलाएं तभी तक काम कर पाती हैं जब तक ये युवा एवं स्वस्थ रहती है। बीमार होने तथा अस्वस्थ रहने पर इनका काम छूट जाता है। परिणामत: ये पैसे पैसे के लिए मोहताज हो जाती हैं। सेवा इन्हीं स्त्रियों के लिए बनाया गया संगठन है जिसे आर्थिक सहयोग, विश्व बैंक से मिलता है।

उद्देश्य

अनौपचारिक क्षेत्रों में कार्य करने वाली महिलाओं को संगठित करना तथा उन्हें पूर्ण रोजगार देने का अवसर उपलब्ध करना।

महिलाओं को स्वरोजगार द्वारा स्वावलम्बी बनाना ताकि वे परावलम्बी जीवन न जीयें। स्वयं कमाकर भविष्य को सुखद बनायें तथा समाज में सम्मानित जीवन जीयें।

गरीब स्त्रियों को गरीबी से मुक्त करना तथा उन्हें सहारा प्रदान करना। उनके लिए आवासीय सुविधा उपलब्ध करवाना ।

सेवा के कुछ महत्वपूर्ण संगठन

सेवा बैंक - सामान्य तौर पर बैंक की इतनी जटिलताएं होती है कि बैंक में अकाउन्ट खुलवाना तथा बैंक से ऋण प्राप्त करना काफी मुश्किल होता है। इसी बात को ध्यान में रखकर सेवा ने स्वयं का एक बैंक खोला। सेवा के सदस्य ही मिलकर स्वयं का बैंक बनाते एवं चलाते हैं तथा रूपये पैसों का लेन देन करते हैं। प्रारंभ में सन1974 में लगभग 400 महिला सदस्यों ने 10 रूपये पूंजी के रूप में जमाकर महिला सेवा को-ओपेरेटिव बैंक की स्थापना की। वर्तमान में इस बैंक में 125000 से भी ज्यादा श्रमिक महिलाएं अपना धन जमा करती हैं तथा जरूरतमंदों को ऋण उपलब्ध करवाती है।

सेवा संचार - अपने सदस्यों को सहयोग तथा सहारा प्रदान करने के लिए सेवा द्वारा कई चैनल्स चलाये जाते हैं। इनमें से अनसुइया तथा आकाशगंगा प्रमुख है। अनुसुइया पाक्षिक अखबार है जो गुजराती भाषा में निकलता है। इसी प्रकार किशोरी लड़कियों के लिए आकाशगंगा का प्रकाशन किया जाता है। जिसमें उनका मुख्य नारा रहता है। हम स्वरोजगार करते है We ae self employed.

SEWA द्वारा इलेक्ट्रोनिक अखबार का भी प्रकाशन किया जाता है जिसका उद्देश्य होता है राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सेवा को विशिष्ट पहचान दिलाना तथा नीति निर्माताओं, कार्यक्रम नियोजनकर्ताओं तथा राजनीतिज्ञों के ध्यान को आकृष्ट करना।

वीडियो सेवा -

वीडियो सेवा की स्थापना 1984 में की गई जिसका उद्देश्य था सेवा के सदस्यों को दिये जाने वाले प्रशिक्षण का विडियो रिकार्डिंग किया जाए तथा इस रिकार्डिंग का प्रकाशन किया जाए जिससे अन्य लोग प्रेरित हो सकें।

सेवा शोध -

सेवा के पढे लिखे सुयोग्य शोध कार्य करते है तथा अन्य एजेन्सियों से करवाते हैं। इन शोधों से ये अपनी बातों को रानेताओं, नीति निर्धारकों,

समाज सुधाकों तक अपनी समस्याओं को बताते हैं तथा उपलब्धियों को उजागर करते हैं।

सेवा अकादमी -

सेवा अकादमी का निर्माण 1991 में किया गया। यह एक संगठनात्मक विंग है जो सेवा के सदस्यों को शिक्षित करने, उनमें नेतृत्व के गुणों का विकास करने, सचार प्रक्रिया समझाने तथा शोध कार्य करने के लिए उत्तरदायी है।

श्री महिला सेवा अनुसूइया ट्रस्ट -

इस ट्रस्ट की स्थापना 1982 में हुई। यह ट्रस्ट सेवा के सदस्यों के कार्यों के विचारों, अनुभवों, प्रशिक्षण तथा दृष्टिकोणों को उजागर करता है। प्रत्येक महीने की 6 तारीख तथा 22 तारीख को ट्रस्ट द्वारा प्रकाशन कार्य किया जाता है।

विमो सेवा -

यह एक समन्वित बीमा कार्यक्रम हैं जो सेवा के सदस्यों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करता है। यदि किसी सेवा सदस्य की असामयिक मृत्यु हो जाती है अथवा दुर्घटना होने पर शारीरिक रूप से विकलांग हो जाता है तो वैसे सदस्यों को जीवन बीमा कम्पनी की तरह ही आर्थिक मदद पहुंचाती है।

सेवा आवास - सन् 1994 में गरीब सेवा सदस्यों को रहने के लिए आवास सुविधा प्रदान करने हेतु गुजरात महिला हाउसिंग सेवा ट्रस्ट का पंजीयन कराया गया। यह ट्रस्ट महिलाओं को कम दाम पर तथा ऋण उपलब्ध करवाकर/आवास /मकान उपलब्ध करवाता है।

सेवा संस्कार केन्द्र -

वर्तमान में सेवा संस्कार केन्द्र एक हब के रूप में उभकर सामने आया है। इस केन्द्र का मुख्य काम है - निर्धन महिलाओं तथा लडकियों को संस्कारित करना तथा नवीन एवं सूचनाओं से अवगत करवाना।

सेवा महिला सरकारी मंडली लिमिटेड -

यह लिमिटेड कचरा, पॉलिथीन आदि बीनने वाली महिलाओं के लिए कार्य करती है तथा उन्हें सुरक्षा एवं सहारा प्रदान करती है। सबसे पहले सेवा फेडरेशन की सहायता से सन् 1986 में Cleaning Co-operation की स्थापना की गई।

सेवा भारत -

सेवा फेडरेशन के सदस्यों द्वारा सेवा भारत की स्थापना की गयी है। यह संस्था अनौपचारिक सेक्टर में काम करने वाली महिलाओं की कार्य क्षमता को बढ़ाने के साथ ही उनकी समस्याओं को दूर करती है। वर्तमान में 9 सेवा भारत 7 राज्यों के 35 जिलों में चलाये जा रहे हैं।

सेवा कलाकृति -

महिला शिल्पकारों/कारीगरों को प्रोत्साहन देने तथा इनके द्वारा निर्मित सामानों की बाजार में बेचने हेतु इस संस्था का निर्माण किया गया है। इतना ही नही, इसके माध्यम से महिलाओं को प्रशिक्षण देकर उन्हें कुशल कारीगर बनाने में मदद करता है।

9.5 केपर

केपर का पूरा नाम अंग्रेजी में को-आपरेटिव फार अमेरिकन रिलीफ एवंरीवेपर है।

स्थापना - केपर एक गैर सरकारी, गैर साम्प्रदायिक संस्था है। युद्ध की विभीषिका से त्रस्त यूरोपियन लोगों के सहायतार्थ अमेरिका दाताओं द्वारा खाद्य सामग्री भेजने के लिए सन् 1946 में इसकी स्थापना हुई। युद्धोपरान्त आपातकाल की स्थिति समाप्त हो गई। इसके बाद भी इस संस्था ने अन्य देशों में खाद्य सामग्री भेजने का कार्य किया। चिकित्सीय उपकरण, एक्सरे मशीन, दवायें, विटामिन तथा मिनरल्स की गोलियां, कृषि कार्य का समान, बीज, पानी पम्प आदि जरूरतमंद देशों को उपलब्ध कराया।

भारत में केपर के कार्य - भारत में केपर ने 1950 में अपना सहायतार्थ कार्य आरंभ किया। 1961 से भारत के स्कूलों में मध्याह्न

आहार योजना प्राथमिक शालाओं के बच्चों के लिए आरम्भ की। यू.ए.ए. के बाद यह संसार की योजना स्कूली बच्चों के पोषणीय स्तर को बेहतर बनाने तथा उनके मध्य पोषण संबंधी शिक्षा के प्रसार के उद्देश्य से चलाई जा रही है।

इसके अतिरिक्त **CARE** ने अमेरिका द्वारा Food for Peace के तहत प्राप्त सोयाबीन, मक्खन, चीज, दुग्ध चूर्ण UNICEF की सहायता से कुपोषित माताओं एवं बच्चों के बीच वितरित किया। ये खाद्य सामग्री मातृ एवं शिशु कल्याण केन्द्रों में भी वितरित की गई।भारत में चल रहे व्यावहारिक पोषाहार कार्यक्रम CARE ने अपनी यथासंभव सहायता प्रदान की है। काम के बदले अनाज योजना के अन्तर्गत सिचाई प्रबंध संबंधी कार्यक्रम मजदूर बांध बनाने वाले, सड़क बनाने वाले मजदूरों का अनाज बांटने का काम CARE ने किया है। आहार योजना के अलावा केपर ने चिकित्सा, साक्षरता, व्यावसायिक प्रशिक्षण तथा कृषि के क्षेत्र में भी सहायता प्रदान की है। केपर स्कूल के बच्चों को सब्जियां उगाने और फल उगाने में सहायता देता है। बगीचों के लिए पम्प, बगीचे के उपकरण, उत्तम बीज आदि प्रदान करता है।

चिकित्सा क्षेत्र में केपर ने चिकित्सा वाहन, एक्सरे मशीन परीक्षण उपकरण, चश्मों के लिए कांच और फ्रेम चिकित्सा संबंधी पुस्तकें, दवाइयां, विटामिन की गालियां आदि प्रदान करते है।

पोषण के क्षेत्र में कार्यरत राष्ट्रीय अभिकरण -

भारत में राष्ट्रीय एवं प्रान्तीय स्तर पर विभिन्न अभिकरण पोषण के क्षेत्र में कार्य कर रहे है। कुछ उल्लेखनीय नामों की सूची इस प्रकार है -

1 कृषि एवं खाद्य विभाग

2 स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण विभाग

3 शिक्षा एवं समाज कल्याण विभाग

4 सामुदायिक विकास विभाग

5 भारतीय चिकित्सीय अनुसंधान परिषद

6 भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

7 सैन्ट्रल फूड टेक्नोलॉजीकल रिसर्च इन्स्टीयूट

8 राष्ट्रीय पोषण संस्थान

9 भारतीय खाद्य निगम

10 काउंसिल ऑफ साईंटीफिक एण्ड इन्डस्ट्रियल रिसर्च

11 चिकित्सा महाविद्यालय एवं गृह विज्ञान महाविद्यालय

उपयुक्त विभिन्न अभिकरण देशी एवं विदेशी सहायता से राज्य सरकारों की मदद से कई प्रकार के पोषाहार कार्यक्रम चल रहे है, जैसे -

1 विशेष पोषाहार कार्यक्रम

2 व्यावहारिक पोषाहार कार्यक्रम

3 समेकित बाल विकास सेवा

4 राष्ट्रीय एनीमिया प्रोग्राम

5 गॉयटर (घोंघा) कन्ट्रोल प्रोग्राम

6 विटामिन ए डेफीशियेन्सी प्रोग्राम

7 ग्रामीण स्वास्थ्य योजना

पोषाहार के कई कार्यक्रमों में से व्यावहारिक पोषाहार कार्यक्रम पर्याप्त लोकप्रिय, लाभदायक कार्यक्रम रहा है। इसके अतिरिक्त और भी कई संस्थाओं ने पोषण क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किये है।

द्वितीय विश्वयुद्ध के दुष्पपरिणाम कुपोषण से पीडित बच्चों की सहायतार्थ UNICEF की स्थापना हुई। आरंभ में यूनिसेफ बच्चों के लिए मलाई रहित दुग्धपूर्ण वितरण की व्यवस्था करता था। भारत में भी 1949 से 1957 तक आकाम्य वर्ग संचालन मण्डल ने यह अनुभव किया कि मात्र दुग्ध वितरण से वांधित सुधार नहीं हो सकता। इसके लिए बहुमुखी पोषाहार कार्यक्रम की आवश्यकता है। आहार एवं पोषण सर्वेक्षण करके उनके लिए यह कार्यक्रम बनाया जिसके अन्तर्गत

राष्ट्रीय एवं सामुदायिक स्तर पर कार्यकर्ताओं का प्रशिक्षण, शाक वाटिका, फल वाटिका, लगाना, मछली पालन, मुर्गी पालन, शुकर पालन, पोष्टिक आहार वितरण का आयोजन किया गया।

भारत में सर्वप्रथम 1959 में उडीसा राज्य के 32 ब्लाक्स में यह कार्यक्रम शुरू किया गया। आरंभ में इनका नाम Applied Nutrition Programme (ENP) था किन्तु कार्यक्रम एक प्रयोग के रूप में शुरू किया गया था। इसकी सफलता को देखते हुए शीघ्र ही भारत के अन्य प्रान्तों जैसे आन्ध्र प्रदेश तथा तमिलनाडु में इस कार्यक्रम का प्रसार किया गया। सन 1963 में भारत के अन्य प्रान्तों में अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के आधार पर कुछ आवश्यक, सुविधाजनक परिवर्तन करके यह कार्यक्रम लागू किया गया।

उद्देश्य -

व्यावहारिक पोषाहार कार्यक्रम का लक्ष्य आकाम्य वर्ग के पोषण स्तर को ऊँचा उठाना है। इसके मुख्य उद्देश्य इस प्रकार हैं -

1 ग्रामीण स्तर पर अण्डे, मुर्गी, मछली, सब्जियां जैसे पोष्टिक खाद्य पदार्थों का उत्पादन बढाना।

2 ग्रामीण लोगों के दैनिक आहार में अण्डे, मछली, दूध का समावेश करके उनके पोषकीय स्तर में सुधार लाना।

3 संतुलित आहार प्रदान करने के लिए मलाई रहित दुग्धचूर्ण तथा चावल के साथ फल एवं सब्जियों का समावेश करके पोष्टिक व्यंजन बनाना।

4 स्कूली बच्चों, शिक्षकों, उनके अभिभावकों तथा विभिन्न स्तर के कार्यकर्ताओं को पोषण संबंधी ज्ञान में प्रशिक्षित करना। इससे वे पोष्टिक खाद्य पदार्थों को अपने दैनिक आहार में सम्मिलित करके संतुलित आहार प्राप्त कर सकेंगे।

5 ग्रामीण जनता को अपने मछली पालन केन्द्र, मुर्गी पालन केन्द्र, फल तथा सब्जियों के बगीचों में आवश्यक सुधार करने को प्रेरित

करना जिससे बड़े पैमाने पर वे स्वयं अपने लिए पोष्टिक भोज्य पदार्थों का उत्पादन कर सकें।

व्यावहारिक पोषाहार कार्यक्रम के अन्तर्गत किये जा रहे प्रयास -

इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए व्यावहारिक पोषाहार कार्यक्रम के अन्तर्गत किये जा रहे प्रयास इस प्रकार है -

1 उत्पादन - सब्जी, फल, दूध, मांस, मछली, अण्डे जैसे पोष्टिक के उत्पादन, वितरण एवं उपयोग को उचित ज्ञान द्वारा जनता को पोषाहार के प्रति प्रोत्साहित करना।

2 वितरण - उनका संतुलित उपयोग करने की प्रेरणा देना।

3 राज्य के विभिन्न विभागों जैसे कृषि, शिक्षा, जन स्वास्थ्य, समाज कल्याण, सामुदायिक विकास प्रखण्ड इत्यादि में समन्वय स्थापित करके उनके द्वारा इस कार्यक्रम का विस्तार करना ।

4 स्कूल लंच प्रोग्राम में पौष्टिक आहार देकर स्कूलों में बच्चों से फल सब्जियों उगवा कर उन्हें पोषण का महत्व समझाना ताकि यह ज्ञान वे अपने धरों तक पहुंचा सके।

5 गांवों में समय समय पर प्रदर्शनियों का आयोजन करना ताकि लोगों को पोषण संबंधी ज्ञान विकसित हो ।

6 स्कूली बच्चों तथा ग्रामीण को बीज, खाद्य, खेती के आधुनिक उपकरण, मछली पालन हेतु मछली का जीरा मुर्गी पालन हेतु मुर्गी का दाना, दवायें एवं अन्य सहयोग देना।

व्यावहारिक पोषाहार मुख्यत: ग्रामों में ही क्रियान्वित किया जाता है क्योंकि फल सब्जियों का उत्पादन, मुर्गी पालन, मछली पालन करने योग्य भूमि गांवों में ही अधिक उपलब्ध है। कृषि कार्य भी मुख्यत: गांवा में ही होते है । इस प्रकार व्यावहारिक पोषाहार कार्यक्रम एक ओर जहां संतुलित पौष्टिक आहार का ज्ञान प्राप्त कराया है वहीं दूसरी

ओर इनके उत्पादन का प्रशिक्षण एवं सहायता भी देता है ताकि ग्रामीण अपना पौष्टिक आहार स्वयं प्राप्त कर सकें। एक चीनी कहावत है कि किसी आदमी को एक मछली दो तो वह उसेएक बार में खा जायेगा। किन्तु यदि उसे मछली मारना सिखा दो तो वह प्रतिदिन मछली खा सकेगा। इस कहावत को व्यावहारिक पोषक कार्यक्रम सार्थक बना रहा है।

9.6 पंचायती राज

पंचायती राज व्यवस्था (उ० प्र०) में ग्राम पंचायत, क्षेत्र पंचायत, और जिला पंचायत आते हैं। पंचायती राज व्यवस्था आम ग्रामीण जनता की लोकतंत्र में प्रभावी भागीदारी का सशक्त माध्यम है। 73वाँ संविधान संशोधन द्वारा एक सुनियोजित पंचायती राज व्यवस्था स्थापित करने का मार्ग प्रशस्त किया गया है।

73वां संविधान संशोधन अधिनियम के लागू होते ही प्रदेश सरकार द्वारा प्रदेश के पंचायत राज अधिनियमों अर्थात् उ.प्र. पंचायत राज अधिनियम-1947 एवंम् उ.प्र. क्षेत्र पंचायत तथा जिला पंचायत अधिनियम-1961 में अपेक्षित संशोधन कर संवैधानिक व्यवस्था को मूर्तरूप दिया गया। राज्य सरकार द्वारा वर्ष 1995 में एक विकेन्द्रीकरण एवं प्रशासनिक सुधार आयोग का गठन किया गया था जिसके द्वारा की गई संस्तुतियों के अध्ययनोंपरान्त तत्कालीन कृषि उत्पादन आयुक्त की अध्यक्षता में गठित उच्च स्तरीय समिति (एच.पी.सी.) द्वारा वर्ष 1997 में 32 विभागों के कार्य चिह्नित कर पंचायती राज संस्थाओं को हस्तान्तरित करने की सिफारिश की गयी थी। प्रदेश सरकार संवैधानिक भावना के अनुसार पंचायती राज संस्थाओं को अधिकार एवं दायित्व सम्पन्न करने के लिए कटिबद्ध है।

24 अप्रैल 1993 भारत में पंचायती राज के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण मार्ग चिह्न था क्योंकि इसी दिन संविधान (73वां संशोधन) अधिनियम, 1992 के माध्यम से पंचायती राज संस्थाओं को सवैधानिक दर्जा हासिल

कराया गया और इस तरह महात्मा गांधी के ग्राम स्वराज के स्वप्न को वास्तविकता में बदलने की दिशा में कदम बढ़ाया गया था।

73 वें संशोधन अधिनियम, 1993 में निम्नलिखित प्रावधान किये गये हैं:

1. एक त्रि-स्तरीय ढांचे की स्थापना (ग्राम पंचायत, पंचायत समिति या मध्यवर्ती पंचायत तथा जिला पंचायत)
2. ग्राम स्तर पर ग्राम सभा की स्थापना
3. हर पांच साल में पंचायतों के नियमित चुनाव
4. अनुसूचित जातियों/जनजातियों के लिए उनकी जनसंख्या के अनुपात में सीटों का आरक्षण
5. महिलाओं के लिए एक तिहाई सीटों का आरक्षण
6. पंचायतों की निधियों में सुधार के लिए उपाय सुझाने हेतु राज्य वित्त आयोगों का गठन

राज्य चुनाव आयोग का गठन

1. 73 वां संशोधन अधिनियम पंचायतों को स्वशासन की संस्थाओं के रूप में काम करने हेतु आवश्यक शक्तियां और अधिकार प्रदान करने के लिए राज्य सरकार को अधिकार प्रदान करता है। ये शक्तियां और अधिकार इस प्रकार हो सकते हैं:
2. संविधान की गयारहवीं अनुसूची में सूचीबद्ध 29 विषयों के संबंध में आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिए योजनाएं तैयार करना और उनका निष्पादन करना
3. कर, डयूटीज, टॉल, शुल्क आदि लगाने और उसे वसूल करने का पंचायतों को अधिकार
4. राज्यों द्वारा एकत्र करों, डयूटियों, टॉल और शुल्कों का पंचायतों को हस्तांतरण

पंचायती राज व्यवस्था (ग्राम पंचायतें अतीत से वर्तमान तक)

भारत के प्राचीनतम उपलब्ध ग्रन्थ ऋग्वेद में 'सभा' एवंम् 'समिति' के रूप में लोकतांत्रिक स्वायत्तशासी संस्थाओं का उल्लेख मिलता है। इतिहास के विभिन्न अवसरों पर केन्द्र में राजनैतिक उथल पुथलों के बावजूद सत्ता परिवर्तनो से निष्प्रभावित रहकर भी ग्रामीण स्तर पर यह स्वायत्तशासी इकाइयां पंचायतें आदिकाल से निरन्तर किसी न किसी रूप में कार्यरत रही हैं।

उत्तर प्रदेश मे पंचायतों के विकास का प्रथम चरण (1947 से 1952-53)

संयुक्त प्रान्त पंचायत राज अधिनियम 1947 दिनांक 7 दिसम्बर, 1947 ई0 को गवर्नर जनरल द्वारा हस्ताक्षरित हुआ और प्रदेश में 15 अगस्त, 1949 से पंचायतों की स्थापना हु ई। इसके बाद जब देश का संविधान बना तो उसमें पंचायतों की स्थापना की व्यापक व्यवस्था की गई। संविधान में राज्य के नीति निर्देशक तत्वों के अनुच्छेद- 40 में यह निर्देश दिये गये हैं कि राज्य पंचायतों की स्थापना के लिए आवश्यक कदम उठायें और ग्रामीण स्तर पर सभी प्रकार के कार्य एवं अधिकार उन्हें देने का प्रयत्न करें। 15 अगस्त, 1949 से उत्तर प्रदेश की तत्कालीन पाच करोड़ चालीस लाख ग्रामीण जनता का प्रतिनिधित्व करने वाली 35,000 पंचायतों ने कार्य करना प्रारम्भ किया। साथ ही लगभग 8 हजार पंचायत अदालतें भी स्थापित की गई ।

सन् 1951-52 में गाव सभाओं की संख्या बढ़कर 35,943 तथा पंचायत अदालतों की संख्या बढ़कर 8492 हो गई। 1952 से पंचायतों ने ग्रामीण जीवन में सुनियोजित स्तर पर राष्ट्र निर्माण का कार्य करना आरम्भ किया। इस वर्ष पहली पंचवर्षीय योजना प्रारम्भ हुई। योजना की सफलता के लिए शासन द्वारा पंचायत अदालत स्तर पर विकास समितियों के सदस्य मनोनीत किए गये। ग्राम पंचायत स्तर पर पंचायत मंत्री, विकास समितियों का भी मंत्री नियुक्त किया गया। जिला नियोजन समिति में भी प्रत्येक तहसील से एक प्रधान मनोनीत किया गया। 1952-53 में जमींदारी विनाश के पश्चात गाव समाज की स्थापना हुई और गाव सभाओं के अधिकार बढ़ाये गये।

पंचायतों के विकास का दूसरा चरण (1953-54 से 1959-60)

1953-54 में पंचायतों की सक्रियता एवं विभिन्न विकास सम्बन्धी कार्यक्रमों में उनका सहयोग बढ़ाने के लिए विधान सभा के सदस्यो की एक समिति नियुक्त की गयी। इस समिति के सुझावों को दृष्टि में रखकर पंचायत राज संशोधन विधेयक तैयार किया गया जो पंचायतों के अगले दूसरे आम चुनाव में क्रियान्वित हुआ। 1955 में पंचायतों का दूसरा आम चुनाव सम्पन्न हुआ। जिसमें गांव सभा व गांव समाज के क्षेत्राधिकार को एक कर दिया गया। 250 या इससे अधिक जनसंख्या वाले हर गांव में गांव सभा संगठित करते हुए दूसरे आम चुनाव में गांव पंचायतों की संख्या बढ़कर 72425 हो गयी। 1957-58 में पंचायतों के क्षेत्रीय परिवर्तन के कारण उनकी संख्या 72425 के स्थान पर 72409 ही रह गयी जबकि न्याय पंचायतों की संख्या 8585 1थी। 1955 के चुनाव के बाद पंचायत अदालतों का न्याय पंचायत नामकरण किया गया है। वित्तीय वर्ष 1959-60 पंचायतों का कृषि विषयक कार्यो की दृष्टि से उल्लेखनीय वर्ष रहा है। इस वर्ष पंचायतों ने खाद्यान्न की उपज बढ़ाने के लिए चलाये गये रबी और खरीफ आन्दोलनों में विशेष उत्साह का प्रदर्शन किया। इस उद्देश्य से अधिकांश गाव सभाओं में कृषि समिति की स्थापना की गयी।

पंचायतों के विकास का तीसरा चरण (1960-61 से 1971-72)

वर्ष 1960-61 में गावों को आत्मनिर्भर तथा सम्पन्न बनाने के उद्देश्य ग्राम पंचायत क्षेत्रों में कृषि उत्पादन तथा कल्याण उपसमितियो का गठन गॉव सभा स्तर पर किया गया। इसी वर्ष पंचायत राज अधिनियम में संशोधन द्वारा गांव पंचायतों तथा न्याय पंचायतों की चुनाव पद्धति में आंशिक परिवर्तन किया गया जिसके अनुसार गांव सभा के प्रधान का चुनाव गुप्त मतदान प्रणाली द्वारा किए जाने का निश्चय हुआ। 10 फरवरी, 1961 ई0 से 7 फरवरी, 1962 ई0 के मध्य पंचायतो का तृतीय सामान्य निर्वाचन सम्पन्न हुआ। श्री बलवन्त राय मेहता समिति की सिफारिशों के आधार पर भारत सरकार के निर्देशानुसार सत्ता के विकेन्द्रीकरण के सिद्धान्तों के अनुरूप उत्तर प्रदेश क्षेत्र समिति एवं

जिला परिषद अधिनियम 1961 ई0 क्रियान्वित किया गया। इस अधिनियम के अनुसार प्र देश में गांव सभा, क्षेत्र समिति तथा जिला परिषद की इकाईयों को एक सूत्र में बाधा गया और प्रदेश में त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था प्रारम्भ हुई। पंचायतों के तीसरे आम चुनावों के पश्चात प्रदेश में गांव पंचायतों की संख्या 72233 तथा न्याय पंचायतों की संख्या 8594 थी।

पंचायतों के विकास का चैथा चरण (1972-73 से 1981-82)

वर्ष 1972-73 में पंचायतों के चैथे आम चुनाव सम्पन्न हुऐ। उस समय प्रदेश में गांव पंचायतो की संख्या 72834 और न्याय पंचायतों की संख्या 8792 थी। 30 अक्टूबर 1971 में विभाग के ग्राम स्तरीय कार्य कर्ता पंचायत सेवकों के शासकीय कर्मचारी हो जाने के उपरान्त गावं पंचायतों की गतिविधियों में अपेक्षित सुधार हुआ और तदुपरान्त बड़ी द्रुत गति से गांव पंचायतों अर्थात् ग्रामोपयोगी सत्ता की जड़ें गहरी जमने लगी। वर्ष 1981-82 के अन्त तक कतिपय संशोधन के फलस्वरूप प्रदेश में 72809 गांव पंचायतें तथा 8791 न्याय पंचायतें कार्यरत रहीं। गांव पंचायतों का पाचवा सामान्य निर्वाचन वर्ष 1972-73 के उपरान्त मार्च 1982 से जुलाई, 1982 के मध्य सम्पन्न हुआ। इस सामान्य निर्वाचन में गांव सभाओं की संख्या 74,060 थी। इन चुनावों में उनके मतदाताओं की आयु 21 वर्ष से घटाकर 18 वर्ष कर दी गयी।

पंचायतों के विकास का पाचवां चरण (1983-84 से 1992-93)

वर्ष 1988 में ग्राम पंचायतों का छठा सामान्य निर्वाचन सम्पन्न हुए। 1988 में ही पंचायत राज अधिनियम में संशोधन कर यह व्यवस्था की गयी कि गाव पंचायतों के सदस्य पदों पर 30 प्रतिशत प्रतिनिधित्व महिलाओं को प्राप्त होना चाहिए। साथ ही यह भी व्यवस्था की गयी कि प्रत्येक गांव पंचायत में कम से कम एक अनुसूचित जाति की महिला को प्रतिनिधित्व प्रदान किया जाय। इस आम चुनाव में गांव पंचायतों की संख्या 73927 तथा न्याय पंचायतों की संख्या 8814 थी, जिसमें महिला प्रधानों की संख्या 930 तथा महिला सदस्यों की संख्या

1,50,577 थी 2जिसमें अनुसूचित जाति की महिला सदस्यों की संख्या 65937 थी। वर्ष 1989 में ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगार और अल्प रोजगार वाले पुरूषों एवं महिलाओं के लिए लाभकारी रोजगार सृजन करने के उद्देश्य से जवाहर रोजगार योजना प्रारम्भ की गयी। इस यो जना के कार्या न्वयन का भार गांव पंचायतों को सौंपा गया।

ग्राम पंचायतों के विकास का छठवा चरण (1993-94 से)

भारतीय संविधान के निर्माण के समय ही राज्य के नीति निर्देशक सिद्धान्त के अन्तर्गत अनुच्छेद - 40 में आधारभूत स्तर पर पंचायतो को मान्यता देते हुए यह कहा गया कि राज्य गांव पंचायतों को संगठित करने के लिए उपाय करेगा और उन्हें ऐसी शक्तिया और अधिकार प्रदान करेगा जो उन्हें स्वायत्त शासन की इकाई के रूप कार्य करने के लिए आवश्यक हैं। वर्ष 1994 में देश की गाव पंचायतो को संविधानिक इकाई मानते हुए स्वशासी संस्था के रूप मे स्थापित करने, उनमें एकरूपता लाने, निश्चित समय पर उनके चुनाव सुनिश्चित कराने, आर्थिक रूप से उन्हें सुदृढ़ करने तथा पंचायतों को संवैधानिक दर्जा देने के उद्देश्य से 72वा संविधान संशोधन लोकसभा में प्रस्तुत किया गया जो बाद में 73वा संविधान संशोधन 1992 के रूप में 24 अप्रेल, 1993 से सम्पूर्ण देश में लागू हुआ।

73वें संविधान संशोधन के अनुक्रम में प्रदेश सरकार द्वारा उत्तर प्रदेश पंचायत विधि (संशोधन) विधे यक 1994 पारित किया गया, जो 22 अप्रेल, 1994 से प्रदेश में प्रवृत हुआ। जिसमें संयुक्त प्रान्त पंचायत राज अधिनियम 1947 तथा उत्तर प्रदेश क्षेत्र समिति तथा जिला परिषद अधिनियम 1961 में संशोधन कर राज्य में तीनों स्तर की पंचायतो (ग्राम पंचायत, क्षेत्र पंचायत तथा जिला पंचायत) में एकरूपता लाते हुए निम्नलिखित व्यवस्था सुनिश्चित की गयी है:-

1. पंचायतों का संगठन और संरचना
2. अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति, पिछड़े वर्ग तथा महिलाओं के लिए आरक्षण

3. पंचायतों का निश्चित कार्यकाल,
4. पंचायतों के कृत्य, शक्तिया और उत्तरदायित्व का विस्तार
5. राज्य निर्वाचन आयोग का गठन
6. राज्य वित्त आयोग की स्थापना

उपर्युक्त व्यवस्थाओं के अंर्तगत यथा सम्भव 1000 की आबादी पर ग्राम पंचायतों का गठन, संविधानिक व्यवस्थाओं के अनुरूप आबादी के प्रतिशत के आधार पर पंचायती राज के प्रत्येक स्तर पर अध्यक्ष पदों एवं सदस्यों के स्थानों पर अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति तथा पिछड़ा वर्ग (27 प्रतिशत से अनधिक) एवं प्रत्येक वर्ग में महिलाओं के लिए एक तिहाई पदों एवं स्थानो पर आरक्षण व्यवस्था सुनिश्चित की गई है। यह भी सुनिश्चित किया गया है कि पंचायतों का कार्य काल 5 वर्ष हो एवं वह उसे पूरा कर सकें।

संविधान एवं राज्य के पंचायत राज अधिनियमों मे किये गए प्राविधानो के अनुसार प्रदेश में अधिसूचना दिनांक 23 अप्रैल, 1994 के द्वारा राज्य निर्वाचन आयोग की स्थापना की गई है और वर्ष 1994 से राज्य निर्वाचन आयोग की देखरेख में 73वां संविधान संशोधन के अनुरूप त्रिस्तरीय पंचायतों के सामान्य निर्वाचन सम्पन्न कराये जाते हैं।

9.7 सारांश

गैर सरकारी संगठन स्वस्थ समाज के निर्माण में संलग्न सभी संस्थाओ और एजेन्सियों को हर प्रकार की सहायता (शिक्षा, अर्थ, तकनीक सम्बन्धित इत्यादि) उपलब्द करवाते है । स्वास्थ्य शिक्षा प्रशिक्षण व पोषण, जागरूकता. जनचेतना, स्व-रोजगार उपलब्दि तथा विशेष रूप से श्रमिक व सेवा कार्य करने वाली महिलाओं के हितों की रक्षा से गैर सरकारी संगठन जुड़े रहते है । इस संदर्भ में इस इकाई में गैर सरकारी संगठन जैसे कपार्ट, चेतना, केयर, सेवा, और पंचायती राज का भी उल्लेख इस इकाई में किया गया है

9.8 अभ्यास प्रश्न

1. कपार्ट के बारे में विस्तारपूर्वक लिखिए
2. संक्षिप्त में टिप्पणी लिखिए
3. सेवा
4. केयर
5. पंचायती राज
6. चेतना

9.9 संदर्भ ग्रन्थ

प्रसार शिक्षा –डा. वंदना जैन , डा पूनम कुमारी
प्रसार शिक्षा-डा बी. डी. हरपलानी
प्रसार शिक्षा- डा वृंदा सिंह

अध्याय10

सरकारी संगठन

10.0 उद्देश्य
10.1 प्रस्तावना
10.2 संयुक्त राष्ट्र संघ शिशु निधि (यूनिसेफ)
10.3 खाद्य एवं कृषि संगठन (एफ.ए.ओ.)
10.4 विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यू.एच.ओ.)
10.5 भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद
10.6 भारतीय चिकित्सा विज्ञान अनुसन्धान परिषद
10.7 केन्द्रीय आहार तकनीकी अनुसंधान परिषद
10.8 भारतीय गृह विज्ञान संगठन
10.9 सारांश
10.10 अभ्यास प्रश्न
10.11 संदर्भ ग्रन्थ

10.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययनोंपरांत विद्यार्थी-

1. यूनिसेफ की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
2. एफ. ए. ओ. की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
3. विश्व स्वास्थ्य संगठन की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
4. भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
5. भारतीय चिकित्सा विज्ञान अनुसन्धान परिषद की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

10.1 प्रस्तावना

संसार के ज्यादातर विकासशील देशों में जनता कुपोषण की शिकार है। भारत में बढती हुई जनसंख्या निरक्षरता, अज्ञानता, कृषि उत्पादन का अभाव आदि कारणों से पोषण स्तर काफी गिर गया है। स्थितियों में सुधार भी समय के साथ साथ किया जा रहा है। आहार सर्वेक्षण बताते हैं कि हमारे देश के अधिकांश लोगों के भोजन का संगठन निम्न स्तर का है, जैसे - आहार मे अनाजों की मात्रा अधिक है तथा दाल फल, सब्जियों की मात्रा काफी कम है। दूध, मांस, अण्डा, मछली की मात्रा प्राय: नगण्य है। कुछ लोगों को तो भरपेट भोजन भी नहीं मिल पाता है। फलस्वरूप पोषण न्यूनता जनित रोग सर्वत्र फैले हुए हुए है। शिशुओं और बच्चों में प्रोटीन कैलोरी कुपोषण तथा विटामिन बी वर्ग की कमी से होने वाले रोग देखे जा सकते है। आज भी कुपोषण पर पूर्णतया विजय नहीं मिल पाई है। वर्तमान कुपोषण तथा अल्प पोषण की स्थिति में सुधार लाने के लिये अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय संगठन यथासंभव सहायता पहुंचा रहे है। अन्तर्राष्ट्रीय संगठन भी सभी विकासशील देशों के पोषण स्तर में सुधार लाने का प्रयत्न कर रहे हैं। आपात काल मे यह संगठन जरूरत पड़ने पर दवाई, चिकित्सा, खाद्यान्न आदि के रूप में सहायता देते है। संयुक्त राष्ट्र के विभिन्न संगठन जो पोषण के क्षेत्र में काम कर रहे हैं, इस प्रकार हैं –

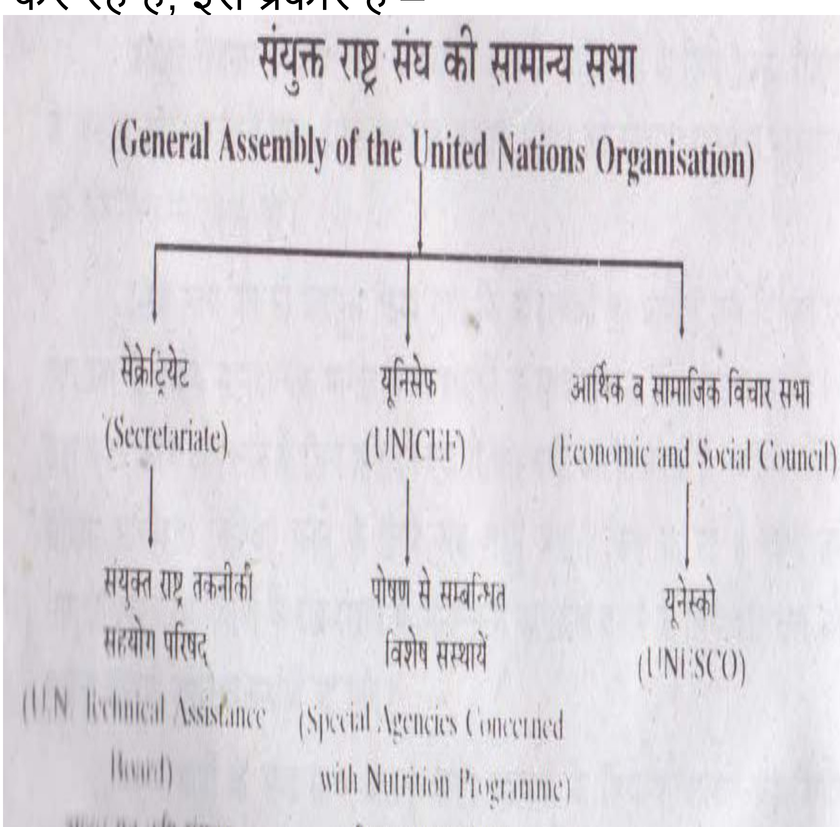

इसके अतिरिक्त अन्य कई अन्तर्राष्ट्रीय राष्ट्रीय एवं सरकारी या स्वयंसेवी संस्थायें पोषण के क्षेत्र में कार्य कर रही है। ऐसी कुछ संस्थाओं एवं संगठनों का परिचय व विवरण इस प्रकार है -

10.2 संयुक्त राष्ट्र संघ शिशु निधि (यूनिसेफ)

इसका पूरा नाम यूनाइटेड नेशन्स चिल्ड्रन्स फन्ड (United Nations Childern's Fund या UNICEF है। पहले यह यूनाइटेड नेशन्स इंटरनेशनल चिल्ड्रेस इमरजन्सी फूड कहलाता था। द्वितीय महायुद्ध के बाद असंख्य बेघर, भूखे, कुपोषित बच्चों के कल्याण हेतु आपातकाल

में यह संगठन बना। अब इसके पूरे नाम में से International तथा Emergency (I) और ई (E) अब भी सम्मिलित है।

स्थापना - संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा द्वारा सन् 1946 में यूनिसेफ की स्थापना हुई। प्रथम चार वर्षों तक इस संगठन ने द्वितीय महायुद्ध की चपेट में आ गये बच्चों के लिए कार्य किये तथा इसके बाद भी यह अन्य विकासशील देशों के बच्चों के लिए सहायता दे रहा है।

उद्देश्य - यूनिसेफ जैसा संगठन बच्चों के विकास के लक्ष्य को लेकर चलता है वहीं संयुक्त राष्ट्र संघ मानव कल्याण एवं उत्थान के लिए कार्य करता है। किसी भी देश का भविष्य उसके बच्चों पर निर्भर करता है। उसके बच्चों के स्वास्थ्य, गुणों, कलाओं, योग्यताओं के आधार पर ही देश के अगले बीस वर्षों के बाद के भविष्य की कल्पना की जाती है इसलिये यूनिसेफ के सारे कार्य एवं सहायता प्राथमिक रूप से शिशु स्वास्थ्य पर केन्द्रित है।अज्ञानता का कारण गरीबी है और कुपोषण अज्ञानता के कारण होता है। धन की कमी के कारण बच्चे स्कूल नहीं आ पाते और कुपोषण के कारण बच्चे अनेकों बीमारियों से ग्रसित हो जाते हैं तथा इन्हीं बीमारियों के कारण आती है। गरीबी। और यह चक्र निरन्तर चलता रहता है। इन्हीं सब बातों को ध्यान में रखकर यूनिसेफ बच्चों के स्वास्थ्य, शिक्षा एवं पोषण संबंधी जरूरतें पूरी करता है। यूनिसेफ सभी विकासशील देशों की जनता तथा सरकार को अपनी सहायता अपने आप करने में सहायता देता है। शुरू में यूनिसेफ स्वयं सहायता देता है, इसके बाद उस कार्य को जारी रखने के लिए आवश्यक प्रशिक्षण, निर्देश तथा यथासंभव सहयोग प्रदान करता है। यह उन्हीं देशों की मदद करता है जो सारी सुख सम्पदा बच्चों के लिए करने का दृढ संकल्पित हैं। सबसे पहले यह विभिन्न देशों के बच्चों के विकास से संबंधित योजनायें बनाने में सहायक होता है। उसके बाद उस देश में जिन चीजों की आवश्यकता है, उन्हें प्रदान करता है, जैसे आर्थिक सहायता, आवश्यक सामान, उपकरण आदि। 1949 में भारत में सर्वप्रथम यूनिसेफ के साथ हुए अनुबंध के अन्तर्गत 150 टन दुग्ध चूर्ण विवरण के लिये प्राप्त हुआ। आवश्यकता पड़ने पर यूनिसेफ फल

सब्जियां उगाने के लिये उत्तम बीज, खेती के उपकरण प्रदान करता है। स्कूल शिक्षक शिक्षिकाओं को तथा युवा वर्ग को विभिन्न क्षेत्रों में प्रशिक्षण प्रदान करता है। मां तथा बच्चों की चिकित्सा सेवा के लिए दवाएं, विटामिन की गोलियां, स्वास्थ्य जांच उपकरण वाहक आदि देता है। और ये सहायता यूनिसेफ तभी देता है जबकि सारे के सारे कार्यक्रम जारी रखें जाये।

कार्यक्रम -

1 मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य हेतु स्वास्थ्य सेवायें प्रदान करना तथा इसके संबंध में प्रशिक्षण देना।

2 ऐसे रोगों पर नियंत्रण जिससे प्रतिवर्ष अनेक बच्चे प्रभावित होते है, जैसे मलेरिया, क्षय कोड आदि।

3 दुग्ध चूर्ण वितरण के अलावा पोषण के क्षेत्र में अन्य कार्य।

4 बच्चों के लिए सेवा योजनाएं

5 भूकम्प, बाढ आदि प्राकृतिक प्रकोपों के समय माताओं एवं बच्चों को आपाताकालीन सहायता प्रदान करना।

भारत में यूनिसेफ का कार्य

मई 1949 में यूनिसेफ भारत में सहायता कार्य कर रहा है। सबसे पहले इसी संगठन ने भारत 1949 दुग्ध चूर्ण् वितरित किया। उसके बाद स्वास्थ्य मंत्रालय तथा विश्व स्वास्थ्य संगठन की सहायता से यूनिसेफ ने कई प्रकार के सेवा कार्य भारत में किये हैं, जो इस प्रकार है -

1. प्रशिक्षण कार्यक्रम - यूनिसेफ ने सर्वप्रथम आल इण्डिया इंस्टीट्यूट ऑफ पब्लिक हैल्थ एण्ड हाईजिन कलकत्ता को मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य केन्द्र खोलने के लिए आर्थिक अनुदान प्रदान किया। इसके बाद देश के कई राज्यों में मेडिकल कॉलेजों एवं शिशु रोग विभाग के अन्तर्गत डॉक्टरों, नर्सों को प्रशिक्षण सुविधायें तथा छात्रवृत्तियां दी जो अभी जारी है ।

2. मातृ एवं शिशु कल्याण तथा ग्रामीण स्वास्थ्य सेवा - इसके अन्तर्गत तीन हजार से अधिक मातृ एवं शिशु कल्याण केन्द्र शुरू करने में इस संगठन ने मदद की। गांवों की सफाई तथा शुद्ध पेय जल प्राप्ति के क्षेत्र में भी यूनिसेफ ने काम किये हैं।

3. स्वास्थ्य सेवायें) मलेरिया उन्मूलन - यूनिसेफ ने मलेरिया उन्मूलन कार्यक्रम के अन्तर्गत डी.डी.टी. का वितरण किया तथा दिल्ली में एशिया का सबसे बडा डीडीटी उत्पादन कारखाना स्थापित किया जो प्रति वर्ष 1400 टन डी.डी.टी. उत्पादित करता है। सरकारी सहायता से दूसरा कारखाना केरल में स्थापित किया।

क) क्षय रोग नियंत्रण - क्षय रोग उन्मूलन के लिये भारत को यूनिसेफ द्वारा सर्वाधिक मात्रा में बी.सी.जी. वैक्सीन उपकरण तथा वाहन प्राप्त हुये। इसी के अन्तर्गत मद्रास में बी.सी.जी. प्रयोगशाला की स्थापना की गई तथा लोगों को भी इस संबंध में प्रशिक्षित किया गया।

ख) कोढ़ - इसके अन्तर्गत स्वास्थ्य मंत्रालय के आग्रह पर कोढ उन्मूलन के लिये ड्रेप्सोन टैबलेट उपकरण एवं वाहन दिये गये।

घ) इस रोग के उन्मूलन के लिए पंजाब, गुजरात, राजस्थान प्रान्तों को सहायता प्रदान की।

ग) घेंघा - आयोडीन की कमी से घेंघा रोग हो जाता है। यूनिसेफ ने इसके लिये राजस्थान में 1600 टन उत्पादन क्षमता वाले आयोडाइजेशन प्लांट की स्थापना की। इस सहायता से हमारे उन सभी क्षेत्रों में आयोडीनयुक्त नमक वितरित किया गया जहां घेंघा रोग प्रमुख रूप से फैला है।

ड) पेनिसिलीन का उत्पादन - इसके अन्तर्गत पतवाडा नगर, (उत्तर प्रदेश) गिडी (मद्रास) आदि स्थानों पर स्माल पौक्स वैक्सीन प्रयोगशालायें स्थापित की गई ।

च) ट्रिपिल वैक्सीन - कसौली में त्रिगुण प्रतिजन अथवा डिप्थीरिया, काली खांसी, तथा टेटनेस के ट्रिपिल वैक्सीन के उत्पादन केन्द्र बने

4. सेवा पूर्व प्रशिक्षण - युवा वर्ग को तकनीकी शिक्षा देने के लिये भारत सरकार के विभिन्न मंत्रालयों की सहायता से प्रशिक्षण प्रबंध किया गया।

5. अपंग बच्चों की सहायता - अपंग बच्चों के लिये बम्बई स्थित All India institute of Medicine and Pehabilitation तथा देहरादून के National Institute for Blind को उपकरण इत्यादि के रूप में सहायता दी। नेत्रहीनों के स्कूल में ब्रेले प्रिन्टिग प्रेस खोला गया।

6. पोषण संबंधी कार्यक्रम - यूनिसेफ ने सबसे पहले बच्चों के मध्य दूध वितरण का कार्य किया। व्यावहारिक पोषाहार कार्यक्रम के अन्तर्गत यूनिसेफ ने भारत सरकार की सहायतार्थ उपज संबंधी औजार, पम्प अन्य उपकरण, उत्तम बीज, मछली उत्पादन व मुर्गी पालन में सहायता प्रदान की। कई लोगों को इन कार्यों को प्रशिक्षण दिया। बम्बई, कलकत्ता, अहमदाबाद, राजकोट आदि स्थानों में दूध की डेयरियों की स्थापना की। बम्बई तथा कोयम्बटूर में प्रोटीन बहुल आहार उत्पादन केन्द्र खोले। न जाने कितने बच्चे भारत में कुपोषित है। यूनिसेफ ने कुपोषण दूर करने के लिये समय समय पर प्रशिक्षण कार्यक्रम पोषण संबंधी शिक्षा के कार्यक्रम, विचार गोष्ठी फिल्म प्रदशिर्नियों का आयोजन करके इन दिशा में प्रयास किये । नवजात शिशुओं, गर्भवती महिलाओं तथा दूध पिलाने वाली माताओं के बीच नि:शुल्क दूध का वितरण ग्रामों के सामुदायिक विकास केन्द्रों के माध्यम से कराया। बच्चों के आहार नेत्र रोगों से रक्षा के लिये विटामिन ए घेंघा से बचने के लिये आयोडीनयुक्त लवण रक्ताल्पता से बचने के लिये लोहयुक्त गोलियों के मुक्त वितरण का प्रबंध किया।

7 परिवार कल्याण - परिवार नियोजन कार्यक्रम को अधिक सफल बनाने के लिये यूनिसेफ ने चौथी पंचवर्षीय योजना के समय बिहार तथा उत्तर प्रदेश को सहायता प्रदान की। इस अनुदान से आक्सलरी नर्स मिडवाइफ तथा निरीक्षण को अच्छे उपकरण

प्रदान किये। समाज कल्याण विभाग तथा Institute of Public Administration के सहयोग से यूनिसेफ ने शहरों में बच्चों के लिये एकीकृत योजनायें प्रारंभ की।

8 **स्वच्छ पेयजल -** यूनिसेफ ने पथरीली भूमि वाले क्षेत्रों जहां के निवासियों को स्वच्छ पेय जल नहीं मिलता था, बोरिंग करवाने, जल स्त्रोत ढूंढने के लिये अच्छे उपकरण प्रदान किये । स्थान स्थान पर हेंडपंप लगवाकर स्वच्छ पेय जल की प्राप्ति सुलभ बना दी।

10.3 खाद्य एवं कृषि संगठन (एफ.ए. ओ.)

एफ.ए. ओ. को फाओ भी कहते है। इसका पूरा नाम Food & Agricultural Organisation है। हिन्दी में यह आहार एवं कृषि संगठन कहलाता है। इसका कार्य मूलत: विश्व में खाद्यान्न की स्थिति, उत्पादन एवं विक्रय वितरण जानकारी से था, किन्तु बदलती स्थितियों के पास इस संगठन का कार्य क्षेत्र विस्तृत होता गया फिर भी इसके द्वारा विश्व खाद्य स्थिति के आंकड़े रखना अब भी जारी है।

स्थापना -

एफ.ए. ओ. आहार एवं कृषि संगठन की स्थापना अक्टूबर 1945 में 42 सदस्य देशों के साथ क्यूबेक, कनाडा में हुई। पुन: सन् 1951 में एफ.ए. ओ. अपने 68 सदस्य देशों के साथ स्थायी मुख्यालय रोम में स्थानान्तरित हो गया। 1961 में इसके सदस्य देशों की संख्या 104 तक पहुंच गयी। इसके क्षेत्रीय कार्यालय कई जगह है।

एफ.ए. ओ. के कार्यों का संचालन हेतु इसके डायरेक्टर जनरल बने। पुन: 1959 में उन्हें इस पद के लिए अगले चार वर्षों की अवधि हेतु चुना गया।

एफ.ए. ओ. का आर्विभाव द्वितीय महायुद्ध के उपरान्त हुआ। युद्ध के परिणामों से कई देश प्रभावित थे। देशों में कृषि की स्थिति अच्छी नहीं थी। विशेषकर एशियाई देशों में पोषण स्तर काफी गिर गया था। बढती हुई जनसंख्या के कारण यह स्थिति दिनों दिन बिगडती जा रही है।

जनसंख्या के कारण अधिकांश लोग भूखमरी एवं पोषणहीनता जनित रोगों से ग्रसित होते जा रहे है। इसी समय एफ.ए. ओ. की स्थापना हुई। अत: इसका मुख्य उद्देश्य लोगों की इस स्थिति से उद्धार करना रहा है। इस संगठन का लक्ष्य कृषि उत्पादन में वृद्धि करना, खाद्यान्न वितरण एवं विक्रय प्रणाली में सुधार लाना है।

उद्देश्य -

एफ.ए. ओ. के उद्देश्य निम्नलिखित हैं -

- सभी देशों का जीवन स्तर ऊँचा उठाने में सहायता पहुंचाना
- सभी देशों की पोषण स्थिति में सुधार लाना।
- कृषि वन एवं मस्त्य मछली उत्पादन में वृद्धि करना
- ग्रामीण लोगों की स्थिति में सुधार लाना
- समस्त देशों के प्रत्येक व्यक्ति को उत्पादन कार्य में सुविधा प्रदान करना।

एफ.ए. ओ. की विश्व समिति किसी देश या क्षेत्र की स्थिति तथा इससे संबंधित आवश्यक आंकड़ों का अध्ययन करती है। इन्हीं अध्ययनों पर एफ.ए. ओ. की अगली योजना आधारित होती है। सन् 1960 में एफ.ए. ओ. ने भूखमरी से मुक्ति FFHC अभियान चलाया था। इसके उद्देश्य निम्नलिखित हैं -

1 सम्पूर्ण विश्व के अर्ध विकसित एवं विकासशील देशों में कुपोषण एवं भूखमरी के प्रति जन जागृति लाकर मुक्ति अभियान चलाया।

2 विभिन्न माध्यमों द्वारा उपयुक्त समस्याओं के समाधान का स्वागत करना।

कार्य क्षेत्र - एफ.ए. ओ. निम्नलिखित पांच क्षेत्रों में तकनीकी सहायता प्रदान करता है -

1 कृषि

2 अर्थ व्यवस्था

3 मत्स्य पालन

4 वन विभाग

5 पोषण।

एफ.ए. ओ. किसी भी देश की सरकार के आग्रह पर उपर्युक्त क्षेत्रों में अपने तकनीकी विशेषज्ञ भेजकर किसी लाभदायक योजना को आरंभ में सहायता देता है। किन्तु यह सहायता तभी दी जाती है जबकि तकनीकी प्रशिक्षण समाप्त होने पर भी कार्यक्रम जारी रखे जाये। स्थानीय सरकार उसका खर्च वहन करती है तथा अन्य सुविधायें देती है। एफ.ए. ओ. विशेषज्ञों का यात्रा व्यय तथा वेतन देता है। निर्देशन के लिए उपकरण प्रदान करता है। विकासशील देशों में जाकर तकनीकी प्रशिक्षण प्राप्त कर सकते है। एफ.ए. ओ. ने आहार एवं पोषण संबंधी सम्मेलन आयोजित किये तथा पोषण संबंधी पुस्तकें छपवाकर उनका निशुल्क वितरण भी किया। अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों से मिलकर एफ.ए. ओ. व्यावहारिक पोषाहार कार्यक्रम में भी सहायता प्रदान कर रहा है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के सहयोग से बच्चों के पोषण संबंधी सर्वेक्षण, शोधकार्य, गोष्ठी, सभाएं समय समय पर आयोजित करता रहा है।

10.4 विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यू.एच.ओ)

इस संगठन का पूरा नाम वर्ल्ड हेल्थ ऑरगेनाइजेशन तथा अंग्रेजी में संक्षिप्त नाम **W.H.O**. है। यह भी संयुक्त राष्ट्र संघ का विशेष संगठन है।

स्थापना - इनका मुख्यालय स्विट्जरलैण्ड स्थित जेनेवा में है। इस संगठन का संविधान 1946 में टैक्नोलॉजी प्रिपरेटरी कमेटी ने श्री रेनेसेण्ड की अध्यक्षता में बनाया। बाद में 7 अप्रेल 1948 में न्यूयार्क में हुई अन्तर्राष्ट्रीय स्वास्थ्य सम्मेलन में इस संगठन को स्वीकृति प्रदान की गई। वहीं इसका स्थापना दिवस था। इसीलिए अब भी प्रतिवर्ष 7 अप्रेल हो विश्व स्वास्थ्य दिवस मनाया जाता है। प्रति वर्ष इस संगठन का नया

नारा होता है। जो जन स्वास्थ्य की किसी चयनित समस्या के निदान के लक्ष्य को लेकर बनाया जाता है।

उद्देश्य - विश्व के स्वास्थ्य के स्तर में सुधार लाने के लिए विश्व स्वास्थ्य संगठन बना। इस संगठन का लक्ष्य समस्त व्यक्तियों द्वारा सर्वोच्च स्तर का स्वास्थ्य प्राप्त करना है। अत: इसका प्रमुख उद्देश्य Health for all by 200 A.D. अर्थात 200 ईसवी तक विश्व के समस्त व्यक्ति इस स्तर तक स्वास्थ्य प्राप्त कर सकें कि वे सामाजिक तथा आर्थिक रूप से उपयोगी एवं उत्पादन जीवन जी सकें। अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए विश्व स्वास्थ्य संगठन का विशेष रूप से मलेरिया, हैता, चेचक, पीत ज्वर तथा अन्य संक्रामक रोगों के विरूद्ध कार्य कर रहा है। जिनका प्रभाग राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पडता है। स्वास्थ्य के क्षेत्र में सहायता का आग्रह करने वाले विभिन्न देशों को सुझाव एवं सहायता प्रदान करना भी विश्व स्वास्थ्य संगठन का उद्देश्य है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के क्षेत्र - विश्व स्वास्थ्य संगठन ने सहायता की आशा रखने वाले देशों की सुविधा के लिए छ: क्षेत्रीय संगठन स्थापित किये है जो निम्नलिखित हैं -

क्षेत्र	**मुख्यालय**
1 दक्षिण पूर्वी एशिया	दिल्ली (भारत)
2 अफ्रीका	ब्राजालिया (कांगो)
3 अमेरिका	वाशिंगटन डी.सी.
4 अमेरिका	कोपेन हेगन
5 पूर्वी मेडिटिरेनियन	एलैक्जेन्डरा
6 पश्चिमी पेसेफिक	मनीला (फिलीपीन)

उपर्युक्त सूची से स्पष्ट है कि दक्षिण पूर्व एशिया के लिए क्षेत्रीय कार्यालय दिल्ली में है। स्थापना 1 जनवरी 1949 को हुई। इस कार्यालय द्वारा भारत, नेपाल, अफगानिस्तान, बर्मा, श्रीलंका, थाईलैंड तथा इण्डोनेशिया में सेवायें प्रदान की जाती है। सभी देश अपनी

सामर्थ्य के अनुसार विश्व स्वास्थ्य संगठन आर्थिक योगदान देते हैं। भारत द्वारा 1982 में WHO को लगभग 132 लाख डालर दिये गये।

कार्यक्षेत्र -

विश्व के स्वास्थ्य स्तर में सुधार लाने की दृष्टि से विश्व स्वास्थ्य संगठन निम्नलिखित कार्यक्षेत्रों में कार्य करता है -

1 मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य

2 पोषण

3 पर्यावरण स्वास्थ्य

4 व्यावसायिक शिक्षा

5 नर्सिंग

6 जन स्वास्थ्य

7 जन शिक्षा

8 मानसिक स्वास्थ्य

विश्व स्वास्थ्य संगठन ने स्वास्थ्य की परिभाषा इस प्रकार दी है -

Health is the state of complete physical, mental and social well being and not merely the absence of disease or infirmity.

WHO ने स्वास्थ्य के बारे में आगे कहा है -

Health is the fundamental right of every human being without distinction of race, religion and political belief.

पोषण संबंधी कार्य -

विश्व स्वास्थ्य संगठन यूनिसेफ तथा एफ.ए.ओ. के साथ मिलकर कार्य करता है। पोषण के कार्यक्षेत्र इस प्रकार हैं -

पोषण स्तर तथा संक्रामक रोगों को रोकने की शक्ति का मूल्यांकन करना

पोषण विज्ञान की शिक्षा देना

पोषण व आहार संबंधी सर्वेक्षण करना

विश्व आहार कार्यक्रम 1963 द्वारा सहयोग देना

व्यावहारिक पोषाहार कार्यक्रम

पोषण के क्षेत्र में विश्व स्वास्थ्य संगठन ने प्रोटीन कुपोषण दूर करने के सराहनीय प्रयास किये है। इसने INCAP (Institute of Nutrition of Central America and Panama) के सहयोग से INCAPARINA नामक वनस्पति प्रोटीन मिश्रण बनाया जिसे प्रोटीन न्यूनता से पीडित बच्चों में बांटा गया।

प्रोटिन कैलरी सलाहकार समिति - विकासशील देशों में पूर्वशालेय बच्चों में प्रोटीन कैलरी कुपोषण बढ़ते हुए स्वरूप को दृष्टिगत रखते हुए WHO ने सन् 1955 में प्रोटीन कैलरी सलाहकार समिति गठित की जो प्रोटीन कुपोषण की रोकथाम कर सके तथा सस्ते, उत्कृष्ट प्रोटीन स्रोत के संबंध में जानकारी दे सके। 1960 में इस समिति का पुनर्गठन किया गया तथा FAO, WHO तथा UNICEF के संयुक्त प्रयास से इनका विस्तार किया गया। इस समिति के सदस्य पोषण, खाद्य तकनीकी विज्ञान, शिशु रोग, कृषि उत्पादन, व्यापार आदि विषय के विशेषज्ञ थे।

सदस्यता - विश्व स्वास्थ्य संगठन की सहायता समस्त राष्ट्रों के लिए खुली है। अधिकांश राष्ट्र संयुक्त राष्ट्र संघ तथा विश्व स्वास्थ्य संगठन दोनों के सदस्य है परन्तु स्विटरज़रलैंड केवल विश्व संगठन का सदस्य है संयुक्त राष्ट्र संघ का नहीं।

प्रत्येक सदस्य राष्ट्र प्रतिवर्ष बजट में योगदान देता हैं तथा हर राष्ट्र को विश्व स्वास्थ्य संगठन की सहायता एवं सेवायें प्राप्त करने का अधिकार है। 1948 में विश्व स्वास्थ्य संगठन के 56 राष्ट्र सदस्य थे परन्तु 1982 तक इसके 162 राष्ट्र सदस्य थे तथा दो राष्ट्र एसोसिएट सदस्य थे। जो राष्ट्र अपने अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों के संचालन के लिए स्वयं उत्तरदायी नहीं होते हैं वे संगठन के एसोसएट सदस्य बनते हैं। ऐसोसिएट को विश्व स्वास्थ्य संगठन में वोट देने का अधिकार नहीं होता है।

अन्य उल्लेखनीय कार्य - WHO ने स्वास्थ्य एवं रोग उन्मूलन की दिशा में कई उल्लेखनीय कार्य किये हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन सम्पूर्ण विश्व के स्वास्थ्य संबंधी कार्यों के लिए मार्ग दर्शक तथा समन्वय का

कार्य करता है। यह सम्पूर्ण विश्व का सहकारी संगठन है, जिसमें राष्ट्र एक दूसरे की तथा स्वयं अपनी सहायता कर स्वास्थ्य स्तर को ऊँचा उठाने का प्रयत्न करते हैं। इसका प्रमुख तत्व तकनीकी सहकारिता है। इसके अन्तर्गत निम्न मुख्य क्षेत्र आते हैं -

1. विशिष्ट रोगों के बचाव तथा नियंत्रण - लगभग सभी संसर्गजन्य रोग कभी न कभी विश्व स्वास्थ्य संगठन के विषयक रह चुके है। संसर्ग रोगों के बचाव की दिशा में WHO सदैव कार्यरत रहा। विश्व से बडी माता का उन्मूलन अन्त राष्ट्रीय स्वास्थ्य सहकारिता का उत्तम उदाहरण है। इसके अन्तर्गत संससर्गजन्य रोगों के फैलाव को रोकने का प्रयास किया जाता है। संसर्गजन्य रोगों के बारे में हर प्रकार की सूचना एकत्र कर जिस राष्ट्र को उसके ज्ञान की आवश्यकता हो, उसे प्रदान किया जाता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने संसर्गजन्य रोगों की अपेक्षा अन्य रोगों की ओर भी पर्याप्त ध्यान दिया है। केन्सर, हृदय रोग, वंशानुगत विकास, मानसिक विकास नशीली दवायें तथा दांत के रोगों से बचाव, उपचार तथा नियंत्रण की दशा में कार्य किया है। आजकल विश्व स्वास्थ्य संगठन का प्रमुख कार्य बचपन के रोगों से बचावात्मक टीके लगाने है।

2. विस्तृत स्वास्थ्य सेवाओं का विकास - इसके अन्तर्गत प्रत्येक व्यक्ति तक पहुंचने योग्य संबंधी शोध कार्य सम्मिलित है। अपने सदस्य देशों की स्वास्थ्य सेवाओं को मजबूत करना तथा प्रभावकारी बनाना विश्व स्वास्थ्य संगठन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य है। स्वास्थ्य के लिए उपयुक्त तकनीकी, विश्व स्वास्थ्य संगठन का नया कार्यक्रम है। इसके अन्तर्गत सदस्य राष्ट्रों को अपनी स्वास्थ्य सेवाओं को स्वयं हल करने के संबंध में आत्म निर्भरता प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। इसे नये कार्यक्रम द्वारा प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल स्थापित करने की दिशा में प्रयत्न किये जा रहे हैं।

3 पारिवारिक स्वास्थ्य - पारिवारिक स्वास्थ्य से संबंधित कार्य WHO ने 1970 से आरंभ किये। इस कार्यक्रम का उद्देश्य परिवार को इकाई के रूप में लेकर चलते हुए मानव स्वास्थ्य सुधार की दशा में प्रयास

करना है। इनके अन्तर्गत (अ) मातृ एवं बाल स्वास्थ्य की देखबाल (ब) मानव प्रजनन (स) पोषण तथा (द) स्वास्थ्य शिक्षा के क्षेत्र में कार्य होते है।

4 वातावरणीय स्वास्थ्य - स्वस्थ वातावरण प्रदान करना विश्व स्वास्थ्य संगठन का मुख्य कार्य सदैव रहा है। इसके अन्तर्गत जल, वायु एवं भोजन प्रदूषण की रोकथाम करना, विकिरण से रक्षा, नये तकनीकी विकास के फलस्वरूप उत्पन्न संकट के निबटना आदि कार्य आते हैं। कार्य के स्थल पर स्वस्थ वातावरण तथा नये तकनीकी विकास के फलस्वरूप आने वाले नये खतरों की शीघ्र पहचनाकर उसके प्रति कार्य करना है। 1990 तक विश्व स्वास्थ्य ने सबके लिए पानी का लक्ष्य प्राप्त करने का निर्णय लिया।

5 स्वास्थ्य सांख्यिकी- 1947 के प्रारंभिक समय से ही, विश्व स्वास्थ्य संगठन विभिन्न प्रकार की स्वास्थ्य संबंधी मृत्यु एवं स्वास्थ्य सांख्यिकी प्रदान करने के प्रति सचेत रहा है। डब्ल्यू, एच.ओ. ने विश्व स्वास्थ्य के आंकड़े जिनके अन्तर्गत जन्म दर, मृत्यु दर रोगों से प्रभावित जन समुदाय संबंधी विवरण प्रकाशित करता रहता है। प्रत्येक दस वर्षों में इनका नवीनीकरण होता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन रोगों को अन्तर्राष्ट्रीय वर्गीकरण इस प्रकार प्रकाशित करते हैं कि उनका तुलनात्मक अध्ययन किया जा सके। इसके अतिरिक्त राष्ट्रों को चिकित्सा के रिकार्ड को सुधारने के लिए तथा राष्ट्रीय स्वास्थ्य सूचना प्रणाली को चलाने तथा नियोजित करने के लिए भी सहायता दी जाती है।

6 स्वास्थ्य संबंधी साहित्य एवं सूचनाएं - WHO स्वास्थ्य संबंधी सूचनाएं एवं साहित्य सर्वसुलभ बनाने का कार्य करता है।

7 जीव चिकित्सीय अनुसंधान - WHO स्वयं अनुसंधान नहीं करता है परन्तु अनुसंधान कार्य को प्रेरित तथा समन्वित करने का कार्य करता है। उष्णकटिबंधीय बीमारियों (मलेरिया, कोढ, ट्राईपेनोसोमयासिस, शिरूटोसोमयासिस तथा लीश्मानियासिस) के संबंध में अनुसंधान के लिए विश्व स्वास्थ्य संगठ कटिबद्ध है। इसके अन्तर्गत नये यंत्र विकसित

करने, अनुसंधान संस्थाओं को मजबूत करने तथा प्रभावित देशों में रोग निर्धारित किया जाता है।

8 अन्य संगठनों के साथ सहयोग - WHO संयुक्त राष्ट्र एवं अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के साथ सहयोग स्थापित करने का कार्य करता है।

10.5 भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

भारत में कृषि तथा सिंचाई मंत्रालय के अन्तर्गत कृषि अनुसंधान परिषद की स्थापना हुई।

उद्देश्य - इसके तीन प्रमुख उद्देश्य है -

अ) कृषि संबंधी शोध करना

ब) ग्रामीण युवकों के लिए लाभदायक कार्यक्रम आयोजित करना

स) कृषि संबंधी प्रशिक्षण प्रदान करना

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद विभिन्न स्तरों पर प्रशिक्षण कार्यक्रम चल रहा है। इसके अन्तर्गत देश में लगभग 22 कृषि विश्वविद्यालयों तथा 31 अनुसंधान केन्द्रों को सहायता प्रदान की जा रही है। मेधावी छात्र छात्राओं को ICAR कृषि एवं गृह विज्ञान मे अनुसंधान हेतु प्रति वर्ष छात्रवृत्ति भी दी जाती है।

उपर्युक्त संस्थाओं तथा विश्वविद्यालयों ने कुछ चुने हुए ग्रामों में ग्रामीण युवक क्षेत्र परियोजनाएं आरंभ की है। कुछ अन्य संस्थाओं और विश्वविद्यालयों ने ग्रामीण युवक विकास कार्यक्रम आरंभ किये हैं। सन् 1973 में ICAR ने एक समिति गठित की जिसकी सिफारिश पर देश भर में कृषि विज्ञान केन्द्रों की स्थापना की गयी। इसका उद्देश्य प्रशिक्षण प्रणाली द्वारा कृषकों को तकनीकी ज्ञान देना है। जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव कृषि उत्पादन पर पड़ता है। कृषि विज्ञान केन्द्र से प्रशिक्षित कृषक अपने उपार्जित ज्ञान को तत्काल व्यवहार से लाकर उत्पादन और आय में वृद्धि कर सकता है। जो युवक तथा युवतियां बीच में ही स्कूल कॉलेज छोडने के लिए विवश हुए है उनके लिए भी ये केन्द्र वरदान सिद्ध हुए है क्योंकि उन्हें यहां प्रशिक्षण की सुविधा दी

जाती है। ग्रामीण महिलाएँ के उत्थान के लिए भी कृषि विज्ञान केन्द्र प्रयत्नशील है। यहां से गृह विज्ञान में प्रशिक्षण पाकर ग्रामीण महिलाओं अपने समाज में प्रतिष्ठा के योग्य बन जती है। घरेलू उद्योगों का सफलतापूर्वक संचालन कर आर्थोपार्जन में उनका महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है। इस प्रकार के प्रशिक्षण की व्यवस्था से केवल एक व्यक्ति का ही विकास नहीं होता बल्कि पूरे परिवार के विकास की संभावनाएं बढ जाती है। आर्थिक स्तर होने से पोषण स्तर में भी सुधार होता है। सन् 1989 तक भारत में 101 कृषि विज्ञान केन्द्रों की स्थापना हो चुकी है। ये कृषि विज्ञान केन्द्र भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद राज्य सरकारों, कृषि विश्वविद्यालयों एवं स्वयंसेवी संस्थाओं के अन्तर्गत संचालित हो रहे हैं। कृषि अनुसंधान परिषद् ने कृषि से संबंधित उनके शोध कार्यों तथा कृषि साहित्य का प्रकाशन भी किया है।

10.6 भारतीय चिकित्सा विज्ञान अनुसंधान परिषद

इसका संक्षिप्त अंग्रेजी नाम ICMR है। भारतीय चिकित्सा विज्ञान अनुसंधान परिषद देश में चिकित्सा संबंधी अनुसंधान आरम्भ कर, विकसित करने तथा संयोजन करने का कार्य करता है। इसे शत प्रतिशत शासन द्वारा सहायता प्रदान की जाती है। अनेक अर्थ स्थायी इकाइयों के अतिरिक्त परिषद के द्वारा 18 स्थायी शोध संस्थाओं तथा केन्द्रों को चलाया जा रहा है। इन शोध संस्थाओं में पोषण के क्षेत्र में राष्ट्रीय पोषण संस्थान NIN हैदराबाद उल्लेखनीय कार्य कर रहा है। जो केन्द्र तथा संस्थाऐं है ये इस प्रकार हैं -

- राष्ट्रीय पोषण आहार संस्था (NIN), हैदराबाद
- नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ वायरोलाजी (NIV) पूना
- तपेदिक अनुसंधान केन्द्र, (TRC), मद्रास
- नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ कॉलेरा तथा एण्टेरक रोग (NICE), कलकता
- दी इंस्टीट्यूट ऑफ पैथोलॉजी, नई दिल्ली

- राष्ट्रीय औद्योगिक स्वास्थ्य संस्थान, अहमदाबाद
- दि इंस्टीट्यूट फॉर रिसर्च इन रिप्रोडक्शन, मुम्बई
- दि सेन्ट्रल, जालमा, आगरा
- दि वेक्टर कन्ट्रोल रिसर्च सेन्टर, पांडुचेरी
- दि मलेरिया रिसर्च सेन्टर, दिल्ली
- दि इंस्टीट्यूट ऑफ रिसर्च इन मेडिकल स्टोटिि‍स्क्स, नई दिल्ली तथा मद्रास।
- दि लेबोरेट्री एनिमल इन्फोमेशन सर्विस, हैदराबाद।
- दि फूड एण्ड ड्रग टाकिसकोलोजी सेन्टर, हैदराबाद।
- दि साइकोलोजी रिचर्स सेन्टर, नई दिल्ली।
- दि एण्ट्रो वापरस रिसर्च सेन्टर, मुम्बई।
- रीजनल मेडिकल रिसर्च सेन्टर भी पोर्टब्लेमर, भुवेनश्वर, डिबूगढ तथा जबलपुर में एक एक खोला गया है।
- दि राजेन्द्र मेमोरियल रिसर्च इंस्टीट्यूट इन मेडिकल साइंसेस, पलोना।

ICMR ने पोषण विज्ञान से संबंधित अनेक महत्वपूर्ण शोध आलेखों तथा पुस्तकों का प्रकाशन किया है। इन उल्लेखनीय प्रकाशन हैं -

The Nutritive value of Indian Food and Planning of Satisfactory Diets,

- Energy Metabolism
- Studies on Human Location
- Nutrition Atlas of India
- Diet Atlas of India
- Nutrition in India
- Dietary Allowances for Indians.
- Review of Nutrition Surveys carried out in India

- Nutrition for Mother and Child

राष्ट्रीय पोषण संस्थान

भारत मे इस संस्थान की स्थापना कुनूर में कुनूर रिसर्च लेबोरट्री नाम से हुई थी। सन् 1959 में इसे हैदराबाद में स्थानांतरित करके राष्ट्रीय संस्थान नाम दिया गया तब से वह इसी नाम से प्रसिद्ध है। इसके प्रमुख विभाग हैं -

- जीव रसायन विज्ञान
- आहार एवं पोषण विज्ञान
- शिक्षा एवं प्रशिक्षण

रोग संबंधी पोषण

राष्ट्रीय पोषण संस्थान पोषण संबंधी अनेकों शोध कर चुका है तथा अब भी इस कार्य में संलग्न है। भोज्य पदार्थों के पोषक मूल्यों का विश्लेषण करके उसके परिणामों को ICMR की सहायता से Nutritive Values Indian Food नाम से प्रकाशित किया है। यह एक मानक पुस्तिका है। NIN पोषक नामक पत्रिका का प्रकाशन करता है।

10.7 केन्द्रीय आहार तकनीकी अनुसंधान संस्थान

सन् 1950 में केन्द्रीय आहार तकनीकी अनुसंधान परिषद्, मैसूर में स्थापित हुआ। यह फल, सब्जियों, अनाज, दालों आदि भोज्य पदार्थों के संग्रहीकरण, संरक्षण के सुरक्षित तरीकों का अनुसंधान करने, सस्ते सुविधाजनक पोष्टिक आहार तैयार करने तथा पूरक पौष्टिक आहर बनाने में संलग्न रहता है। इस संस्थान में पोषक एवं आहार संबंधी अनुसंधान किये जाते हैं। इनके कुछ प्रमुख अग्र प्रकार हैं -

1 जीव रसायन विज्ञान एवं व्यावहारिक पोषण

2 चावल तथा दालों का तकनीकी अनुसंधान

3 बेकिंग एण्ड कन्फैक्शनरी

4 फल एवं सब्जियों का तकनीकी अनुसंधान

5 घरेलू व अन्य कीटों की नियंत्रण विधियां

6 जीवाणु विज्ञान

7 प्रोटीन टैक्नोलोजी

CFTRI ने अनेक पोषाहार एवं बाल आहार निर्मित किये है जैसे - भैंस के दूध से शिशु दुग्ध आहार, स्ल्य त्याग आहार, उच्च प्रोटीनयुक्त आहार, वनस्पति प्रोटीन से निर्मित शिशु दुग्ध आहार। अनाजों में धुंआ देकर उन्हें सुरक्षित रूप से भण्डारण करने के लिए DUROFUME प्रक्रिया, फलों पर मोम की परत चढाकर संरक्षित करने की विधियां, मछली सूखाने की विधियां विकसित की है। दूध के विकल्प के रूप में मूंगफली से दूध बनाने की विधि सोयाबीन से दूध बनाने की विधि प्रकाशित की है।

CFTRI ने कुछ प्रसिद्ध पूरक भोज्य पदार्थ भी बनाये है, जैसे

1 MPF - भारतीय बहुउद्देश्य आटा, Multi-Purpose Food या MPF के नाम से प्रचलित है। इसमें 75 प्रतिशत मूंगफली की खली (तेल निकालने के बाद बचे मूंगफली के प्रोटीनयुक्त अवशेष) तथा 25 प्रतिशत भूने चने के आटे का मिश्रण बनाया जाता है। इसमें अलग से विटामिन ए, डी, थायमीन, राइबोफलेविन तथा कैल्शियम कार्बोनेट मिला होता है। यह सादे अथवा मसालेयुक्त मिश्रण के रूप में मिलता है। सादे आटे का उपयोग दही, मिठाइयां बनाने या आटे, मैदा, बेसन, पिंसी दाल आदि में मिलाकर व्यंजन बनाने में किया जाता है। मसालेदार MPF नमकीन, मसालेदार व्यंजनों के साथ प्रयुक्त होता है। इसकी 25 ग्राम मात्रा प्रतिदिन लेने से 10 ग्राम प्रोटीन तथा विटामिन ए कैल्शियम एवं राइबोफलेबिन की आधी मात्रा प्राप्त होती है।

2 माल्ट युक्त भोज्य पदार्थ - इसमें अनाज के माल्ट 40 भाग, कम वसायुक्त मूंगफली का आटा 40 भाग तथा भुने चने का आटा 20 भाग

मिला होता है जिसमें उपर से विटामिन और कैल्शियम मिलाये जाते है। इसमें 28 प्रतिशत प्रोटीन प्राप्त होता है।

3 बाल आहार - इस आहार में विटामिन, कैल्शियमयुक्त गेहूं का आटा 70 भाग, मूंगफली का आटा 20 भाग तथा भुने चने का आटा 10 भाग होता है इससे 20 प्रतिशत प्रोटीन प्राप्त होता है।

उपर्युक्त संस्थानों के अतिरिक्त गृह विज्ञान महाविद्यालयों के पोषण विज्ञान विभाग, केन्द्रीय तथा राज्य स्वास्थ्य विभाग के पोषण से संबंधी खण्ड तथा चिकित्सा महाविद्यालयों के पोषण विभाग भी पोषण के क्षेत्र में महत्वपूर्णा कार्य कर रहे हैं।

10.8 भारतीय गृह विज्ञान संगठन

भारतीय गृह विज्ञान संगठन की स्थापना 1952 में की गयी थी। इसका मुख्यालय लेडी इरविन कॉलेज, नई दिल्ली में रखा गया। यह संगठन प्रशिक्षित गृह वैज्ञानिकों का संगठन है जो अन्तर्राष्ट्रीय गृह अर्थ परिषद से संबंद्ध है।

प्रति दो वर्ष में एक बार इस संगठन का सम्मेलन आयोजित किया जाता है। प्रति वर्ष संगठन एक गृह विज्ञान पत्रिका प्रकाशित करता है, जिसके गृह विज्ञान के विविध क्षेत्रों से संबंधित शोध लेख प्रकाशित किये जाते हैं। 1972 से संगठन की पत्रिका का प्रकाशन वर्ष में दो बार होने लगा है।

भारतीय गृह विज्ञान संगठन से संविधान के कुछ अंश नीचे दिये जा रहे हैं -

धार I – संगठन का नाम - भारतीय गृह विज्ञान संगठन

धारा II – भारतीय गृह विज्ञान संगठन अन्तर्राष्ट्रीय गृह अर्थशास्त्र परिषद्

धारा III – संगठन के निम्न उद्देश्य होंगे -

1. ठोस गृह निर्माण शिक्षा के द्वारा परिवार के कल्याण में उन्नति करना

2. गृह विज्ञान व्यवसाय के स्तर को ऊँचा उठाना
3. इन आधारभूत उद्देश्यों को निम्न प्रकार से क्रियान्वित किया जायेगा -
4. शाला, प्रशिक्षण महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों तथा शाला के बाहर के कार्यक्रमों की स्थापित कर तथा उनमें सुधार लाकर गृह निर्माण शिक्षा को उत्साहित किया जायेगा।
5. गृह विज्ञान से संबंधित रिपोर्ट, पेम्पलेट तथा अन्य प्रकाशन उपलब्ध कराना।
6. गृह विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में शोध वं अनुसंधान की सहायता प्रदान कर प्रेषित करना।
7. विभिन्न संस्थाओं के गृह विज्ञान पाठ्यक्रमों का मानकीकरण तथा समन्वय करना।

धारा IV – सदस्यता

- जो व्यक्ति सहनियमों के अन्तर्गत योग्य सिद्ध होगे, वे इस संगठन की सदस्यता के लिए योग्य होंगे।

धारा V – 1 संगठन के निम्न पदाधिकारी होंगे

अ) एक अध्यक्ष

ब) एक अथवा अधिक उपाध्यक्ष

स) एक अवैतनिक सामान्य सचिव

द) एक सह सचिव

च) एक कोषाध्यक्ष

उपरोक्त सदस्य कार्य समिति के सदस्य होंगे।

2 कार्य समिति में निम्न सदस्य होंगे

चुने गये अधिकारी

पूर्व अध्यक्ष (पिछले सत्र का केवल)

अन्य प्रतिनिधि जो सह नियमों के अनुसार होंगे।

धारा VI – कार्य समिति द्वारा निर्धारित समय तथा स्थान पर संगठन की नियमित बैठकें होंगी।

धारा VII – 1960 के रजिस्ट्रेशन ऑफ सोसायटी एक्ट के प्रावधानों के अथवा इसके स्थान पर बनाये गये किसी अन्य एक्ट के अनुसार संविधान में परिवर्तन किया जा सकता है।

10.9 सारांश

विश्व के प्रत्येक अंतिम व्यक्ति तक को उत्तम स्वास्थ्य और पोषण प्रदान करने के लिये कई अन्तर्राष्ट्रीय सरकारी संगठन जैसे यूनिसेफ, एफ.ए.ओ. और डब्लू.एच.ओ. कार्यरत है । यूनिसेफ के सभी कार्य सहायता प्राथमिक रूप से शिशु के स्वास्थ्य पर केंद्रित है । कुपोषण और गरीबी उन्मूलन हेतु कई गतिविधियों का संचालन किया जाता है अन्तर्राष्ट्रीय सरकारी संगठन के साथ-साथ राष्ट्रिय सरकारी संगठनो- भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, भारतीय चिकित्सा विज्ञान अनुसंधान परिषद, केन्द्रीय आहार तकनीकी अनुसंधान संस्थान और भारतीय गृह विज्ञान अन्गाथान के उद्देश्य कार्य एवं उनके विविध केन्द्रों का उल्लेख इस इकाई में किया गया है ।स्र्व्क्ल्याँ की भावना इन सभी सरकारी संगठनो में विद्यमान रहती है ।

10.10 अभ्यास प्रश्न

निम्न पर टिप्पणी लिखिए

1.यूनिसेफ

2. एफ. ए. ओ.

3. विश्व स्वास्थ्य संगठन

4. भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद

5. भारतीय चिकित्सा विज्ञान अनुसन्धान परिषद

10.11 संदर्भ ग्रन्थ

प्रसार शिक्षा –डा. वंदना जैन , डा पूनम कुमारी

प्रसार शिक्षा-डा बी. डी. हरपलानी

प्रसार शिक्षा- डा वृंदा सिंह

अध्याय 11

कार्यक्रम नियोजन

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 कार्यक्रम नियोजन

11.3 कार्यक्रम नियोजन की परिभाषा

11.4 कार्यक्रम नियोजन सिद्धान्त

11.5 कार्यक्रम नियोजन का महत्व

11.6 कार्यक्रम प्रोजेक्शन

11.7 सारांश

11.8 अभ्यास प्रश्न

11.9 संदर्भ ग्रन्थ

11.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययनपरांत विद्यार्थी-

1. कार्यक्रम नियोजन के अर्थ की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
2. कार्यक्रम नियोजन की परिभाषा की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
3. कार्यक्रम नियोजन के सिद्धान्त की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
4. कर्यक्रम नियोजन के महत्व की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।
5. कार्यक्रम नियोजन केकार्यक्रम प्रोजेक्शन की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।

11.1 प्रस्तावना

प्रसार शिक्षा एक ऐसी शिक्षा है जो लोगों की समस्याओं को सुलझाने में उनकी मदद करती है। उन्हें समस्याओं की पहचान व उनका हल ढूंढना सिखाता है ताकि वे उद्देश्यों को प्राप्त मंजिल तक पहुंच सके। यह लोगों के वर्तमान दशा में सुधार लाकर बेहतर दशा में रहने के लिए प्रेरित करता है तथा उनके रहन सहन के स्तर को ऊँचा उठाता है। इस प्रकार प्रसार शिक्षा एक ऐसी शिक्षण व्यवस्था है जो लोगों के स्वयं के प्रसार के माध्यम से बेहतर जीवन जीने में मदद करती है। परन्तु यह तभी संभव है जब कार्य को नियोजित ढंग से किया जाए। बिना नियोजन के प्रसार कार्य दिशाहीन रहता है। बीड रूडर मूथी ने इस संदर्भ में अपना वक्तव्य दिया है कि कोई भी व्यक्ति, समाज, राज्य व राष्ट्र किसी भी कार्य को करने में सफल होना चाहता है तो वे अपने कार्य, धन तथा अन्य विषयों का सही ढंग से नियोजन करें। बिना कार्यक्रम नियोजन के तो घर का सामान्य सा उत्सव भी सफल नहीं हो पाता। यदि हम बालक का जन्मोत्सव, मुडन संस्कार मानना चाहते हैं तो इसके लिये भी कार्यक्रम नियोजन किया जाना है कि किस दिन मुडन संस्कार होगा। कौन कौन से अतिथि मुंडन में भाग लेने आए मेहमानों के स्वागत सत्कार के लिये कौन कौन लोग होंगे। उन्हें ठहराने की क्या व्यवस्था रहेगी। क्या क्या व्यंजन बनेगा। व्यंजन बाजार मे मंगवाये जाएंगे अथवा हलवाई लगावाकर बनावाया जाएगा, आदि अनेकानेक बातों का कार्यक्रम सफल हो सकेगा। यदि कार्यक्रम नियोजन के बिना ही मुंडन संस्कार का कार्य प्रारंभ किया जाए तो वे कदापि सफल नहीं होगे। उनमें अनेक कमियां रह जाएंगी। मेहमानों को अनेक परेशानियों का सामना भी करना पड़ सकता है और उन्हें बिना खाये पिये ही जाना पड सकता है। अतः मुंडन संस्कार का आनन्द हम नहीं उठा पाएंगे। इसलिये किसी भी कार्य को करने से पूर्व कार्यक्रम नियोजन किया जाना अत्यावश्यक है। प्रसार कार्य के अन्तर्गत नियोजन का कुछ विशेष ही महत्व है। प्रसार कार्य में यह तो धुरी के समान है। जिस पर प्रसार सेवा निर्भर करता है। यदि प्रसार कार्यकर्ता कोई भी कार्यक्रम को बिना नियोजन किये ही गांवों में

चलाता है तो वह कदापि सफल नहीं हो सकेगा। कारण स्पष्ट है कि नियोजन का कार्य की दिशा एवं उद्देश्य का ज्ञान कराता है। दूसरे शब्दों में समय, शक्ति एवं धन का बेहतर ढंग से सदुपयोग तभी संभव है जब कार्य का नियोजित ढंग से किया जाए। (Planning is the best way to pull up the economy to self sustaining and self generationg stage.) सामान्य शब्दों में, कार्यक्रम नियोजन एक अथक प्रयास है जो ग्रामीण लोगों की आवश्यकताओं, रूचियों एवं इच्छाओं को ध्यान में रखकर किया जाता है ताकि वे जिस स्थिति में रह रहे हैं उससे भी बेहतर स्थिति में रहें तथा अपने जीवन स्तर एवं रहन सहन के स्तर को ऊँचा उठायें। सारांश में, यदि कार्य को सुनियोजित ढंग से किया जाए, तो लक्ष्य पर पहुंचाना आसान होगा। प्रसार कार्यकर्ता वांछित लक्ष्यों को बिना समय, शक्ति एवं धन अपव्यय किये ही प्राप्त कर लेगा। यदि कभी भी, किसी भी स्तर पर कोई बाधा पहुंचाता है तो वह उसो तुरन्त निराकरण कर सकता है। समस्याओं का समाधान कर सकता है। क्योंकि उसे कार्यक्रम नियोजन के सभी चरणों को पूर्ण जानकारी रहती है। जिससे बाधक तत्वों को पहचानना आसान हो जाता है।

11.2 कार्यक्रम नियोजन का अर्थ

कार्यक्रम नियोजन को समझने के लिये कार्यक्रम तथा नियोजन को समझना आवश्यक है। सामान्य तौर पर इन दोनों में कोई अन्तर नहीं है। दोनों ही एक ही सिक्के के दो पहलू है। जिन्हें अलग करके नहीं देखा जा सकता। परन्तु प्रसार शक्तियां के अनुसार कार्यक्रम एवं नियोजन में विशिष्ट अंतर है। कार्यक्रम में क्या, कब, कहां, कैसे, किसके लिए, किसके द्वारा क्यों, किसलिये, किस दिन, किस समय, किन माध्यमों से यहां तक कि सभी क्रियाओं का क्रम आता है आदि प्रश्नों के उत्तर का उल्लेख रहता है, जबकि नियोजन में समस्त क्रियाओं का किस प्रकार किया जाए ताकि कुशलतापूर्वक संपन्न हो सके। अत: कार्यक्रम नियोजन के अन्तर्गत कार्यक्रमों की विस्तृत जानकारी रहती है और उसी के अनुसार कार्य संपिदित किये जाते है। विभिन्न प्रसार

शिक्षाविदों ने प्रसार कार्यक्रम तथा कार्यक्रम नियोजन की भिन्न भिन्न परिभाषाएं दी है, जिनका उल्लेख अग्रानुसार है –

प्रसार कार्यक्रम की परिभाषा

लॉरेन्स के अनुसार - एक प्रसार कार्यक्रम प्रसार सेवाओं की समस्त क्रियाओं तथा समझ का कुल योग है जिसके अन्तर्गत 1 कार्यक्रम नियोजन विधियां 2 कार्यक्रम की लिखित विवरण 3 कार्य की योजना 4 कार्यक्रम नियोजन 5 परिणाम तथा 6 मूल्यांकन आता है।

"An extension programme is the sum total of all the activies and understanding of a country extension services. It includes (i) the progamme planning process (ii) Written programme statement (iii) Plan of work (iv) Progamme execution (v) Results and (Vi) Results and (vi) Evaluation."

कैल्सी एवं हर्ने के शब्दों में - प्रसार कार्यक्रम स्थिति, उद्देश्यों, समस्याओं तथा उनके समाधान का विवरण है।

"An extension programme is a statement of situation, objectives, problems and soluations." Kalsey & Hearne

(3) USD (1956) के अनुसार "An extension programme which is arrived at co-operatively by the local people and the extension staff and includes a statement of (i) The situation in which the people are located (ii) The problems that are a pan of local situation (iii) The objectives and goals of local people and (iv) The recommendation or soluations to reach these objectives on a long term basis (my be one year or less)

11.3 कार्यक्रम नियोजन की परिभाषाएं

विभिन्न प्रसार शिक्षाविदों ने कार्यक्रम नियोजन की परिभाषाएं भिन्न भिन्न प्रकार से दी है कुछ महत्वपूर्ण परिभाषाएं निम्नानुसार है -

1. डॉ. रंजीत सिंह के अनुसार - प्रसार कार्यक्रम नियोजन को एक सतत तथा सहयोगात्मक क्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसमें स्थानीय लोगों तथा प्रसार कार्य से जुड़े लोगों की मिली जुली भागीदारी होती है जिसमें समस्याओं को पहचान, उद्देश्यों को निर्धारित करना तथा उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कार्य करना समाहित है।

……Programme planning in extension can be defined as a continous and co-operative activity involving local people and extension personnel, in which problems are identified, objectives are set forth and action is taken to reach the objectives."

2. ऑस्लॉन के शब्दों में -कार्यक्रम नियोजन एक संगठित एवं सोद्देश्य प्रक्रिया है जिसका नेतृत्व एवं मार्गदर्शन प्रसार कार्यकर्ता एवं अन्य प्रतिनिधि करते हैं। इसमें ध्यान में रखकर शिक्षण एवं अन्य क्रियाकलापों का नियोजन एवं निर्धारण किया जाता है जिससे उनकी स्थितियों को वांछित दिशा में परिवर्तित किया जा सके।

"Programm planning is an organized and purposefull process initiated and guided by interests, needs and problems. Deciding upon and planning education and other action to change their situation in desired ways.

3. जे.एस. गर्ग के अनुसार - कार्यक्रम नियोजन एक प्रक्रिया है जिसमें कार्यों की विधियों की रूपरेखा इस प्रकार से व्यवस्थित की जाती है, ताकि कार्य अधिक कुशलतापूर्वक संपादित हो सके।-

Programme planning is the process in which outline of procedure of work is so arranged as to enable efficient execution. – S.S. Garg

4 Programme planning is a process in which facts concerning the situation are collected, and analyesed, unsatisfactory elements are identified, desired objectives or improvements are determined and stated, and

alternative ways of reaching the objectives are considered.

Kalsey and Hearne

कोई भी कार्यक्रम नियोजन करते समय निम्न प्रश्नों तथा उनके उत्तर को ध्यान में रखना चाहिए -

- क्या करना चाहिए?
- कब करना चाहिए ?
- कहां करना चाहिए ?
- क्यों करना चाहिए ?
- किसके लिये करना चाहिए ?
- कार्यक्रम में किनको लाभ मिलेगा
- कार्यक्रम में कौन कौन से लोग भाग लेंगे
- कार्यक्रम में कौन कौन सी शिक्षण विधियां काम में ली जाएंगी।
- कार्यक्रम में कितना समय लेगगा।
- कार्यक्रम में कितना धन व्यय होगा तथा उसकी व्यवस्था कहां कसे की जाएगी
- कार्यक्रम किस विषय पर आयोजित किया जाएगा। आदि

यदि प्रसार कार्यकर्ता इन प्रश्नों को ध्यान में रखकर कार्यक्रम नियोजित करता है तो इसमें कोई दो मत नहीं कि कार्यक्रम सफल नहीं होगा। कार्यक्रम वांछित सफलता अवश्य ही मिलेगी। कार्यक्रम सम्पादन में यदि कहीं पर कोई व्यवधान आता भी है तो तत्काल उसका निराकरण कर लिया जाता है क्योंकि कार्यक्रम के बारे में सभी को ज्ञात रहता है। अत: तुरन्त ही उसकी व्यवस्था कर ली जाती है। परिणामस्वरूप वांछित लक्ष्यों की प्राप्ति हो जाती है। लोग, खुशहाल जीवन जनीनमें में समर्थ हो जाते हैं। इस कार्यक्रम से जो सुखद परिणाम एवं परिवर्तन आते हैं, वे पूरे समाज को एक ठोस एवं सुदृढ़ आधार प्रदान करते हैं तथा भविष्य के कार्यक्रम को बनाने में सहयोग करते हैं।

संक्षेप में क्या है? क्या होना चाहिए। इन दोनों के बीच की कड़ी का नाम है कार्यक्रम नियोजन

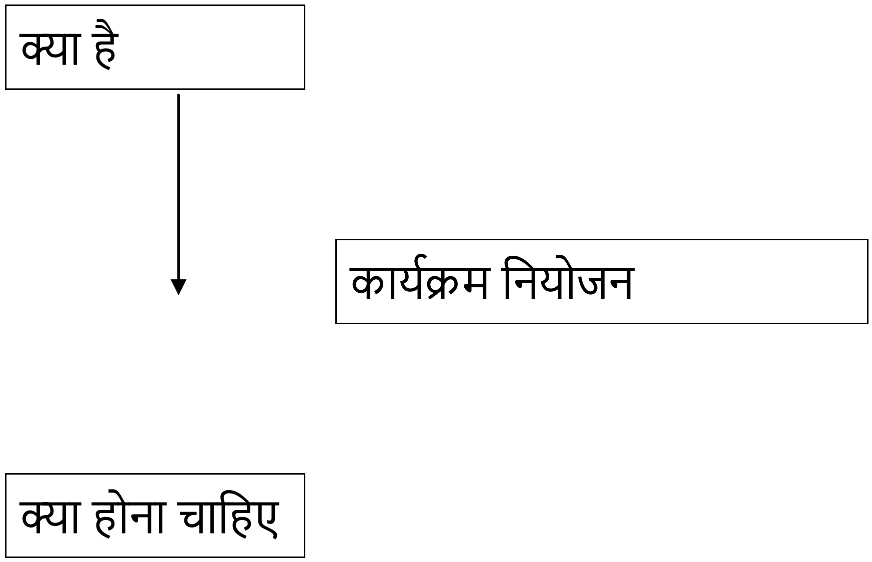

11.4 कार्यक्रम नियोजन के सिद्धान्त

कार्यक्रम नियोजन करते समय कुछ सिद्धान्तों का प्रतिपादन करना आवश्यक हो जाता है। क्योंकि सिद्धान्त ही नीतियों को स्पष्ट करते हैं और कार्य समपादन को परिनियोजित करते है। अर्थात् सिद्धान्त मार्गदर्शन का काम करते हैं जिस पर सम्पूर्ण कार्यक्रम आधारित रहता है। समस्त क्रियाकलापों को निर्देशित करने, उन्हें सही ढंग से चलाने तथा उन्हें नियंत्रित करने में सैद्धान्तिक रूप से तय की गई नीतियां ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। डॉ. रजनी सिंह ने सिद्धान्त को परिभाषित करते हुए लिखा है - “A Principle is a statement of policy to guide action.”

प्रसार कार्यक्रम नियोजन के प्रमुख सिद्धान्त निम्नानुसार है -

1. अनुभव आवश्यकताओं एवं रूचियों का सिद्धान्त - कार्यक्रम बनाते समय लोगों की अनुभूत आवश्यकताओं, वातावरण तथा अभिरूचियों को ध्यान में रखना आवश्यक है। इसके साथ ही उनकी आर्थिक सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक , राजनैतिक जीवन तथा वहां

की जलवायु एवं परिस्थितियों को भी ध्यान में रखना आवश्यक है। इसका ध्यान रखे बिना यदि कोई कार्यक्रम नियोजन भी किये जाएं तो वे कदापि सफल नहीं होगे। उदाहरणार्थ - यदि मछुआरों के लिये मत्सस्य पालन कार्यक्रम का नियोजन किया जाना है तो पहले वहां की जलवायु, नदी, तालाब, पोखर बांध आदि की व्यवस्था देखनी होगी। जहां बरसात होगी, प्राकृतिक रूप से जलाशय होंगे वहीं पर मत्स्य पालन का कार्यक्रम सफल होगा। यह कार्यक्रम बंगाल, बिहार तथा उत्तरप्रदेश जैसे राज्यों के कुछ स्थानों पर तो संभव है परन्तु मत्स्य पालन का कार्यक्रम यदि राजस्थान के जैसलमेर, बाडमेर, नागौर आदि स्थानों पर आयोजित किये जाएं तो वे व्यर्थ हो जाएंगे। क्योंकि वहां जलाशय, तालाब, पोखर, नदी, बांध आदि का सख्त अभाव है। वहां पानी लाने के लिए लोगों को दूर दूर से जाकर सिर पर मटका रखकर पानी ढोना पड़ता है। ऐसी स्थति में मत्स्य पालन का कार्य कदापि सफल नहीं होगा। यहां तो पशुपालन मूंग व बाजरे की खेती, जीरे की खेती आदि से संबंधित कार्यक्रम नियोजन किये जाएं तो वे अधिक सफल होंगे। क्योंकि ये फसलें यहां की जलवायु एवं मिट्टी के लिए सर्वथा उपयुक्त हैं।

2. स्पष्ट उद्देश्य का सिद्धान्त -कार्यक्रम नियोजन स्पष्ट उद्देश्य के सिद्धान्त पर आधारित होना चाहिए। कार्यक्रम नियोजन किसलिए, क्यों, कब, कहां, कैसे किये जाने चाहिए, यह स्पष्ट होना चाहिए। बिना उद्देश्य के किये गये कार्य उस भूले भटकें राही की तरह होते हैं जिन्हें मंजिल नहीं मिलती, यद्यपि वह रास्ता तो तय करता ही है। क्योंकि जब तब उद्देश्य स्पष्ट नहीं होगा तब तक लोगों को न तो कार्यक्रम की जानकारी हो पाएगी और न ही उन्हें उसका लाभ ही मिलेगा। उद्देश्य जान लेने के बाद लोगों की सहभागिता हो जाती है तथा कार्यक्रम को सफल बनाने के लिये वे जी जान से जुड़ जाते हैं।समय परिवर्तनशील है । अत: बदलते समय में, समय की मांग के अनुसार उद्देश्यों में परिवर्तन किया जाना भी आवश्यक है। अन्यथा वे सफल नहीं होगे।

3. वांछित लक्ष्य तक पहुंचने का सिद्धान्त -कार्यक्रम नियोजन यदि केवल कागजों में ही किये जाएं तो लोगों को इसका लाभ नहीं मिलेगा। इसलिए कार्यक्रम नियोजित करते समय उद्देश्य के साथ लक्ष्य को भी निर्धारित करना जरूरी है। लक्ष्य प्राप्ति के लिए सदैव प्रयत्नशील रहना चाएि। उदाहणार्थ - यदि गांवों को सड़क से जोडना है तो इसके लिए कागजों पर सड़क का बना लेना ही काफी नहीं है बल्कि इसके लिए सड़क निर्माण करना जरूरी है, अन्यथा सड़क निर्माण का लक्ष्य पूरा नहीं हो सकेगा औ न ही उसका लाभ ग्रामीणों को मिल पाएगा।

4. निरपेक्षता तथा तटस्थता का सिद्धान्त -प्रसार कार्यक्रम निरपेक्षता तथा तटस्थता के सिद्धान्त पर आधारित होनी चाहिए। जो भी कार्यक्रम नियोजित किये जाएं वे सभी जाति, धर्म, वर्ग, दल, एवं संगठन के लिए उपयोगी हो। यदि किसी विशेष जाति, धर्म, वर्ग या दल के लोगों के लिये कार्यक्रम नियोजित किये जाएंगे तो वे कदापिक सफल नहीं होंगे। इसके ठीक विपरित लोगों में द्वेष, वैर, भाव, इर्ष्या मनमुटाव उपजेगा तो किसी भी समाज, राज्य एवं राष्ट्र के लिये हानिकारक है।

5. समन्वय का सिद्धान्त -प्रसार कार्यक्रम नियोजन समन्वय के सिद्धान्त पर आधारित है। कहा भी जाता है - अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ता कोई कार्यक्रम यदि वृहत् स्तर पर तैयार किये जाते हैं तो उसके लिये विभिन्न संगठनों संस्थाओं, अधिकारियों, प्रसार कार्यकर्ताओं तथा स्थानीय लोगों के सहयोग की आवश्यकता होती है। यहां तक कि यदि परिवार में भी किसी की शादी या सगाई समारोह का आयोजन किया जाना है तब भी विभिन्न लोगों के सहयोग की आवश्यकता होती है। अकेला व्यक्ति या परिवार उस कार्य को नहीं कर सकता। इसी प्रकार महानरेगा या ग्रामीण रोजगार योजना को चलाने के लिए विभिन्न स्तर पर विभिन्न लोगों के सहयोग की जरूरत होती है। जैसे - सुपरवाइजर की , कलक्टर की, मजदूरों की आदि। इन सभी के सहयोग से ही कार्यक्रम को सफल बनाये जा सकते हैं। अत: स्पष्ट है कि कार्यक्रम नियोजित करते समय सभी पक्षों को ध्यान में

रखकर, सभी लोगों के विचार विमर्श से, सभी में समन्वय स्थापित करने के पश्चात ही कार्यक्रम का क्रियान्वयन किया जाना चाहिए।

6. राष्ट्रीय नीतियों और कार्यक्रम के अनुसरण का सिद्धान्त -

राष्ट्र तथा राज्य स्तर पर लोगों के विकास हेतु अनेकानेक योजनाएं चलायी जाती हैं तथा राष्ट्रीय नीतियां निर्धारित की जाती है। मुख्य रूप से ये योजनां ग्रामीण उद्योग धंधों, मातृ शिशु कल्याण, साक्षरता, स्वास्थ्य शिक्षा, स्वच्छता एवं कचरा प्रबंधन, पोलियों उन्मूलन, पर्यावरण, वन लगाओ, शुद्ध पेयजल व्यवस्था सड़क निर्माण, संक्रामक रोगों के बचाव, मलेरिया उन्मूलन, बेटी बचाव आदि से संबंधित होते हैं। उपरोक्त कार्यक्रमों को नियोजित करते समय राष्ट्रीय नीतियों तथा कार्यक्रमों के अनुसरण के सिद्धान्त का पालन करना चाहिए। इससे ग्रामीणों को देश में हो रहे प्रगति के बारे में जानकारी मिलती है तथा वे विकास के पथ पर अग्रसर होते हुए देश के मुख्य धारा से आकर जुड जाते हैं। उन्हें यह पता चल जाता है मातृ शिशु कल्याण के लिये कौन कौन सी योजनाएं चलायी जाती है। उससे उन्हें क्या लाभ मिलेगा। रोजगार के लिए ऋण कहां से प्राप्त हो सकेंगे। खाद, कृषि यंत्र बीज आदि के लिए सब्सीडी कितना है तथा वे इसे कहां से प्राप्त कर सकेंगे। उद्योग स्थापित करने के लिए सरकार क्या क्या छूट दे रही है। आदि समस्त बातों की उन्हें जानकारी प्राप्त हो जाती है।

7. समता का सिद्धान्त -प्रसार कार्यक्रम समता के सिद्धान्त पर आधारित है। अत: कार्यक्रम नियोजित करते समय इस सिद्धान्त की अनुपालना की जानी चाहिए। कार्यक्रम कब, कहां, कैसे, किसके द्वारा किन माध्यमों से आयोजित किया जाना है। इन सब बातों की विस्तृत जानकारी ग्रामीणों को होनी चाहिए। कार्यक्रम में कितना पैसा व्यय होगा, पैसे इंतजाम कहां से किया जाएगा। यदि पैसा घट जाएगा तो उसका इंतजाम कहां से किया जाएगा। यदि अनेकानेक बातों की सम्पूर्ण जानकारी ग्रामीणों को होनी चाहिए। कहीं भी किसी भी स्थान पर, किसी से भी दुराव छिपाव नहीं होना चाहिए। कार्यक्रम लिखित रूपों से स्पष्ट तथा कांच की तरह साफ स्वच्छ होना चाहिए, जहां तिल

भर भी संदेह की कोई गुंजाइश नहीं रहे। भारत विविधता में एकता का देश है। यहां विभिन्न जाति, धर्म, वर्ग, संगठन के लोग रहते हैं जिनकी संस्कृतियं, विचारधाराएं, खान पान की आदतें, रीति रिवाज, मान्यताएं, परम्पराएं, तीज त्यौहार आदि भिन्न भिन्न होते हैं। फिर भी सभी लोग मिल जुलकर रहते है। हमारे संविधान में भी सभी का समानता का अधिकार दिया गया है तथा सभी को मौलिक सुविधाएं उपलब्ध करने के लिये वचनबद्ध है। अत: कार्यक्रम नियोजन इस तरह से किया जाना चाहिए जो सभी जाति, धर्म, समुदाय के लिए लाभदायी हो तथा सभी को उसका लाभ मिले।

8. सरलता एवं पारदर्शिता का सिद्धान्त -कार्यक्रम नियोजन का सुस्पष्ट उद्देश्य होता है तथा लोगों को वांछित लक्ष्य तक पहुंचने में मदद करता है। परन्तु यह तभी संभव है जब कार्यक्रम सरल होने के साथ साथ पारदर्शिता बरती जाती है तथा लोगों में कार्यक्रम के प्रति विश्वास उपजता है। वे उसमें बढ चढकर भाग लेते है।

9. तकनीकी विकास का सिद्धान्त -कार्यक्रम नियोजन तकनीकी विकास के सिद्धान्त पर आधारित होना चाहिए। कल तक जो तकनीक काम में लिये जाते थे वे ही आज पुराने पड़ जाते हैं। उदाहरणार्थ - पहले किसान खती करने के लिए हल बैंलों का उपयोग करते थे जिसमें अधिक समय व उर्जा व्यतीत होता था। दिन भर में एक किसान मात्र दो बीघा, चार बीघा जमीन ही जोत पाते थे। परन्तु टेक्ट्रर के विकास के साथ ही खेत जोतना आसान हो गया। आज किसान एक ट्रेक्टर के विकास के साथ ही खेत जोतना आसान हो गया। आज किसान एक ट्रेक्टर की सहायता से पूरे दिन में 50-60 बीघा जमीन जोत लेता है। अत: कार्य का सरलीकरण हो गया। इसी प्रकार थ्रेसर की सहायता से गेहूं, चना, जौ, मूंग आदि के दाने को अल्प समय में ही इसके भूसों से अलग किया जाता है जबकि उन्हें अलग करने के लिये पारंपरिक तरीकों का उपयोग किया जाए तो महीनों लग जाते हैं तथ उससे प्राप्त चारा भी उतना नही रहता है। दानों मे भी छिलके रह जाते हैं, जिन्हें फटक कर अलग करना पडता है। इसी प्रकार आज मिलों के प्रयोग से

आटा पीसना, धान कूटना, मसाला पीसना, कपड़े बुनना आदि आसान हो गया है। यदि आज भी कृषक उन्हीं परम्परागत विधियों से कृषि कार्य करेंगे, तो निश्चित ही कम लाभ होगा। इसी प्रकार यदि गृहिणी हाथ से, सुई धागे से सिलाई कार्य करेगी तो अधिक समय व शक्ति व्यय होगा। परन्तु विद्युत से चलायी जाने वाली सिलाई मशीन से यदि सिलाई कार्य किये जाये तो कम समय में अधिक कपउे सिले जा सकेंगे तथा गृहिणी का कम थाकन होगी व अधिक लाभ होगा। अत: समय एवं शक्ति जैसे महत्वपूर्ण संसाधन का बचत होगी। अत: स्पष्ट है कि कार्यक्रम नियोजित करते समय तकनीकी पक्ष पर भी ध्यान देना चाहिए। आज कम्प्यूटर, इन्टरनेट, मोबाइल, फैक्स, ईमेल का जमाना है जिन्हें ये चीजें नहीं आती है वे विकास की दौड मं पीछे रह जाते है।

10. स्थानीय बोली एवं भाषा का सिद्धान्त -कृषि वैज्ञानिकों, अनुसंधानकार्ताओं तथा प्रसार विशेषज्ञों द्वारा जो अनुसंधान, तकनीक अथवा तथ्य निर्मित किये जाते हैं वे अंग्रेजी या हिन्दी में होते है, जिन्हें स्थानीय भाषा में बदलना आवश्य प्रतीत होता है ताकि लोगों के लिए उपयोगी सिद्ध हो सके। कार्यक्रम नियोजित लिखित एवं लिपिबद्ध होता है। इन्हें लिपिबद्ध करते समय स्थानीय भाषा एवं बोली का प्रयोग करना चाहिए ताकि कार्यक्रम की समस्त जानकारी ग्रामीणों को हो सके। अनपढ ग्रामीण भी उसे किसी अन्य से पढवा कर उसकी जानकारी प्राप्त कर सकता है तथा कार्यक्रम में भाग ले सकता है। इसके ठीक विपरित यदि कार्यक्रम नियोजन अंग्रेजी में किये जाएंगे तब ग्रामीणों द्वारा समझ पाना मुश्किल होगा । परिणामत: उनकी सहभागिता एवं रूचि कार्यक्रम के प्रति कम ही रहेगी।

11.संयुक्त भागीदारी का सिद्धान्त -प्रसार कार्यक्रम में स्थानीय नेताओं के साथ ही कृषि वेज्ञानिकों, पशु चिकित्सकों, विषय वस्तु विशेषज्ञों, प्रसार अधिकारियों, प्रसार कार्यकर्ताओं, फसल वैज्ञानिकों, गृह विज्ञाननिकों पौधे रोग विज्ञाननिकें आदि की संयुक्त भागीदारी होनी चाहिए। इनकी भागीदारी होगी तो उन्हें कार्यक्रम सफल नहीं हो सकेंगे। इसके ठीक विपरीत यदि सभी की संयुक्त भागीदारी होगी तो

उन्हें कार्यक्रम अपना लगेगा और वे उसकी सफलता के लिए पूरे तन मन से जुड जाएंगे। जब कार्य को पूर्ण लगन, सत्य, निष एवं ईमानदारी से किया जाए तो निश्चित ही कार्यक्रम सफल होंगे।

12. सम्पूर्ण समुदाय के हित का सिद्धान्त -कार्यक्रम नियोजन सम्पूर्ण समुदाय के हित के सिद्धान्त पर आधारित होना चाहिए। चाहे कोई भी कार्यक्रम नियोजित किये जाएं उसमें सभी के हितों व लाभों को ध्यान में रखा जाए। कार्यक्रम ऐसा नहीं हो जिससे किसी विशेष जाति, धर्म, वर्ग या समुदाय के लोगों को ही लाभ पहुंचे, शेष लोग वंचित रह जाएं। ऐसा कार्यक्रम किसी भी कीमत पर सफल नहीं होगा। अत: कार्यक्रम नियोजन करते समय सभी लोगों के हितों का ध्यान रखना जरूरी है।

13.लचीलापन का सिद्धान्त - कार्यक्रम नियोजन करते समय लचीलापन के सिद्धान्त को ध्यान में रखना जरूरी है। कई बार ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न हो जाती है। जिसके कारण कार्यक्रम में हेर फेर करना आवश्यक हो जाता है। यदि कार्यक्रम पूरी दृढता से साथ बनाये जाएंगे जिसमें, समय परिस्थितियां एवं साधन के अनुसार परिवर्तन लाने की कुछ भी गुंजाइश नहीं होगी, तो कार्यक्रम के असफल होने की संभावना बढ जाती है। कई बार नियमों, सूत्रों तथा कार्यशैली का अक्षरश: पालन करना कार्य में बाधा उत्पन्न करता है। यदि थोडे से समय , संसाधन अथवा धन के व्यय से कार्यक्रम में हेर फेर करना पडे तो उसे अवश्य ही करना चाहिए।

14. सतत विकास का सिद्धान्त - प्रसार कार्यक्रम का पहला एवं प्रमुख उद्देश्य है।लोगों के जीवन स्तर एवं रहन सहन के स्तर को ऊँचा उठाना। मानव का सतत एवं निरंतर विकास करना ही कार्यक्रम नियोजन का उद्देश्य एवं लक्ष्य होता है। अत: कार्यक्रम नियोजन विकासोन्मुखी होनी चाहिए। इससे लोगों को सीखने का अवसर मिलना चाहिए।

15. उपलब्धता का सिद्धान्त -कार्यक्रम नियोजन उपलब्धता के सिद्धान्त पर आधारित होना चाएि। ऐसा नहीं हो कि कार्यक्रम चलाये तो जा रहे है, परन्तु उससे कोई उपलब्धि हासिल नहीं हो रही है। नौ दिन चले अढाई कोस वाली स्थिति नहीं होनी चाहिए। जब कोई व्यक्ति या संस्था उत्कृष्ट कार्य करता है तब अवश्य ही उसे पुरष्कृत एवं सम्मानित किया जाता है। इससे उसका मनोबल बढता है तथा वे और भी अधिक मेहनत व लगन से कार्य करते है। उन्हें देखकर दूसरे लोग भी कार्य के प्रति उत्साहित होतेहै। उनका प्रसार कार्यक्रमों के प्रति विश्वास बढ़ने के साथ ही नवीन तकनीकों के प्रति रूचि बढती है।

16. क्रियात्मकता एवं व्यावहारिकता का सिद्धान्त -कार्यकम नियोजन करते समय इसकी क्रियात्मकता एवं व्यावहारिकता के पक्ष पर अमल करना आवश्यक है। जो सभी को नियोजन सैद्धान्तिक होंगे तो कम लोगों को ही भागीदारी रहेगी तथा इससे कुछ खास लोगों को ही लाभ मिलेगा, शेष लोग कार्यक्रम से वंचित रह जाएंगे। अत: कार्यक्रम रोजगारोन्मुखी होना चाहिए, जिससे ग्रामीण पुरूषों एवं स्त्रियों को ला हो सके। वे घर बैठे आय कमा सकें। जैसे - फल एवं सब्जी का संरक्षण करना, सिलाइ बुनाई करना, मंगोडी बडी बनाना, मोमबती बनाना, साबुन बनाना, पापड बनाना , रस्सियां बांटना, जेम, जैल, अचार मुरब्बा बनाना मसाना पिसना आदि ग्रामीणों द्वारा तैयार सामग्र को बाजार में बेचने की व्यवस्था भी प्रचार अधिकारियों द्वारा की जानी चाहिए, ताकि वे अपनी उत्पाद को बेचकर लाभ कमा सकें।

17. जड़ से प्रारंभ करने का सिद्धान्त -यह कहावत नहीं अपितु सच है कि यदि भ्रष्टाचार रोकना हो तो उपर से रोंके तथा विकास करना हो तो जड से प्रारंभ करें। जड से प्रारंभ करने का तात्पर्य है, गरीब, विपन्न, साधनहीन, निरक्षर, वंचित ग्रामीण लोगों के लिये योजनाएं तैयार करना तथा उसे पूरे दिल से ईमानदारी व लगन से क्रियान्वित करना। जब विपन्न गरीब व वंचित लोग चाहे वे किसी भी धर्म, जाति, लिंग, वर्ग, या समुदाय के हो, उनके लिए योजनाएं चलायी जाएंगी, उन्हें सीखने के अवसर प्रदान किये जाएंगे तो निश्चित ही उन्हें लाभ मिलेगा। परिणामत:

उनका रहन सहन का स्तर ऊँचा उठेगा। उनके ज्ञान, कौशन, अभिवृति में परिवर्तन होगा। फलत: वे सुखमय जीवन व्यतीत करेंगे।

18. स्थानीय नेतृत्व का सिद्धान्त - कोई भी कार्यक्रम चाहे कितना ही अच्छा, लाभदायी एवं उपयोगी क्यों नहीं हो, जब तक स्थानीय नेताओं की भागीदारी नहीं होगी तब तक वह सफल हो ही नहीं सकता। ग्रामीण लोग अपने नेता को ही बात मानते है। यदि उनका नेता किसी कार्यक्रम में भाग लेने से मना कर देता है तब प्रसार कार्यकर्ता एवं प्रसार अधिकारी चाहे जितना अधिक जोर क्यों न लगा लें, वे उनकी बात को न तो सुनेगे और न ही मानेंगे। वे अधिकारी कार्यक्रम स्थल तक पहुंचेगे ही नहीं। वे कार्यक्रम में भाग नहीं लेगे, परिणामस्वरूप कार्यक्रम असफल हो जाएगा। इसलिये कार्यक्रम नियोजन करते समय यह आवश्यक है कि स्थानीय नेता का सहयोग लिया जाए। स्थानीय नेता ग्रामीणों की रूचि, आवश्यकता एवं मनोवृति को अच्छी तरह से समझते हैं। वे उनके मनोविज्ञान से भी भांति परिचित रहते हैं। अत: वे ग्रामीणों की रूचि एवं आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर कार्यक्रम नियोजन में सलाह एवं सुझाव देते हैं। ग्रामीणों को कार्यक्रम में भाग लेने के लिए प्रेरित करते हैं। इससे होने वाले लाभ के बारे में उन्हें बताते हैं। अत: प्रसार कार्यकर्ता को कार्यक्रम नियोजन करते समय स्थानीय नेतृत्व के सिद्धान्त को सदैव ही स्मरण रखना चाहिए। कार्यक्रम की सफलता के लिए आयोजन का भार उनके हाथों में सोपना चाहिए।

19. सूचना तकनीक के अनुसरण का सिद्धान्त - आज सूचना तंत्र का जमाना है। जो लोग सूचना तंत्र का उपयोग नहीं करते हैं वे आज के संघर्षमय जीवन में पिछड जाते है। आज सूचनाएं, बुलेटिन, पम्फलेट, फोल्डर जहां शिक्षितों के लिये महत्वपूर्ण है। वहीं दृश्य - श्रव्य सामग्री अशिक्षितों एवं शिक्षितों के लिये समान रूप से उपयोगी हैं। आज के जमाने में ई मेल, इन्टरनेट, टेलीफोन, सैटेलाइट, व अत्यन्त समय में ढेर सारी सूचनाएं प्राप्त हो जाती है। जिस विषय में सूचनाएं चाहिए वे सभी इन्टरनेट पर उपलब्ध रहती है। यहां तक कि विभिन्न देश के समाचार पत्र भी इन्टरनेट पर पढ़े जा सकते हैं। आज के जमाने में उन्हें

इन आधुनिकतम तकनीकों का ज्ञान नहीं है वे विकास के दौड में पिछड जाते हैं। अत: कार्यक्रम नियोजन करते समय सूचना तकनीक के अनुसरण के सिद्धान्त को स्मरण रखना चाहिये। रेडियो एवं दूरदर्शन टीवी का प्रयोग तो ग्रामीणों के विकास को ही ध्यान में रखकर किया गया है। इनसे ग्रामीणों को विभिन्न विषयों जैसे खेती बाडी, स्वास्थ्य सुरक्षा, मौसमी बीमारियों कार्यक्रम प्रसारित किये जाते है। आजकल इन्टरनेट, मोबाइल, ईमेल से न केवल सूचनाएं प्राप्त की जाती है, अपितु जिज्ञासाओं को भी शांत किया जाता है तथा समस्याओं का समाधान भी किया जाता है। इसलिये कार्यक्रम नियोजन करते समय इन तकनीकों का उपयोग करना आना चाहिए।

20. मूल्यांकन का सिद्धान्त -कार्यक्रम नियोजन मूल्यांकन के सिद्धानत पर आधारित होना चाहिए। पूर्व में कौन कौ से कार्यक्रम नियोजित किये गये हैं, उनका क्या परिणाम रहा है? कितने लोगों को लाभ हुआ है। कितने लोग लाभ लेने से वंचित रह गये है? कार्यक्रम नियोजित करते समय कौन कौन सी परेशानियां आई हैं, उन सभी का लिखित में वर्णन रहता है। जिसे अगामी कार्यक्रम नियोजन करते समय ध्यान में रखा जाता है। यदि पूर्व में काई व्यवधान उत्पन्न हुआ है अथवा बाधक तत्व रहे हैं तो उनका निस्तारण कैसे किया जा सकता है, परेशानियां कैसे व किस प्रकार दूर की जा सकती है आदि बातों की जानकारी मिल जाती है। परन्तु यह सब तभी संभव है जब कार्यक्रम नियोजन मूल्यांकन के सिद्धान्त पर आधारित होगे। इसका प्रत्येक चरण स्पष्ट एवं लिपिबद्ध होगा तभी यह पता चल पाएगा कि कार्यक्रम योजनानुसार सही ढंग से चल रहा है या नहीं। आय-व्यय की क्या स्थिति है। कार्यक्रम क्रियान्वयन में क्या परेशानियां हो रही है? लोगों की सहभागिता कितनी है। आधुनिक तकनीकों का प्रयोग किया जा रहा है या नहीं, आदि बातों का मूल्यांकन किया जाना जरूरी है।

21. शिक्षा का सिद्धान्त -कार्यक्रम नियोजन शिक्षा के सिद्धान्त पर आधारित होना चाहिए। शिक्षा के बिना तो मनुष्य का सम्पूर्ण विकास ही नहीं होता। शिक्षा से ही मनुष्य का सम्पूर्ण विकास होता है। शिक्षा से ही

मनुष्य विवेकशील प्राणी का विकास होता है। उसमें सोचने समझने, तर्क करने, निर्णय लेने, विचार करने, स्मरण रखने की शक्ति का विकास होता है। भला बुरा समझने की शक्ति शिक्षा से ही आती है। फलत: एक प्रगतिशील समुदाय व समाज का निर्माण होता है। देश प्रगति के पथ पर अग्रसर होता है।

22. विस्तृत वर्णन का सिद्धान्त -प्रसार कार्यक्रम लिखित में लिपिबद्ध होना चाहिए, जिसमें प्रत्येक चरण का विस्तार से वर्णन हो। वह स्पष्ट होना चाहिए कि कार्यक्रम कब, किस दिन, किस माह, किस समय में, कहां पर, किसके द्वारा, किस तरह, किन तकनीकों की सहायता से किस गांव, शहर या कस्बा में किन लोगों के लिए आयोजित किया जाएगा कार्यक्रम कितने दिनों/महिनों का होगा। इसमें आर्थिक जोखा किसके पास रहेगा। कौन कौन से लोग प्रशिक्षण देगे। अत: इन सभी के लिये एक निश्चित कार्य योजना तैयार करना चाहिए। कोई भी व्यक्ति जब एक निश्चित कार्य योजना तैयार करता है और वह उसी के अनुरूप कार्य करता है तो इसमें कोई संशय नहीं कि वह सफल नहीं होगा। उसका हरेक निर्णय सही होगा। वह समय से कार्य सम्पादित कर लेगा। सफलता उसके चरण चूमेगी। वह विकास की सीढियों को चढता हुआ सम्पूर्ण विश्व में अपनी विजय पताका फहरा लेगा।

23.उचित समय का सिद्धान्त -प्रसार कार्यक्रम एक निश्चित समय के लिए नियोजित किये जाने चाहिए जिसमें अल्पविधि तथा दीर्घविधि दोनों ही प्रकार के कार्यक्रमों का समावेश होना चाहिए। बहुत ही अल्प समय के लिए कार्यक्रम नियोजित होगा तो उसके अच्छे परिणाम होंगे और यदि बहुत लम्बे समय के लिये कार्यक्रम आयोजित किये जाएंगे तो लोग उकता जाएंगे। उनका धैर्य का बांध टूट जाएगा। वे कार्यक्रम के प्रति उदासीन हो जाएंगे तथा उनकी सहभागिता धीरे धीरे कम होती चली जाएगी। इसलिये कार्यक्रम नियोजन उपयुक्त समय के लिए तैयार की जानी चाहिए जैसा कि पंचवर्षीय योजनाएं बनायी जाती हैं।

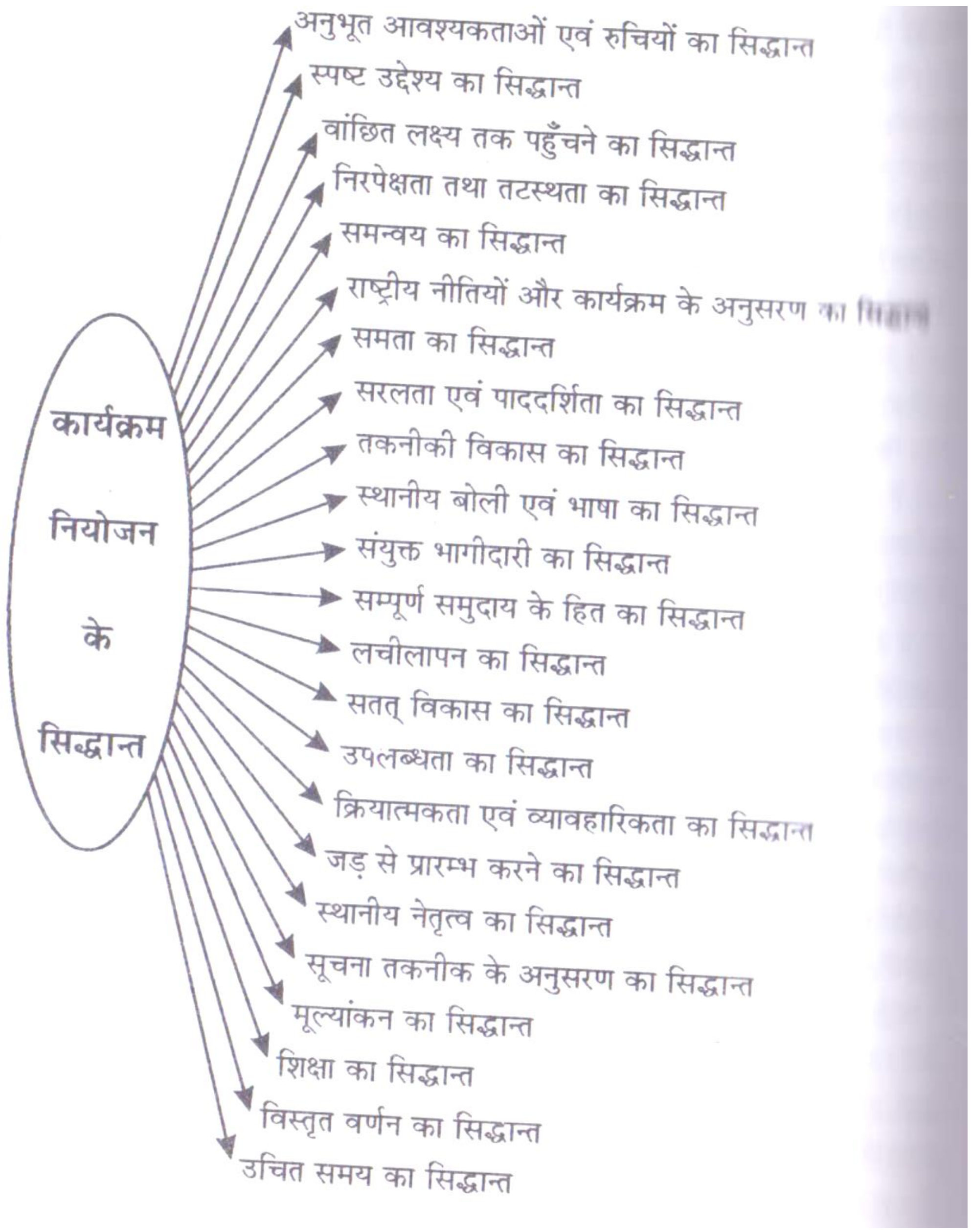

11.5 प्रसार में कार्यक्रम नियोजन का महत्व

भारत जैसे विकासशील देश के लिए कार्यक्रम नियोजन का सर्वाधिक महत्व है, जबकि यहां सीमित साधन एवं धन में अधिकाधिक लाभ प्राप्त करना है। कार्यक्रम नियोजन तो हरेक स्तर पर होना चाहिए चाहे वे गांव के कार्यक्रम हो, शहर या महानगर के कार्यक्रम हो, राष्ट्र के हो अथवा सम्पूर्ण विश्व के लिए। यहां तक कि घर के छोटे मोटे उत्सव की सफलता के लिए भी कार्यक्रम नियोजन आवश्यह है। तभी वांछित

सफलता मिल सकती है। प्रसार कार्यक्रम विशेषकर ग्रामीणों के विकास के लिए बनाया जाता है। जिससे उसकी स्थिति को बेहतर बनाया जा सके। वे आज किस दशा में रह रहे है, उस दशा में बेहतर दशा को प्राप्त करने के लिए नियोजित ढंग से कार्य किया जाना आवश्यक है। प्रसार के क्षेत्र में कार्यक्रम नियोजन का निम्नांकित महत्व है -

प्रसार कार्य स्थानीय नेतृत्व, उपलब्ध स्थानीय संसाधनों, आवश्यकताओं तथा मानवी मूल्यों पर निर्भर करता है। स्थानीय संसाधनों का अधिक से अधिक उपयोग कर प्रसार कार्य किये जाएं, जिससे ग्रामीणों को रोजगार के अवसर प्राप्त हो, जैसे वन प्रदेश में रहने वाले लोगों के लिए वन से संबंधित कार्यक्रम नियोजित किये जाने चाहिए , जैसे लकडी के प्रयोग से सुन्दर सुन्दर फर्नीचर बनाना, वाल हैगिंग बनाना, घरेलू उपयोग हेतु सामग्री बनाना, सजावटी सामग्री बनाना, हैण्डीक्राफ्ट का समान बनाना आदि। जंगली जडी बूटियों से औषधि निर्माण करना। जंगल के फल फूलों से खाद्य सामग्री का निर्माण करना आदि। इस प्रकार लकडी के उपयोग से अधिकतम लाभ मिल सकें, ऐसे कार्यक्रम नियोजित किये जाने चाहिए। इसी प्रकार हरेक क्षेत्र को अपनी अपनी अलग अलग विशिष्टताएं एवं पहचान होती है। उनकी पहचान कर उनसे संबंधित कार्यक्रम नियोजित करने से लाभ मिलता है, जैसे पानी वाले प्रदेश में पानी में उगाये जाने वाले फसलों के बारे में प्रशिक्षण देना, मत्स्य पालन करना, धान की खेती करना आदि।

प्रसार कार्य द्वारा मानव के व्यवहार में वांछित परिवर्तन लाया जाता है। परन्तु यह परिवर्तन सकारात्मक दिशा में होना आवश्यक है। नकारात्मक दिशा में परिवर्तन लाने हेतु कार्यक्रम नियोजित किये जाएं तथा उसी के अनुरूप प्रशिक्षण दिये जाएं। उदाहरणार्थ - यदि बालकों को सेना में भर्ती होने के लिये प्रशिक्षण दिये जाते हैं तो बालकों के व्यवहार में जो परिवर्तन होते हैं वे देश हित में होते हैं। उन्हें देश से प्रेम करना सिखाया जाता है। इसके विपरित यदि बालक को आतंककारी प्रशिक्षण दिये जाएं तो विनाशकारी होगा। ऐसा प्रशिक्षण न तो देश हित

में होगा औरन ही विश्व हित में। आतंकवादी अपने मिशन में कायमाब होने के लिए अनेक निरीह लोगों की हत्याएं करते है। राष्ट्रीय सम्मति को नुकसान पहुंचाते है। परिणामत: संसार में शांति, समृद्धि, तथा सुकाल की स्थापना नहीं हो सकेगी।

प्रसार कार्य निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है। अत: इसे सुचारू रूप से बनाने के लिए कार्यक्रम नियोजित किया जाना आवश्यक है। नियोजित कार्यक्रम करते समय उनका ध्यान रखा जाए। कार्यक्रम का मूल्यांकन भी जरूरी है। ताकि अगामी कार्यक्रम नियोजन करते समय उनका ध्यान रखा जाए। कार्यक्रम के जैसे सकारात्मक बिन्दु रहे है। उनका प्रोत्साहन किया जाए तथा जो नकारात्मक बिन्दु रहे है उनका निस्तारण किया जाए। कार्यक्रम में आने वाली बाधाओं, अडचनों को दूर किया जाए। जो बातें प्रेरणास्पद रही है। उन्हें ध्यान में रखा जाए। अत: स्पष्ट है कि कार्यक्रम नियोजित से कार्यक्रम की सम्पूर्ण जानकारी मिल जाती है तथा मूल्यांकन हो जाता है।

प्रसार कार्य एक शैक्षिक पद्धति है जिसमें व्यक्ति को सैद्धान्ति शिक्षा नहीं, अपितु व्यावहारिक शिक्षा दी जाती है। उन्हें अंग्रेजी, संस्कृत अथवा हिन्दी भाषा का व्याहारिक ज्ञा देकर इस योग्य बनाया जाता है ताकि वे अपने जीवन स्तर तथा रहन सहन के स्तर को ऊँचा कर सकें। वे बेहतर ढंग से जीवन यापन कर सकें। परन्तु यह तभी संभव है जब प्रसार कार्यक्रम को बेहतर ढंग से नियोजन एवं क्रियान्वयन किया जाए।

प्रसार कार्य सहयोगात्मक कार्य है । अकेले चना भाड नहीं फोडता, यह कहावत पूर्णत: चरितार्थ होती दिखाई देती है। प्रचार कार्यक्रम को चलाने के लिए सभी लोगों की सहायता एवं सहयोग की जरूरत होती है। स्थानीय नेता से लेकर तकनीकी प्रशिक्षण प्रसार प्रशासक, प्रशिक्षण सहायक, प्रसार कार्यकर्ता के साथ ही ग्रामीण जनता की सहभागिता का भी आवश्यक होती है। यदि ग्रामीण जनता की सहभागिता नहीं होगी, जिसके लिए कार्यक्रम नियोजित किये जाते है तो कार्यक्रम नियोजन का कोई महत्व नहीं रह जाता।

प्रसार कार्य में धन को आवश्यकता होती है। धन कहां से प्राप्त किये जाएं इसकी जानकारी आवश्यक है क्योंकि धन बिना कार्यक्रम का नियोजन एवं क्रियान्वय नहीं किया जा सकता है।तकनकी सहायता के लिये भी प्रसार कार्यक्रम को तकनीशियन से सम्पर्क स्थापित करता पडता है। परन्तु जब तक प्रसार काय।क्रम का विस्तार से वर्णन हनीं रहता है जब तक न तो उसे कहां से धन प्राप्त हो सकता है और न ही तकनीकी सहायता । अत: यदि कार्यक्रम नियोजन सविस्तार वर्णित हो तो लोगों को समझ बुझाकर धन का इंतजाम करना आसान होता है।

प्रसार कार्य स्वयं करके सीखने के सिद्धान्त पर आधारित है। अत: इससे हरेक व्यक्ति को सीखने का अवसर दिया जाता है, क्योंकि केवल सिखाने से ही काम नहीं चलाता। विधि प्रदर्शन तथा परिणसाम प्रदर्शन द्वारा लोगों को करके सिखाया जाता है तथा देखकर विश्वास करना सिखाया जाता है। मगर यह तभी संभव जब प्रसार कार्यक्रमों का सही ढंग से नियोजन हो। अत: स्पष्ट है कि प्रसार कार्यक्रम लोगों को व्यावहारिक ज्ञान सिखाता है।

प्रसार कार्यकमों को सफल बनाने के लिये मानवीय तथा अमानवीय संसाधनों को आवश्यकता होती है। समय, शक्ति एवं धन जैसे संसाधनों के सही ढंग से उपयोग के लिए कार्यक्रम नियोजित किया जाता है। अत: कार्यक्रम से मानवीय एवं अमानवीय संसाधन कहां से जुटाये जाएंगे, कौन उसमें सहयोग देना आदि बातों की लिखित में जानकारी आवश्यक है, तभी उन्हें वांछित सहयोग मिल पाता है।

प्रसार कार्य जब किसी एक गांव में क्रियान्वित किये जाते हैं तथा प्रसार कार्यकर्ता को यह महसूस हो जाता है जब यहां के लोगों में वांछित परिवर्तन हो चुका है, लक्ष्य प्राप्त हो चुका है तो अगामी कार्यक्रम नियोजन उस गांव में पुन: न करके किसी दूसरे गांव में किया जाता है। इनमें एक एक करके सभी गांवों की प्रगति की जा सकती है। दूर दराज के गांवों में भी प्रचार कार्यक्रम नियोजित किये जाते है।

प्रसार कार्य की सफलता के लिए मनुष्य का स्वयं उसके वातावरण तथा उपलब्ध संस्थाओं एवं संसाधनों का अध्ययन जरूरी है। यह सभी तत्वों के अध्ययन के लिए कार्यक्रम नियोजन ठीक प्रकार से किया जाना चाहिए।

प्रसार कार्यक्रम का एक निश्चित कार्य योजना होता है। इसके अन्तर्गत सभी बातें स्पष्टरूप से लिखी रहती है जिसे पढकर व समझकर कार्य किया जाता है। सभी लोगों को अपने अपने कार्य की जानकारी रहती है ताकि वे अपने अपने कार्यों को जिम्मेदारी पूर्वक बखूबी निभा सकें। यदि कार्यक्रम नियोजन ठीक प्रकार से नहीं होगा तो लोगों को अपने कार्यों की जानकारी ही नहीं प्राप्त हो सकेगी। परिणामत: वे अपने कार्यों को ठीक ढंग से नहीं कर पाएंगे।

11.6 कार्यक्रम प्रोजेक्शन

कार्यक्रम प्रोजेक्शन एक दीर्घकालीन कार्यक्रम नियोजन है। इसके अन्तर्गत सभी प्राप्त सूचनाओं के आधार पर दीर्घकालीन उद्देश्यों का निर्धारण किया जाता है। दीर्घकालीन उद्देश्यों की पूर्ति हेतु लोगों को सहयोग देने तथा भागीदारी निभाने के लिए प्रेरित किया जाता है। दीर्घकालीन लक्ष्यों की पूर्ति, कार्यक्रम प्रोजेक्शन के द्वारा संभव Nieder Frank (1960) है। Programme projection means improved programme planning by looking more broadly, looking more deeply, looking longer, or farther ahead and with the involvement of more people ने इस संदर्भ में लिखा भी है इस प्रकार कार्यक्रम प्रोजेक्शन प्रसार कार्यक्रम नियोजन का ही एक विस्तृत अवधारणा है।

कार्यक्रम प्रोजेक्शन का उद्देश्य

कार्यक्रम प्रोजेक्शन के मुख्य उद्देश्य निम्नानुसार है -

ग्रामीण लोगों की समझ, सोच व विचारधारा में परिवर्तन करने तथा उनमें आपसी सामंजस्य स्थापित करने में मदद करना, ताकि वे विकसित कृषि तकनीकों को अपनाएं तथा पैदावर बढ़ाकर अपना

रहन सहन के स्तर को ऊँचा उठायें। अत: कार्यक्रम प्रोजेक्शन लोगों के रहन सहन के स्तर को ऊँचा उठाने में सहायक होता है।

स्थानीय नेताओं तथा स्थानीय लोगों से मिलकर कार्यक्रम प्रोजेक्शन की योजना तैयार करना। लोगों की रूचियां, आवश्यकताएं तथा उस क्षेत्र की समस्याओं को ध्यान में रखकर कार्यक्रम नियोजित करना। ग्रामीण जनता क्या चाहती है। उनकी आवश्यकताएं क्या है। उनकी रूचियां किन किन में है आदि बातों पर प्रकाश डालते हुए प्रसार कार्यकर्ता को फिर से कार्यक्रम नियोजन करने हेतु निर्देशित करना तथा शिक्षण कार्यक्रामें में प्रसार कार्यकर्ता की मदद करना। (Helping extension workers to reorient and redirect their educational programmes and services and make efforts in the light of what the farm people want.)

कार्यक्रम नियोजन तथा कार्यक्रम प्रोजेक्शन में अंतर

Lawrence (1952) के अनुसार कार्यक्रम नियोजन तथा कार्यक्रम प्रोजेक्शन में निम्नांकित अंतर आते हैं -

कार्यक्रम प्रोजेक्शन एक दीर्घकाल तक चलने वाला कार्यक्रम है जिसका क्षेत्र विस्तृत होता है। यह अधिक स्पष्ट, अधिक पूर्ण तथा अधिक संतुलित पहुंच वाला कार्यक्रम है।

इसमें अधिक से अधिक लोगों को सम्मिलित किया जाता है। उनकी रूचियां भी भिन्न भिन्न होती है। अत: विभिन्न रूचियों वाले लोगों के साथ मिलकर कार्यक्रम नियोजित किया जाता है।

इसमें स्थानीय, राज्य तथा केन्द्रीय स्रोतों से प्राप्त सूचनाओं एवं समस्याओं को ध्यान में रखकर कार्यक्रम को नियोजित किया जाता है।

इससे स्थानीय समस्याओं का अध्ययन एवं विश्लेषण विस्तारपूर्वक किया जाता है। इस प्रकार यह अधिक गहनता से होने वाला कार्यक्रम नियोजन है। ग्रामीण जनता की समस्याओं को सुलझाने, उनकी आवश्यकताओं को पूरा करने, उन्हें लक्ष्यों तक ले जाने में प्रसार कार्यकर्ता को बहुत अधिक परिश्रम करना पडता है। उसे विभिन्न

शैक्षिक विधियों से विभिन्न संस्थाओं से विभिन्न लोगों से समन्वय स्थापित करना पडता है, तथा सभी के सहयोग से कार्यक्रम नियोजित करना पड़ता है। अत: कार्यक्रम प्रोजेक्शन में अधिक परिश्रम की आवश्यकता होती है।

निम्न तालिका में कार्यक्रम प्रोजेक्शन एवं कार्यक्रम नियोजन में अन्तर दर्शाया गया है -

क.सं.	कार्यक्रम प्रोजेक्शन	कार्यक्रम नियोजन
1.	यह अति दीर्घकाल तक चलने वाला कार्यक्रम है। अत: यह अधिक विस्तृत कार्यक्रम **है।**	यह अल्प समय तथा औसत काल तक चलने वाला कार्यक्रम है।
2.	इसमें अधिक से अधिक लोगों को सम्मिलित किया जाता है जो विभिन्न क्षेत्रों से होते हैं तथा जिनकी रूचियां भी भिन्न भिन्न होती है।	इसमें एक या एक से अधिक क्षेत्र के लोगों की सम्मिलित किया जाता है। उनकी रूचियां भी लगभग एक जैसी ही होती है।
3.	लक्ष्य तक पहुंचने के लिये प्रसार कार्यकर्ता को बहुत अधिक श्रम करना पडता है।	लक्ष्य तक पहुंचने के लिए बहुत अधिक श्रम की आवश्यकता नहीं होती है।
4.	स्थानीय राज्य, तथा केन्द्रीय स्रोतों से प्राप्त सूचनाओं एवं समस्याओं को ध्यान में रखकर कार्यक्रम नियोजित किया जाता है।	स्थानीय स्रोतों से प्राप्त सूचनाओं एवं समस्याओं को ध्यान में रखकर कार्यक्रम नियोजित किया जाता है।
5.		इसमें समस्याओं का बहुत अधिक व्याख्या तथा

6.	इसमें समस्याओं को विस्तार से अध्ययन व्याख्या, तथा विश्लेषण करना आवश्यक है।	विश्लेषण करना जरूरी नहीं है।
7.	यह अधिक स्पष्ट, अधिक पूर्ण तथा अधिक पहुंच वाला कार्यक्रमनियोजित है।	यह अल्प समय में पूरा होने वाला कार्यक्रम नियोजन है जिसमें उतनी अधिक स्पष्टता, पूर्णता तथा पहुंच की आवश्यकता नहीं होती।
8.	यह कार्यक्रम 10 वर्ष या इससे भी अधिक समय चलने वाला कार्यक्रम नियोजन है।	यह एक वर्षीय, द्विववर्षीय या पंचववर्षीय कार्यक्रम नियोजन होता है।
	इसमें सभी स्तर से व्यापक रूप से सहयोग प्राप्त करके कार्यक्रम नियोजित किया जाता है। जिसमें अधिक धन व्यय होने की संभावना रहती है।	इससे कम धन व्यय की संभावना रहती है।

11.7 सारांश

कार्यक्रम को नियोजित करना, कार्य संबंधी योजना तैयार करना, लोगों को कार्यक्रम की विस्तृत जानकारी देना तथा समझाना, कार्यक्रम को क्रियान्वित करना, लक्ष्यों को निर्धारित करना, लक्ष्य प्राप्ति के लिए सतत प्रयत्नशील रहना तथा अंत में लोगों की उपलब्धियों परिणामों के बारे में बाताना ये सभी बातें कार्यक्रम नियोजन की सम्पूर्ण प्रक्रिया के अन्तर्गत ही आते हैं।

11.8 अभ्यास प्रश्न

1. कार्यक्रम नियोजन का अर्थ बताइए ?
2. कार्यक्रम नियोजन की परिभाषा बताइए ?
3. कार्यक्रम नियोजन के सिद्धान्त बताइए ?
4. कार्यक्रम नियोजन का महत्व बताइए ?
5. कार्यक्रम प्रोजेक्शन बताइए ?

11.9 संदर्भ ग्रन्थ

1. प्रसार शिक्षा –डा. वंदना जैन , डा पूनम कुमारी
2. प्रसार शिक्षा-डा बी. डी. हरपलानी
3. प्रसार शिक्षा- डा वृंदा सिंह

अध्याय 12

कार्यक्रम

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 प्रसार कार्यकर्ता के कार्य

12.3 प्रसार कार्यकर्ता की भूमिका

12.4 प्रसार कार्यकर्ता के गुण

12.5 प्रसार कार्यकर्ता के कर्तव्य

12.6 सारांश

12.7 प्रश्न

12.8 संदर्भ ग्रन्थ

12.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययनोंपरांत विद्यार्थी -

1. छात्र प्रसार कार्यकर्ता के कार्य और भूमिका के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
2. प्रसार कार्यकर्ता के गुण के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।

3. प्रसार कार्यकर्ता के कर्तव्य के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे
।

12.1 प्रस्तावना

प्रसार एक विकास कार्यक्रम है जिसका क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत होता है। प्रसार कि विभिन्न शाखाएं होती है और विभिन्न व्यक्ति कार्य से संबंधित होते है। वास्तव में प्रसार कार्य की सफलता सभी संबंधित व्यक्तियों के सम्मिलित प्रयास पर निर्भर करती है। व्यापक अर्थ में प्रसार से जुड़े सभी व्यक्तियों को प्रसारकर्ता कहा जाता है। सामान्यत: प्रसार प्रशासन के अन्तर्गत निम्नलिखित प्रमुख रूप से पद स्थापित हैं -

1. प्रसार प्रशासक
2. प्रसार पर्यवेक्षक
3. प्रसार कार्यकर्ता
4. प्रसार विशेषज्ञ

प्रसार कार्यकर्ता की भूमिका का प्रसार कार्य में अत्यन्त महत्व है। प्रसार कार्यकर्ता का कार्य क्षेत्र बहु आयामी होता है तथा उसका प्रत्यक्ष सम्पर्क लोगों से रहता है। प्रसार के अन्तर्गत कार्यकर्ता को अत्यन्त कठिन भूमिका निभानी पडती है। उसे शहरी तथा ग्रामीण दोनों स्थानों पर कार्य करना पडता है। इसके लिये लोगों की मनोवृत्तियों को समझना उनकी समस्याओं को समझना, उन लोगों का विश्वास जीतना उनके लिए उचित योजनाएं बनाना एवं लोगों को उससे जोडना आदि कई आवश्यक बातों को प्रसार कार्यकर्ता को करना पडता है अत: सभी परिस्थितियों में रहते हुए सभी प्रकार के सभी समुदायों और वर्ग के लोगों से समायोजन करने की योग्यता भी उसमें होनी चाहिए।

12.2 प्रसार कार्यकर्ता के कार्य

प्रसार कार्यकम का उद्देश्य ग्रामीण विकास है और यह कार्य प्रसार कार्यकर्ता के प्रयास तथा दूरदर्शिता पर निर्भर है। वास्तव में प्रसार

कार्यकर्ता एक नेता, शिक्षक तथा प्रशिक्षक होता है जो कार्यक्रम के क्रियान्वयन में मध्यस्थ की भूमिका निभाता है। वास्तव में प्रसार कार्य की सफलता प्रसार कार्यकर्ता के परिश्रम एवं प्रयास पर निर्भर करती है जहां प्रसार कार्यकर्ता कुछ कार्य नहीं करते वहां विकास योजना केवल पेपर्स पर रह जाती है और विकास नहीं हो पाता। अत:

प्रसार कार्यकर्ता का कार्य अत्यन्त महत्वपूर्ण तथा उत्तरदायित्वपूर्ण होता है। प्रसार कार्यकर्ता के निम्नलिखित कार्य है

- लोगों के साथ विचार विमर्श द्वारा उनके लाभ हेतु प्रसार कार्यक्रम नियोजित करके और कार्यक्रम की रूपरेखा प्रसार पर्यवेक्षक के सामने रखना तथा कार्यक्रम को क्रियान्वित करवाना।
- लोगों के कार्य स्थल तथा उनके घर पर मिलकर उनसे पारस्परिक संबंधों को सौहाद्रपूर्ण तथा मित्रतापूर्ण बनाना जिससे उनका विश्वास जीतने में सरलता हो।
- मित्रतापूर्वक संबंध एवं लोगों से घनिष्ठता बनाने हेतु उनके सामाजिक तथा धार्मिक क्रिया कलापों में भाग लेना।
- ग्रामीण युवकों को प्रसार कार्यक्रम में सम्मिलित करना जिससे उनकी युवाशक्ति का लाभ उठाया जा सकें।
- वार्तालाप, गोष्ठी, सभा, प्रदर्शन, भ्रमण इत्यादि विभिन्न प्रसार प्रणालियों को आयोजित करके शैक्षणिक गतिविधियों का आयोजन एवं संचालन करना।
- बैंक, जीवन बीमा निगम तथा प्रशासन इत्यादि विविध एजेन्सीज द्वारा प्राप्त सेवाओं तथा योजनाओं की जानकारी से लोगों को अवगत कराना तथा लाभान्वित करना।
- विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन करना जिससे आपस में व्यक्ति मिले जुले और साथ में उनका मनोरंजन भी होता रहे।

- सभी गतिविधियों, कार्यकलापों एवं कार्यक्रमों का लेखा रखना, उनका विवरण तैयार करना और उस संबंधित समाचार को प्रसारित करना।
- प्रशासन को प्रसार कार्यक्रम संबंधी सभी गतिविधियों से अवगत करने तथा नयी योजनाओं के लागू करने के संबंध में सुझाव देना एवं उनको क्रियान्वित करने में प्रशासन की सहायता करना।

12.3 प्रसार कार्य में प्रसार कार्यकर्ता की भूमिका

प्रसार कार्यक्रमों का नियोजन प्रशासन द्वारा किया जाता है। प्रसार योजनाएं ग्रामीण तथा पिछड़े वर्गों हेतु अधिकारी वर्ग आयोजित करते हैं जिनक क्रियान्वयन करने के लिए सरकार द्वारा धनराशि निर्धारित की जाती है। योजना मद में आवंटित राशि के सामंजस्य हेतु प्रसार कार्यकर्ता की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। अधिकाशत: लोग सरकार द्वारा प्रदान की गई योजनाओं तथा उपलब्ध सुविधाओं के बारे में कुछ नहीं जानते । उन्हें ये भी ज्ञान नहीं होता है कि कौनसी सहायता अथवा ऋण उन्हें कहां से प्राप्त हो सकता है। प्राय: यह भी देखा जाता है कि कुछ लोग इन सुविधाओं तथा योजनाओं से परिचित होते है किन्तु यह जानकारी सभी लोगों तक नही पहुंचते देते और एक विशेष वर्ग या कुछ व्यक्ति ही इन योजनाओं अथवा सरकारी सुविधाओं से लाभान्वित होते रहते है। वास्तव में ग्रामीण जनता को सुधारने हेतु यह आवश्यक है कि कोई ऐसा व्यक्ति हो जो उनको सुधारने, उनकी सहायता करने के लिए न केवल उत्सुक हो वरन प्रयत्नशील भी हो। प्रसार कार्यकर्ता ही एक ऐसा व्यक्ति होता है जो पिछडे तथा ग्रामीण जनता की समस्याओं को समझ सकता है तथा उनके निवारण के उपाय भी ढूंढ सकता है। किसी भी व्यक्ति के नवीन विचारधारा से जुड़ने के लिए देश की मुख्य धारा का एक अंग बनने के लिए अपनी समस्याओं से बाहर निकालना आवश्यक होता है। इसके लिए उन्हें मानसिक रूप से भी तैयार करना आवश्यक है जिससे वह नये परिवर्तन अपना सकें। ग्रामीण तथा पिछडे वर्ग की समस्यायें प्राय: उनकी आर्थिक स्थिति और

अज्ञानता से संबंधित होती है। गरीबी दूर करने के लिए बैंकों द्वारा दिये जाने वाले ऋण या सरकारी स्तर पर प्रदत्त अनुदानों की उन्हें जानकारी दिये जाने की आवश्यकता होती है। जानकारी के अतिरिक्त उन रूपयों का उचित उपयोग जिसके लिए नई पद्धतियों तथा सम्पन्न किया जाता है। आधुनिक कृषि यंत्रों का प्रयोग कृषि की उन्नत पद्धतियां, भण्डारण के नये तरीके, लघु उद्योगों के नये तकनीक शिशुपालन के सही ढंग, खाद्य संरक्षण की विधियां, सस्ता व पौष्टिक आहार उपलब्ध कराना, घर का सही रख रखाव आदि बातों के संबंध में लोगों को उपयुक्त जानकारी केवल शब्दों द्वारा ही नहीं वरन प्रदर्शन द्वारा प्रशिक्षण भी प्रसारकर्ता ही प्रदान करता है। प्रशिक्षण हेतु फिल्म, प्रोजेक्टर, पोस्टर, लीफलेट, टीवी, बुलेटिन आदि जन संचार माध्यमों का प्रयोग भी वह करता है। यह कृषि विज्ञान केन्द्रों में आयोजित प्रशिक्षण शिविरों में भी उन्हे ले जाने की व्यवस्था करवाता है। प्रसार केन्द्रों से आवश्यकतानुसार विषय विशेषज्ञों की सेवाओं को उपलब्ध करवाने की व्यवस्था भी प्रसार कार्यकर्ता करते है।

विभिन्न विकास योजनाएं सरकारी सत्र पर बनाई जाती है किन्तु कुछ क्षेत्र ऐसे भी होते है जहां स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप कुछ विशेष प्रकार की योजनाओं की आवश्यकता होती है। प्रसार कार्यकर्ता ग्रामीण लोगों की समस्या तथा स्थानीय आवश्यकताओं को भली भांति समझते है और उसी के अनुसार योजनाओं का प्रस्ताव सरकार को प्रेषित करते हैं और उनके क्रियान्वित में वे महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। इस प्रकार प्रसार कार्यकर्ता प्रशासन एवं ग्रामीणों के मध्य एक कडी की भूमिका निभाता है। प्रसार कार्य के दो विभिन्न पहलू है - प्रसार योजनाओं की सफलता तथा ग्रामीणों की स्थिति में सुधार। इन दोनों के मध्य में होता है प्रसार कार्यकर्ता जो दोनों पक्षों में तारतम्य स्थापित करता है , उन्हें आपस में जोडता है और विकास कार्यक्रमों को उपयुक्त दिशा प्रदान करता है।

12.4 प्रसार कार्यकर्ता के गुण

प्रसार कार्य बहु आयामी होता है जिसके विविध पहलू होते हैं। इसमें कृषि, कुटीर उद्योग, सामुदायिक विकास, आहार नियोजन, गृह प्रबंध, शिशुपालन, साक्षरता आदि सम्मिलित किये जाते हैं। प्रसार कार्यकर्ता का संबंध गांव के सभी वर्गों, क्षेत्र के लोगो से होता है। उसे सभी के साथ मिल जुलकर प्रेमपूर्वक निर्वाह करना होता है।

“It becomes the job of extension worker to understand the incentives of the people with whom he is working. The extension worker should find the personl goal of the learner and his teaching with these goals. Hence two success of the extension work largely rests upon the characters – quality training and skill of these worker.”

प्रसार कार्यकर्ता पद के अन्तर्गत उन सभी व्यक्तियों को सम्मिलित किया जाता है जो प्रसार कार्य में संलग्न हैं। ग्राम स्तरीय कार्यकर्ता, प्रसार अधिकारी, विकास खण्ड अधिकारी अथवा कोई भी प्रसार विशेषज्ञ अथवा गृह वैज्ञानिक प्रसार कार्यकर्ता कहलायेगा। प्रत्येक कार्यकर्ता के कार्य का स्वरूप भिन्न भिन्न रहता है परन्तु लक्ष्य समान रहता है। इन सभी के प्रयत्नों के फलस्वरूप प्रसार कार्यों में सफलता प्राप्त हो सकती है। प्रसार कार्य की सफलता प्रसार कार्यकर्ता के गुणों पर निर्भर करती है। प्रसार कार्यकर्ता की कुछ आवश्यक विशेषताएं इस प्रकार हैं -

- **विषय का सही ज्ञान -** प्रसार कार्यकर्ता लोगों को विषय का नया ज्ञान देकर उनके व्यवहार में परिवर्तन लाता है। प्रसार कार्य का क्षेत्र अत्यन्त विस्तृत तथा व्यापक होता है। इसके अन्तर्गत कृषि विज्ञान, गृह विज्ञान, पशुपालन, मत्स्य पालन, ग्रामीण समाजशास्त्र, आरोग्यशास्त्र, मनोविज्ञान, भूगोल और यांत्रिकी आदि विभिन्न विषय सम्मिलित किये जाते हैं। प्रसार कार्य में सभी विषयों से संबंधित कार्यों की योजना को बनाना और उसे कार्यान्वित करना होता है। प्रसार कार्यकर्ता को सभी विषयों में मूलभूत जानकारी होनी चाहिए। उसे नई सूचनाओं तथा

जानकारियों को भी प्राप्त करते रहना चाहिए और नये ज्ञान में वृद्धि करते रहना आवश्यक है; जिससे वह ग्रामीण जनता को सही दिशा दे सकता है और उनकी जिज्ञासा का निवारण कर उन्हें संतुष्ट कर सकता है उनका विश्वास अर्जित कर सकता है। इस प्रकार जब तक कार्यकर्ता को विषय का सही ज्ञान नहीं होगा तब तक वह कार्य नहीं कर पायेगा।

- **प्रगतिशील विचारधारा -** पुराने विचार तथा रूढिवादिता, अपने दायरे में सीमित रहना व्यक्ति के विकास में बाधक होता है। आगे बढ़ने के लिए यह आवश्यक है कि व्यक्ति उन्नति तथा प्रगति पथ पर अग्रसर हो अत: प्रगतिशील विचारधारा वाले व्यक्ति ऐसा कर सकते हैं जिससे उनकी सामाजिक आर्थिक उन्नति संभव हो सकती है। अत: प्रसार कार्यकर्ता प्रगतिशील विचारधारा अपनाकर ही अपने क्षेत्र में प्रसार द्वारा व्यापक परिवर्तन ला सकता है।
- **ज्ञानार्जन की इच्छा -** लोगों को नई जानकारी प्रदान करने के लिए तथा उन्हें प्रेरित करने के लिए स्वयं ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा और लोगों की समस्याओं को जानने की इच्छा होनी चाहिए। जिससे विभिन्न शोध कार्यों के परिणाम लोगों तक पहुंचाया जा सके तथा उनकी समस्याओं को अनुसंधान केन्द्र तक पहुंचाया जा सके। इसलिए यह कहा जाता है कि प्रसार कार्यकर्ता को अध्यापक ही नहीं, एक विद्यार्थी भी होना चाहिए।
- **ग्राम विकास के प्रति आस्थावान -** प्रसार कार्य का उद्देश्य ही ग्रामीण जनता का विकास है और इस कार्य को वही व्यक्ति मनोयोग से कर सकता है जिसका विकास कार्यों में आस्था है। जिनमें विकास कायों में आस्था नहीं होती, उसके कार्य से उत्साह का अभाव होता है जिससे कार्य सफलतापूर्वक नहीं किया जा सकता है। मन का विश्वास, व्यक्ति की आस्था ही उनका मार्गदर्शन करती है उसे आगे बढ़ाती है उसे सफलता प्रदान

करती है अत: प्रसार कार्यकर्ता को ग्रामीण विकास के प्रति आस्थावान होना भी अत्यन्त आवश्यक है।

- **दूरदर्शिता -** प्रसार कार्य लम्बे समय तक चलने वाला कार्य है इसलिए प्रसारकर्ता में सोचने समझने की क्षमता होनी चाहिए कि किस कार्य का क्या परिणाम होगा और लोगों पर इसका क्या प्रभाव पडेगा। अत: प्रसार कार्य की सफलता के लिए दूरदर्शिता का होना आवश्यक है।
- **कार्य कुशलता -** प्रसार कार्यकर्ता को अपने अनुभवों का लाभ उचित व्यक्तियों तक पहुंचाने हेतु कार्य कुशलता होनी चाहिए। प्रसार कार्यकर्ता को विभिन्न वातावरण, समय तथा काल के अनुसार कार्य करना होता है और सभी लोगों का सहयोग प्राप्त करना होता है जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में आपसी गुटबन्दी के कारण सभी का सहयोग प्राप्त करना कठिन होता है। अत: प्रसार कार्यकर्ता को सफलता प्राप्त करने हेतु समय के अनुसार कार्य करना चाहिये।

उसमें लोगों की समस्या, साधन, उनके अनुभवों को ठीक प्रकार से समझने की क्षमता और लोगों को उन्हीं के अनुसार उन्हीं की भाषा एवं वातावरण में समझाने की क्षमता भी होनी चाहिए क्योंकि यदि वह समस्या, साधन तथा अनुभवों का न समझा सका और उनकी भाषा तथा वातावरण में उसका समाधान न कर सका तो वह लोगों को प्रभावित करने में असफल हो जायेगा तथा लोगों का विश्वास भी प्राप्त नहीं कर सकेगा जिससे प्रसार कार्य में सफलता प्राप्त नहीं हो सकती।

- **नई पद्धतियों तथा तकनीकों में विश्वास -** किसी भी नवीन विचार अथवा कार्य प्रणाली को हम ठोस रूप से किसी दूसरे के समक्ष तभी प्रस्तुत कर सकते हैं जब उस पर हमें पूर्णतया विश्वास हो। बहुत से ऐसे लोग भी होते हैं जो कई बातों को नहीं मानते। उन्हें अपनाना तो दूर बल्कि उसके विषय में जानना भी नहीं

चाहते। प्रसार कार्यकर्ता भी यदि इसी मनोवृत्ति का होता है तो नई जानकारी और तकनीक को ग्रामीण लोगों तक नहीं पहुंचा सकता जिसके अभाव में प्रसास कार्य में सफलता नहीं मिल सकती। नवीन पद्धतियों तथा तकनीकों को विश्वसनीय तरीके से लोगों तक पहुंचाना प्रसारकर्ता का महत्वपूर्ण कार्य है। इनमें विश्वास रखकर वह इस कार्य को कर सकता है।

- **साधन सम्पन्नता -** प्रसार कार्य में सफलता के लिए लोगों का विश्वास प्राप्त करना आवश्यक है जिसके लिए लोगों की अधिक से अधिक आवश्यकताओं की पूर्ति आवश्यक है। अत: अपने पास उपलब्ध सभी साधनों का समुचित प्रयोग करना आवश्यक है जिसे प्रसार कार्य द्रुत गति से आगे बढ़ सकें।
- **स्पष्टवादी -** प्रसार कार्यकर्ता में निर्णय लेने की भावना होनी चाहिए ताकि वह लोगों को सही सलाह दे सके क्योकि अधिकारी गण दूर रहते हैं अत: शीघ्र ही सही निर्णय लेना आवश्यक है जिससे लोग संतुष्ट रहे। विरोधी व्यक्तियों से भी स्पष्टवादिता से निबटना आवश्यक है।
- **सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार -** लोग कार्यकर्ता के प्रति आदर और सम्मान प्रकट करें यह कार्यकर्ता के सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार पर निर्भर करता है। लोगों का विश्वास जीतने के लिये उसे लोगों की कठिनाइयों को सहानुभूतिपूर्ण ढंग से मानना और उनका समाधान करना आना चाहिए प्रसार कार्यकर्ता को सोच समझ कर वही कार्य करने चाहिए जिनकी सफलता की पूर्ण आशा हो।
- **विवेकशील -** गलत कार्य करने की अपेक्षा कार्य न करना अच्छा है अन्यथा लोगों पर उल्टा प्रभाव पडता है और कार्यकर्ता से उनका विश्वास उठ जाता है। अत: कार्यकर्ता को सोच समझ कर वही कार्य करने चाहिए जिसकी सफलता की पूर्ण आशा हो।
- **सेवा भावना -** प्रसार कार्य देश सेवा का कार्य है। उनकी सफलता समाज सेवा के रूप में ही है क्योंकि प्रसार कार्य का न

तो कोई समय होता है और न कोई कार्य निश्चित होता है। यह लोगों की आवश्यकता पर निर्भर करता है। अत: यह कार्य तभी हो सकता है जब कार्य सेवा भावना से किया जाये।

- **ग्रामीण दृष्टिकोण -** प्रसार कार्य सफलतापूर्वक चलाने के लिये यह आवश्यक है कि प्रसार कार्यकर्ता को ग्रामीण परिवेश का पर्याप्त ज्ञान हो । उसे ग्रामीण जीवन की विशेषताओं से परिचित होना आवश्यक है अन्यथा वह न तो लोगों से ठीक तरह सम्पर्क बना सकता है और न लोगों की परेशानियां ठीक प्रकार से समझ सकता है। यदि वह ग्राम का हो तो और भी अच्छा है।
- **ग्रामीण सामाजिक मूल्यों की जानकारी -** प्रसार का कार्य लोगों के सहयोग पर निर्भर करता है इसके लिए लोगों के लिये श्रद्धा केन्द्रों को जानन आवश्यक है। इसका अर्थ है कि कौन सी वस्तु मनुष्य तथा स्थान को लोग महत्व देते हैं। यदि कार्यक्रम श्रद्धा के केन्द्रों को महत्व देने वाला होगा तो निश्चित रूप से लोगों की श्रद्धा बढेगी और उनका अधिक सहयोग प्राप्त होगा।
- **धार्मिक दृष्टिकोण -** लोग धर्म और लोकोत्तर शक्तियों में विश्वास रखने वाले होते हैं। अत: प्रसार कार्यकर्ता को भी धर्म में विश्वास रखने वाला होना चाहिए जिससे लोगों में विरोध उत्पन्न न हो। उसे सभी धर्म में विश्वास रखने वाला होना चाहिए जिससे लोगों में विरोध उत्पन्न न हो। उसे सभी धर्मों का सम्मान करते हुए और मानव धर्म को ध्यान में रखते हुए कार्य करना चाहिए।
- **अपने कार्य के प्रति समर्पित भावना -** कार्य की सफलता काम के प्रति पूर्ण रूपेण समपर्ण द्वारा प्राप्त हो सकती है। कहावत भी है "Work is worship" । कार्य कितना भी कठिन क्यो न हो, मार्ग में कितनी भी बाधाएं क्यों न आएं तथा परिस्थितियां क्यों न प्रतिकूल हो - समर्पित भावना द्वारा किया गया कार्य निश्चित ही सफल होता है। अत: प्रसार कार्यकर्ता को श्रम की गरिमा को

समझते हुए छोटा से छोटा काम करने में पूरी तत्परता बरतनी चाहिए।

- **मार्गदर्शन एवं नेतृत्व -**प्रसारकर्ता प्रसार कार्यक्रम द्वारा जनता तक प्रगति की ज्योति शिखा ले जाने वाला होता है। किस समुदाय अथवा व्यक्ति के लिये कौन सा कार्यक्रम उपयुक्त रहेगा इसका निर्धारण करना एवं कार्यक्रम संबंधी जानकारी लोगों को देना प्रसार कार्यक्रम का कार्य होता है। वह लोगों को नई तकनीक तथा नई पद्धतियों के बारे मे बताने के साथ साथ सरकारी स्तर पर दी जाने वाली सुविधाओं बैंकों द्वारा प्रदत ऋण और अनुदान के विषय में सूचनाएं प्रदान करता है। बेहतर जीवन के लिये लोगों का मार्गदर्शन करा वह सफल नेतृत्व का परिचय देता है।
- **कार्यक्रम नियोजन तथा प्रबंधन -** किसी भी कार्यक्रम की सफलता उसके सुव्यवस्थित नियोजन तथा कुशल प्रबंधन पर निर्भर करती है। प्रसार कार्यक्रमों का नियोजन काफी सीमा तक प्रशासनिक अथवा अधिकाधिक सतर पर होता है किन्तु उसमें भागीदारी प्रसार कार्यकर्ता की भी रहती है। जहां तक प्रबंधन का प्रश्न है तो शत प्रतिशत जिम्मेदारी प्रसार कार्यकर्ता की ही होती है। प्रसार कार्यकर्ता में एक विवेकशील दूरदर्शी नियोजन तथा कुशल प्रबंधक के गुण होने चाहिए जिससे कार्यक्रम में सफलता प्राप्त की जा सके।
- **मूल्यांकन क्षमता -**प्रसार कार्य का एक महत्वपूर्ण पक्ष है - मूल्यांकन सभी कार्यों के मूल्यांकन द्वारा यह ज्ञात किया जाता है कि लक्ष्य क्या था उसे प्राप्त किया जा सका अथवा नहीं कार्यक्रम सफल हुआ अथवा असफल साधनों का प्रयोग किस सीमा तक हो सका। मूल्यांकन करके सफलता अथवा विफलता का ज्ञान होता है। तथा कार्यकर्ता को अपनी सीमा तथा क्षमता का भी आभास होता है। कार्य करने के ढंग से गुण दोषों को परखने का

अवसर प्राप्त होता है। मूल्यांकन के अभाव में कार्य की परख नहीं हो पाती और कई बार व्यक्ति भटक जाता है।

- **कार्यालय संबंधी कार्यों में दक्षता -** प्रसार कार्य हेतु प्रसार कार्यकर्ता को कई प्रकार की लिखित कार्यवाही भी करनी आवश्यक होती है जैसे प्रसार कार्यक्रम संबंधी विवरण तैयार करना, प्रतिवेदन लिखना, कार्य का ब्यौरा लिखना, आंकडे एकत्रित करना और प्रतिशत संकलित करना आदि। कार्यक्रम क्रियान्वयन संबंधी विवरण भी तैयार किये जाते हैं, उदाहरणार्थ लोगों ने नई कृषि पद्धतियों को कितना अपनाया, उर्वरकां का प्रयोग करने वालों की संख्या में कितनी वृद्धि हुई, बैंकों का कितनों ने लाभ प्राप्त किया, महिलाओं की कार्य शैली में कौन कौन से परिवर्तन अये, शिशु पालन तथा शिशु स्वास्थ्य संबंधी कार्यक्रमां से कितने परिवार लाभान्वित हुए। प्रशासन को इस प्रकार की जानकारी प्रसार कार्यकर्ता द्वारा प्राप्त होती है। अत: प्रसार कार्यकर्ता में कार्यालय संबंधी कार्यो तथा कागजी काम काज को करने की क्षमता का होना अनिवार्य होता है।
- **लेखन क्षमता -**प्रसार कार्यक्रम के अन्तर्गत सायक्लोस्टाइल किये हुए लीफलेट, बुलेटिन, लघु समाचार पत्र, और सूचना माध्यम स्थानीय प्रसार कार्यलय द्वारा प्रकाशित किये जाते हैं। इन्हें स्थानीय तथा सरल भाषा में प्रसार कार्यकर्ता को तैयार करना पडता है। साथ ही भाषण, प्रसार गीत, नाटक आदि लिखने की योग्यता भी प्रसार कार्यकर्ता का एक महत्वपूर्ण पक्ष है।
- **दृश्य श्रृव्य माध्यमों की जानकारी -** टी.वी., प्रोजेक्टर, वीडियो केसेट, ग्रामोफोन, स्वर विस्तारक यंत्र, टेप रिकोर्डर जैसे दृश्य श्रव्य, जनसंचार माध्यमों का प्रसार के अन्तर्गत प्रयोग किया जाता है। इनकी कार्यप्रणाली और संचालन संबंधी जानकारी प्रसार कार्यकर्ता को होनी चाहिए जिससे वह इनका उपयोग कर सके और लोगों को शिक्षित कर सके। यह एक प्रभावशाली

माध्यम है जिससे लोग सरलता से प्रभावित होते हैं। अत: इनका प्रयोग संबंधी जानकारी प्रसार कार्यकर्ता हेतु अपेक्षित है।

- **विशेषज्ञों की सेवाएं उपलब्ध कराना -** अनेक ऐसे क्षेत्र होते हैं जिसमें विशेषज्ञों के परामर्श की आवश्यकता होती है। कृषि, लघु उद्योगों संबंधी तकनीकी परामर्श, खाद्य संरक्षण तथा संतुलित आहार संबंधी जानकारियां, स्वास्थ्य रक्षा, टीकाकरण एवं मत्स्य शूकर कुक्कुट पालन संबंधी जानकारियां आदि अनेक ऐसे क्षेत्र है जहां विषय विशेषज्ञ की सेवाओं की आवश्यकता होती है। प्रसार कार्यकर्ता All of Masters नहीं हो सकता अत: उसे बिना संकोच इन सेवाओं को उपलब्ध करवाना चाहिए। यदि वह अपने अहंभाव के कारण इन सेवाओं से ग्रामीणो को वंचित रखेगा तो प्रसार कार्य सफल नहीं हो सकता।
- **जनकल्याण तथा समाजोत्थान के प्रति वचनबद्धता -** प्रसार कार्य एक जन हितकारी योजना है इसमें समाज का उत्थान तथा जनकल्याण का लक्ष्य निहित होता है। मात्र कागजी आंकडों से प्रसार कार्य की सफलता का मूल्यांकन नहीं किया जा सकता। इन योजनाओं द्वारा जब जनता लाभान्वित होती हो, कमजोर वर्ग का उत्थान होता हो और उनका रहन सहन का स्तर ऊँचा उठता हो तभी प्रसार कार्यक्रम को सफल माना जा सकता है। अत: प्रसार कार्यकर्ता को जनकल्याण की भावना से लवलीन होना चाहिए तथा समाजोत्थान के प्रति वचनबद्ध होना चाहिए।
- **लोक परम्पराओं, रीति रिवाजों तथा संस्कृति के प्रति आदरभाव -**हर समाज में रीति रिवाज, संस्कृति, परम्पराएं रहती हैं। लोगों की इच्छा होती है कि अन्य क्षेत्र के लोग भी उनकी संस्कृति और रीति रिवाजों के प्रति आदरभाव रखें। अत: प्रसार कार्यकर्ता को भी इनका सम्मान करना चाहिए और उनकी अवज्ञा नहीं करनी चाहिए। यदि लोग अंध विश्वास तथा गलत परम्पराओं से ग्रसित हो तो अप्रत्यक्ष रूप से मनोवैज्ञानिक ढंग से

उसे दोषपूर्ण सिद्ध करके, लोगों को उनसे छुटकारा दिलाना चाहिए और बुराईयों को दूर करने का प्रयत्न करना चाहिए।

12.5 प्रसार कार्यकर्ता के कर्तव्य

"The role of team of extension worker is to function as a close knit team working inclose relation to the other in heloping village people in intitiating and carrying out their own development programmes."

साधारण रूप से प्रसार कार्यकर्ता का कर्तव्य ग्रामीण लोगों के साथ रहकर उनके विकास के लिए कार्यक्रम बनाने तथा उन्हें चलाने मे सहायता देना है। इसके लिए निम्नलिखित कार्य करने होते हैं -

लोग विकास के लिए कार्यक्रम बनाने व चलाने के लिए सभी तैयार होते है ब उनकी समस्या का समाधान हो तथा उन्हें ज्ञान से भी परिचित कराया जाये। यह प्रसार कार्यकर्ता का कर्तव्य है।

लेगों को कार्य करने को प्रेरित करने के लिए ऐसी सहायता देनी चाहिए जिससे वे स्वावलम्बी बन सकें।

लेगों में प्रेरणा उत्पन्न करने के लिए यह भी आवश्यक है कि वह ग्रामीण जीवन में रूचि लें। ऐसी रूचि उत्पन्न करना प्रसार कार्यकर्ता का कर्तव्य है।

लेगों में स्थायी रूप से रूचि उत्पन्न करने के लिए उनका सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा बौद्धिक विकास किया जाये। अत: इससे संबंधित कार्यक्रम प्रसार कार्यकर्ता को बनाने चाहिए।

प्रसार कार्यकर्ता का यह भी कर्तव्य है वह सभी लोगों में अच्छी नागरिकता की भावना उत्पन्न करें जिससे लोगों में सामाजिक विकास हो।

उपर्युक्त सभी परिवर्तन, जब लोगों के मानसिक दृष्टिकोण मे परिवर्तन होगा तभी संभव है। अत: प्रसार कार्यकर्ता का यह कर्तव्य हो जाता है कि वह सभी प्रकार के कार्यों व शिक्षा की उचित व्यवस्था करें।

विशिष्ट कर्तव्य -

नियोजन करना -प्रबंधकर्ता अपने क्षेत्र में कार्यक्रम बनाता तथा चलाता है। अत: उसका यह कर्तव्य हो जाता है कि अपने अपने क्षेत्र की उपयुक्त दशा में इस प्रकार कार्यक्रम नियोजित करें जिससे कार्यक्रम सफल हो सकें। नियोजन उचित न हो तो कार्यक्रम भी सफल नहीं हो सकता।

प्रबंधन करना - केवल कार्यक्रम की रूपरेखा तैयार करना अर्थात आयोजन ही पर्याप्त नहीं साथ ही विभिन्न तत्व जो कार्य करने के लिए आवश्यक और उपलब्ध है उन्हें एक इकाई के रूप में इस प्रकार चलाया जाए जिससे सभी तत्व एक होकर कार्य करें। अत: विभिन्न तत्वों को संगठित करके कार्यक्रम चालाया जाना चाहिए।

संलग्नता- नियोजन, प्रबंध के साथ ये भी देखना आवश्यक है कि विभिन्न तत्व किस प्रकार कार्य कर रहे हैं और जो तत्व ठीक प्रकार कार्य नहीं कर रहे है उन्हें ठीक किया जाये, कार्य पर लगाया जाये। यह कार्य भी प्रबंधनकर्ता का ही है।

मूल्यांकन करना - अपने क्षेत्र में चल रहे कार्यक्रम के संबंध में प्रबंधकर्ता को जानकारी रखनी चाहिए कि कार्यक्रम सफल हुआ है अथवा नहीं। कितना हुआ और कितना नहीं क्यों नहीं हुआ। कार्यक्रम की सफलता के लिए यह भी आवश्यक है कि बाधाओं (अनुपयुक्त तत्वों) को दूर किया जाए और यह मूल्यांकन द्वारा ही संभव है।

अन्य राजकीय तथा व्यक्तिगत संगठनों से अपने संगठन का संबंध बनाये रखना तथा उससे अधिक सहयोग प्राप्त करना भी प्रबंधकर्ता का कर्तव्य है।

1. कार्य की प्रगति की सूचना प्रेषित करना।
2. अपने साथियों तथा जनता के लोगों को उत्साहित करना तथा अच्छे कार्यकर्ताओं को पुरस्कार देना।

3. कार्यक्रम को सफल बनाने हेतु सभी आवश्यक व्यवस्था करना साधन जुटाना।

ब) विषय विशेषज्ञ के विशिष्ट कार्य -

1. अपने विषय से संबंधित आधुनिकतम ज्ञान द्वारा ग्राम स्तर के कार्यकर्ता तथा ग्रामीणों को परिचित कराना।
2. विषय संबंधित ग्रामीणों की समस्या का अध्ययन कर उसका वैज्ञानिक कारण जानकार उसको हल करना अथवा अन्य अधिकारियों को उसकी सूचना देना।
3. ग्राम सेवकों तथा ग्रामीणों को अपने विषय की शिक्षा देना।
4. कार्यक्रम की योजना स्थानीय साधनों को दृष्टिगत रखते हुए बनाना, उसे चलाना एवं उसका निरीक्षण करना।
5. अन्य विभाग वालों से अपने कार्य में सहयोग प्राप्त करना।
6. कार्यक्रम को सफल बनाने हेतु आवश्यक साधनों को जुटाने की व्यवस्था करना।
7. विषय से संबंधित अधिकाधिक प्रसार विधियों का प्रयोग करना।
8. विषय के प्रचार हेतु सहायक सामग्री तैयार करना।
9. विषय का मूल्यांकन करना तथा सूचना प्रेषित करना।
10. गांव से बाहर के व्यक्तियों को उन्नतिशील बाते दिखाने को बुलाना एवं ग्रामीण लोगों को बाहर ले जाना।

स) ग्राम स्तर के अधिकारी के विशिष्टि कार्य -

1. ग्रामीण नेतृत्व का विकास करना।
2. लोगों को दिन प्रतिदिन के जीवन से संबंधित सभी सलाह देना।
3. लोगों को नये व्यवसाय के संबंध में जानकारी देना, समझाना तथा उपयुक्त सहायता प्रदान करना।
4. लोगों को वर्तमान व्यवसाय में उन्नति करने के तरीके बतलाना और उन्हें उचित साधन देने की भी व्यवस्था करना।

5. लोगों को उन्नतिशील विधियों को समझाना और उनकी समस्या संबंधित अधिकारी तक पहुंचाना।
6. लोगों को उन्नतशील कार्यक्रम को अपनाने में सहयता करना एवं अन्य लोगों को उन्नतशील कार्यक्रम की शिक्षा प्रदान करना।
7. लोगों के सांस्कृतिक तथा सामाजिक जीवन में रूचि लेना।
8. ग्रामीणो के सभी प्रकार के विकास का अध्ययन करना।

ग्राम स्तरीय कार्यकर्ता सामुदायिक विकास कार्यक्रम की धुरी के रूप में -

संक्षेप में, सामुदायिक विकास से तात्पर्य हैं जब समुदाय के लोग अपनी ही प्रेरणा और सहयोग से अपने समुदाय के विकास के लिए कार्य करें । जब जनता में अपने विकास के लिए प्रेरणा और सहयोग की भावना उत्पन्न होगी तब वह कार्यक्रम सामुदायिक विकास कहलायेगा और जो कार्यक्रम प्रारंभिक रूप से जनता में प्रेरणा सहयोग की भावना विकसित करके क्रियात्मक रूप देने का कार्य करेगा वही सामुदायिक विकास के कार्यक्रम की धुरी होगा।

सामुदायिक विकास कार्य शिक्षण द्वारा संभव हो सकता है क्योंकि लोगों में शिक्षण द्वारा प्रेरणा व सहयोग उत्पन्न कया जा सकता है और शिक्षण निम्नलिखित बातों पर निर्भर करता है -

शिक्षक - सफल शिक्षण के लिए योग्य विषय का ज्ञाता, अच्छे स्वभाव व व्यक्तित्व वाला शिक्षक होना चाहिए।

शिक्षा प्राप्तकर्ता - शिक्षा प्राप्त करने वाले को उत्साही व नये ज्ञान की इच्छा रखने वाला होना चाहिए।

विषय - जनता की रूचि और आवश्कतानुसार विषय शिक्षण की सफलता के लिए आवश्यक है।

उपलब्ध साधन - जितने अधिक साधन होगे उतना ही शिक्षण सफल होगा।

भौतिक वातावरण - भौतिक वातावरण जितना सुखदायी होगा उतना ही लोगों की रूचि बढेगी और शिक्षण अधिक सफल होगा।

सामुदायिक विकास कार्यक्रम की शिक्षा लोगों को देने और उसे सफल बनाने के लिए प्रारंभिक रूप से प्रसार कार्यकर्ता ही जिम्मेदार होता है क्योंकि वही ग्राम स्तर पर लोगों के साथ रहकर कार्य करता है और उन्हें शिक्षित करता है, नये ज्ञान से जनता को परिचित कराकर उनकी रूचि के अनुसार प्रस्तुत करता है। साथ ही अधिक से अधिक साधन जैसे दृश्य श्रव्य साधनों का प्रयोग करता है। मुख्यत: कार्यक्रम को भौतिक सुविधाओं के अनुसार चलाता है जिससे लोग उसमें रूचि ले और कार्यक्रम सफल हो।

उपर्युक्त आधार पर यह कहा जा सकता है कि सामुदायिक विकास का कार्य जो शिक्षण द्वारा सफल हो सकता है ग्रामीण प्रसार कार्यकर्ता सभी प्रभावित करने वाले कारकों को ठीक प्रकार से रखता है इसलिए सामुदायिक विकास की कार्यक्रम उसे धुरी कहा जाता है।

संचारक के रूप में प्रसार कार्यकर्ता - प्रसार कार्य की सफलता प्रसार कार्यकर्ता के संदेश के संचार की योग्यता पर निर्भर करती है। लोगों को उपयोगी विचार प्रस्तुत कर उनका अर्थ स्पष्ट करना, उन्हें स्वीकारने के लिए प्रेरित करना, उसका अपनाने की दिशा में ले जाना प्रसार कार्यकर्ता के सामने एक बहुत गंभीर एवं उत्तेजक उत्तरदायित्व रहता है। इसे गंभीर इसलिए कहते हैं

क्योंकि प्रभावशाली ग्रामीण विकास का क्रियान्वयन प्रसार कार्यकर्ता के संचार कौशल पर निर्भर करता है और इसी पर ग्रामीणों का कल्याण और उनका जीवन निर्भर करता है। प्रसार कार्यकर्ता स्वयं एक महान शैक्षिक आन्दोलन का भाग रहता है जिसके द्वारा ग्रामीण समुदाय के सामाजिक तथा आर्थिक स्तर को ऊँचा उठाने में उनकी मदद करता है। सामुदायिक विकास के लिए प्रसार कार्य के क्षेत्र में प्रभावशाली ढंग से कार्य करने के लिए आवश्यक है कि जो उपयोगी ज्ञान लोगों को दिया जाये वे उसका उपयोग करें। इसके लिए प्रभावी संचार की

आवश्यकता होती है। इसके लिए उसमें निम्नलिखित अपेक्षाऐं कि जाती है-

प्रसार कार्यकर्ता को अपने उद्देश्य, संदेश और उन्हें प्रस्तुत करने की जानकारी होनी चाहिए। उसमें व्यावसायिक कौशल के साथ अपनी सीमाओं की भी जानकारी होनी चाहिए।

उसे लोगों के कल्याण के लिये अपने संदेश से कैसे लाभ हो, संचार प्रक्रिया संचार मार्ग और उसमें सुधार लाकर लोगों में रूचि जागृत करनी चाहिए। उसे संचार की पूरी योजना संचार माध्यम, संचार उपकरण और मूल्यांकन की अपने उपयोग के लिये तैयार करना चाहिए।

12.6 सारांश

इस प्रकार प्रसार कार्यक्रम की सफलता के लिए कार्यकर्ता को ग्रामीण जनता तक पहुंचाना आवश्यक होता है तथा उनका विश्वास प्राप्त करना होता है।यह एक ऐसी शिक्षा की प्रक्रिया है। जिसमें प्रसार कार्यकतार्स तथा ग्रामीण दोनों का योगदान रहता है। प्रशासन और लोगों के बीच कि कड़ी प्रसार कार्यकर्ता होता है । अत: प्रसार कार्यकर्ता को प्रशासक के रूप में विषय विशेषज्ञ के रूप में ग्रामीण प्रसार कार्यकर्ता के रूप में सामुदायिक विकास कार्यक्रम की धुरी के रूप में और एक संचालक के रूप में कार्य करना होता है तभी प्रसार कार्य अपने उद्देश्य को प्राप्त कर सकता है।

12. 7 प्रश्न

1. कार्यक्रम में प्रसार कार्यकर्ता की भूमिका के बारे में समझाइए

2.कार्यक्रम में प्रसार कार्यकर्ता के गुण के बारे में समझाइए

3.कार्यक्रम में प्रसार कार्यकर्ता के कर्तव्य के बारे में समझाइए

12.8 संदर्भ ग्रन्थ

प्रसार शिक्षा –डा. वंदना जैन , डा पूनम कुमारी

प्रसार शिक्षा-डा बी. डी. हरपलानी
प्रसार शिक्षा- डा वृंदा सिंह

अध्याय - 13

मूल्यांकन(Evaluation)

13.0 उद्देश्य
13.1 प्रस्तावना
13.2 मूल्यांकन की परिभाषाएँ
13.3 मूल्यांकन के उद्देश्य
13.4 मूल्यांकन के लक्ष्य

13.5 मूल्यांकन का महत्त्व
13.6 मूल्यांकन के मानक
13.7 मूल्यांकन की प्रकृति
13.8 मूल्यांकन के प्रकार
13.9 मूल्यांकन के चरण
13.10 मूल्यांकन के लाभ
13.11 मूल्यांकन के दोष व समस्याएँ
13.12 सारांश
13.13 अभ्यास प्रश्न
13.14 संदर्भ ग्रंथ

13.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप -

1. मूल्यांकन शब्द की परिभाषा व अर्थ समझ सकेंगे।
2. मूल्यांकन के प्रकार का ज्ञान हो सकेगा।
3. मूल्यांकन के विभिन्न चरणों को जान सकेंगें।
4. मूल्यांकन का कार्यक्रम नियोजन में महत्त्व समझ सकेंगे ।
5. मूल्यांकन की समस्याओं व दोषों से परिचय प्राप्त कर सकेंगे ।

13.1 प्रस्तावना

हम नित्य प्रति अपने कार्यों, व्यवहारों तथा चीजों का मूल्यांकन करते है। हम अपने भोजन, सफाई, खरीददारी आदि का भी मूल्यांकन करते है। बाज़ार से खरीद कर लाई गई चीजें सुन्दर है या नहीं और घर के सदस्यों को पसन्द आई या नहीं इस प्रकार के मूल्यांकन द्वारा हमें अच्छे-बुरे का पता लग जाता है। यदि हम अपने कार्य व्यवहार में परिवर्तन लाना चाहते है तथा आने वाले कल को सुखी बनाना चाहते हैं तो हमें नित्य प्रति मूल्यांकन कर हमारी गलतियों पर विचार करना चाहिए ।

प्रसार कार्य का मूलभूत उद्देश्य है लोगों के जीवन को बेहतर बनाना, इसलिए कुछ लक्ष्य निर्धारित किए जाते हैं और इन्हीं लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए कार्यक्रम नियोजित किए जाते हैं। कार्यक्रम नियोजन में

मूल्यांकन का स्थान अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। प्रसार कार्य अधिकांशत: जनता के पैसों से सरकारी तथा गैर सरकारी संगठनों (NGO) के सहयोग से सम्पन्न किए जाते हैं। जो भी कार्यक्रम जनता के हित के लिए चलाए जाते हैं; वे लोगों की मनोवृति, कार्य व व्यवहार में परिवर्तन लाने में कितना सक्षम रहे है? इस प्रश्न का उत्तर जानने का एकमात्र तरीका मूल्यांकन ही है।

अत: स्पष्ट है कि मूल्यांकन से किसी व्यक्ति, कार्यक्रम या स्थिति का 'विश्लेषणात्मक अध्ययन' किया जा सकता है।

13.2 मूल्यांकन की परिभाषाएँ

मूल्यांकन शब्द का सन्धि विच्छेद है "मूल्य का अंकन"। मूल्यांकन अंगे्रजी शब्द Evaluation का हिन्दी रूपांतर है। मूल्यांकन का डिक्शनरी अर्थ है "मूल्य का निर्धारण करना", किसी चीज की कीमत का निर्णय करना।

परिभाषाएँ - प्रसार शिक्षाविदों ने मूल्यांकन की निम्न परिभाषाऐं दी हैं:-

1. **बिग्लहोल्ड के अनुसार-** "यह अनुभवों की एक क्रमवार प्रक्रिया है जो लोगों को उनके द्वारा भविष्य में किए जाने वाले प्रयासों को और भी अधिक प्रभावी बनाने में सहायक होती है।

Beagle Hold:– It is a process of systematically drawing upon experiences as a means of making future efforts more effective.

2. **जे. के. मैथ्यू के अनुसार-** पूर्व निर्धारित समय में सम्पन्न विकासोन्मुख कार्यक्रम के पूर्व एवं बाद की परिस्थितियों का तुलनात्मक अध्ययन ही मूल्यांकन है।

JK Mathew:– Evaluation is a comparison of the situation before and after a development programme has operated within it for a predetermined period.

3. **क्लिनबर्ग के अनुसार-** मूल्यांकन वह प्रयास है जिसके द्वारा यह जाना जाता है कि कार्यक्रम चलाए जाने तथा कार्यक्रम समाप्त होने के बाद कौन-कौन से परिवर्तन हुए तथा इन परिवर्तनों का श्रेय कार्यक्रम को कहाँ तक दिया जा सकता है।

Klineberg: Evaluation is an effort to learn what changes take place during and after an action programme and what part of these changes can be attributed to the programme.

4. **जहोदा एवं बार्निट के शब्दों में-** मूल्यांकन एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा प्रशासन को अपने कार्यक्रम के प्रभाव का विवरण देने तथा अपने लक्ष्य को अधिक प्रभावशाली ढंग से प्राप्त करने, प्रगति की व्याख्या करने तथा उत्तरोतर समायोजन करने में सहायता मिलती है।

Johoda and Barnit:– Evalutaion is a process which enables the administrator to describe the effect of this programme and thereby make progressive adjustments in order to reach his goal more effectively.

5. **केल्से व हियर्ने के अनुसार-** 'किसी भी उद्यम अथवा कार्य के महत्त्व का निर्धारण एवं विश्लेषण मूल्यांकन द्वारा होता है। इसके द्वारा व्यक्तियों, समूहों, कार्यक्रमों, परिस्थितियों, कार्य- प्रणाली तथा प्रक्रियाओं को समझने तथा उनके गुणों का पहचानने की समझ आती है।

Kelsey and Hearne:– Evalutaion is a process by which the values of an expertise are ascertained or analyzed by which one is able to understand and appreciate the relative merits or deficiencies of persons, groups, programmes, situations methods and processes.

6. **सॅचमैन**: ने मूल्यांकन को इस प्रकार परिभाषित किया: मूल्यांकन का आधार कार्यक्रम के परिणाम या फल को माना गया है जो उन कार्यकलापों द्वारा प्राप्त किया गया हो जिन्हे वांछित लक्ष्य या उद्देश्य की प्राप्ति हेतु निर्धारित किया गया है।

Suchman:– Writes evaluation is a determination of results, attained by some activity, designed to accomplish some valued goals or objectives.

7. **स्टफ्लबीम द्वारा दी गई परिभाषा-** Evalutaion is the process of deleaniting, obtaining and providing useful information for judging decisions alternative.

8. **स्टेले (Steele) के अनुसार-** Programme evalutaion is the process of judging he worth or value of a programme. The judgment is formed by comparing evidence as to what the programme is, with criteria as to what the programme should be.

9. **रूडाबॉग** Evaluation can be defined as the process of determining the value or amount of success in achieving a predetermined objective.

10. **शर्मा एवं सिहं के अनुसार-** मूल्यांकन से तात्पर्य है किसी व्यक्ति, कार्य या स्थिति का विश्लेषणात्मक अध्ययन करना जिससे त्रुटि तथा लाभ का ज्ञान हो सके।

11. **सूपे ने निम्न परिभाषा दी-** मूल्यांकन वह प्रक्रिया है जिससे यह पता चलता है कि उद्देश्यों की पूर्ति कहाँ तक हुई है।

S.V. Supe: Evaluation is the process of determining the extent to which objectives have been attained

12. **दूबे एवं सिहं के अनुसार-** सही मूल्यांकन से कार्यक्रम को सफलता मिलती है, अत: इसे कार्यक्रम के चलते-चलते करना चाहिए तथा कार्यक्रम क्रियान्वयन कर उपलब्धियों का मूल्यांकन करना लाभकारी होता है ।

13. **शॉ और शॉ के अनुसार-** मूल्यांकन कार्यक्रम नियोजन का एक अनिवार्य चरण है जो कार्यक्रमांतर्गत व कार्यक्रमोंपरान्त सम्पन्न होता है। इसके द्वारा कार्यक्रम की गतिविधियों और उपलब्धियों या विफलताओं का आकंलन किया जाता है तथा भविष्य में सम्पनन होने वाले कामों को भी दिशा-निर्देश प्रदान किया जा सकता है।

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर निश्चित रूप से कहा जा सकता है ''मूल्यांकन एक प्रकिया है जिसके अन्तर्गत दो स्थितियों का विश्लेषण किया जाता है तथा यह पता लगाया जाता है कि पूर्व निर्धारित समय में लक्ष्यों की पूर्ति कहाँ तक हुई है।''

अत: स्पष्ट है कि मूल्यांकन द्वारा कार्यक्रमों की सफलताओं एवं विफलताओं का पता चल जाता है। इसका उपयोग भविष्य में होने वाले कार्यक्रमों को दिशा निर्देश प्रदान करने में किया जा सकता है।

13.3 मूल्यांकन के उद्देश्य

मूल्यांकन के उद्देश्य अग्रलिखित है-

1. कार्यक्रम के मूल्यांकन द्वारा प्रसार कार्य से सम्बन्धित लोगों को अपना भागीदारी बढ़ाने के अवसर देना ताकि वे अपने स्तर से प्रतिपादित कार्यक्रम के लक्ष्यों का परीक्षण कर सकें।
2. नियोजित कार्यक्रम के सबल एवं निर्बल पक्षों का समझना ताकि भविष्य में नियोजित किये जाने वाले कार्यक्रम में उनका ध्यान रखा जाए।
3. कार्यक्रम की सफलता एंव विफलता से जुडे कारकों का विश्लेषण करना जिससे यह पता चल सके कि निर्धारित लक्ष्य तक पहुँचने में कौन से कारक सहायक रहे है तथा किन बाधक तत्वों के कारण वांछित सफलता नहीं मिल पायी है।
4. मूल्यांकन से प्रसार कार्यकर्त्ता को अपनी बात कहने में, कार्यक्रम के लाभ को बताने में, कार्यक्रम की उपयोगिता तथा लक्ष्य को जनता व स्थानीय नेता के समक्ष स्पष्ट करने में सुविधा होती है।
5. प्रसार कार्यकर्त्ता को यह पता चल जाता है कि उसकी कार्यक्षमता कितनी है और वह किन-किन क्षेत्रों में, कौन-कौन से कार्यक्रम नियोजित कर सकता है।
6. मूल्यांकन द्वारा उन जानकारियों, कार्य निष्पादन शैलियों तथा शैक्षिक परिवर्तन की ओर ध्यानाकर्षण होता है, जो प्राय: दृष्टिगोचर नही होते है तथा जिनकी ओर लोगों का ध्यान नही जाता।
7. कार्यक्रम के मूल्यांकन से प्राप्त सुखद परिणामों से प्रसार कार्यकर्त्ता को संतुष्टि मिलती है।

8. मूल्यांकन से कार्यक्रम की प्रगति का पता चलता है। इससे सभी संलग्न व्यक्तियों को कार्यक्रम संचालन सम्बन्धित जानकारियाँ प्राप्त हो जाती है।
9. मूल्यांकन से प्राप्त परिणामों को पूरे समुदाय के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है। अत: यह एक तरह से जन सम्पर्क का काम करता है तथा लोगों को यह अवसर प्रदान करता है कि वे कार्यक्रम के सम्बन्ध में अपने विचारों का आदान-प्रदान करें।
10. इससे लोगों में सहयोग, समन्वय तथा सहभागिता का विकास होता है।
11. व्यक्ति, समाज तथा समुदाय में आये परिवर्तनों का स्पष्टीकरण प्राप्त होना।
12. कार्यक्रमान्तर्गत तथा कार्यक्रमोपरान्त द्वारा मूल्यांकन लोगों को सीखने, नई पद्धतियों तथा नई कार्यप्रणालियों को अपनाने में मदद करना।
13. प्रसार कार्य से जुडे लोगों को अपनी कार्य प्रद्वति सुधारने तथा गुणवत्ता बढ़ाने में सहायक होना।
14. मूल्यांकन द्वारा प्रशिक्षकों का मनोबल ऊँचा उठना, आत्म विश्वास जागृत होना तथा कार्यक्रम के प्रति मन में विश्वास पैदा होना।

13.4 मूल्यांकन के लक्ष्य

मूल्यांकन के निम्नांकित लक्ष्य है-

- कार्यक्रम नियोजन के अन्तर्गत निर्धारित लक्ष्य के परिपेक्ष्य में कार्यक्रम की समीक्षा।
- लाभान्वितों पर हुए प्रभावों का आकलन।
- संलग्न समुदाय की सामाजिक-आर्थिक संरचना पर होने वाले प्रभावों का अध्ययन।
- अपनायी गई तकनीक एवं कार्य प्रणाली की समीक्षा।
- नेतृत्व एवं संचालन की समीक्षा।
- लक्षित समुदायों को प्राप्त लक्ष्यों की समीक्षा।

प्रसार शिक्षण प्रकिया में मूल्यांकन एक महत्त्वपूर्ण चरण है। मूल्यांकन द्वारा ही लोग उन निर्णयों और निष्कषों पर पहुँचते है, जो उन्हें भविष्य के निर्णय लेने में सहायता पहुँचाते है। विकास के क्षेत्र में मूल्यांकन का महत्त्व और भी बढ़ जाता है, क्योंकि यह तत्कालीन कार्यक्रम से सम्बद्ध होकर भी भविष्य के कार्यक्रमों को प्रभावित करता है।

13.5 मूल्यांकन का महत्त्व

मूल्यांकन से व्यक्ति किसी ठोस निष्कर्ष पर पहुँच जाता है। इससे निर्णय लेने में सुविधा रहती है। "निर्णय विभिन्न विकल्पों का चुनाव है।" निर्णय लेते समय मूल्यांकन महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ प्रदान करता है। यह वर्तमान कार्यक्रम की निरंतरता, पुननिर्देशन तथा पुनर्दबाव से संबंधित निर्णय लेने में मदद करता है। इससे भविष्य में बनाये जाने वाले कार्यक्रम में सहयोग मिलता है। मूल्यांकन के महत्त्व निम्नानुसार है :-

1. प्रत्येक कार्यक्रम को समझने के लिए मूल्यांकन आवश्यक है। इसके आधार पर भविष्य की योजनाएँ तैयार की जा सकती हैं तथा दिशा-निर्देश प्राप्त किये जा सकते है।
2. यह आवश्यकताओं को पहचानने तथा उसकी पूर्ति में मदद करता है।

   मूल्यांकन से सभी अच्छे एवं कमजोर पक्षों का ज्ञान हो जाता है। कमजोर पक्ष पर बल देकर कार्यक्रम को सफल बनाया जा सकता है।
3. मूल्यांकन से कार्यक्रम की सफलता में आने वाली रूकावटों, बाधाओं तथा परेशानियों का पता चल जाता है।
4. मूल्यांकन से वास्तविक तथ्यों के प्रस्तुतीकरण द्वारा लोगों मे आत्मविश्वास तथा आत्म-संतुष्टि प्राप्त होती है। कार्य की प्रगति से मूल्यांकनकर्त्ता को संतुष्टि मिलती है।
5. मूल्यांकन से कार्यक्रम में प्रयुक्त किये जाने वाली शिक्षण विधियों तथा तकनीकों के संबंध में निर्णय लेने में सुविधा रहती है।
6. मूल्यांकन से कार्य के परिणाम की जानकारी मिलती है। अत: यह कार्य को सुधारने के लिए एक आधार प्रस्तुत करता है।

8. मूल्यांकन प्रसार कार्यकर्ता को स्पष्ट उद्देश्यों को परिभाषित करने के लिए बाध्य करता है ।

9. शिक्षण विधियों को अन्तर्गत कि कौन-सी शिक्षण विधि अधिक उपयोगी है तथा कौनसी कम उसकी जानकारी मूल्यांकन से ही हो पाती है।

10. वैज्ञानिक तकनीकों, उन्नत विचारों, उपकरणों आदि को अपनाने में मूल्यांकन सहायक होता है। इससे यह पता चल जाता है कि वे जो तकनीक अपना रहे है, वे लाभकारी है या नहीं। नवीन तकनीक को अपनाने में क्या-क्या परेशानियाँ हो रही है तथा उन परेशानियों को कैसे व किस प्रकार दूर किया जा सकता है? लक्ष्यों की प्रप्ति हो रही है या नही, आदि बातों का पता मूल्यांकन से ही लग पाता है।

11. कार्यक्रम संचालक, प्रसार कार्यक्रर्ता तथा उससे जुड़े लोगों को मूल्यांकन से कार्यक्रम का विस्तृत विवरण प्राप्त होता है। यदि कार्यक्रम के प्रगति से संतुष्टि मिलती है तो कार्यक्रम को आगे बढ़ाया जा सकता है। परन्तु यदि कार्यक्रम में असफलता मिलती है तो उन्हें 'चेतावनी' मिल जाती है कि कार्यक्रम में सुधार की आवश्यकता है।

12. कार्यक्रम करते समय उपयुक्त उपकरण (औजार) के चयन में मूल्यांकन सहायक होता है।

13. मूल्यांकन कार्यक्रम नियोजन में 'बेंच मार्क' निश्चित करने में सहायक होता है । जैसे- कार्यक्रम, कब, कहाँ, कैसे, किसकी सहायता से, किसके लिए, आयोजित होगी।

14. कार्यक्रम को चलाने के लिए आँकड़े उपलब्ध हो जाते हैं।

15. मूल्यांकन से फालतू के खर्चों में कमी आती है क्योंकि अनावश्यक चीजों को हटा दिया जाता है। अत: व्यय का औचित्य उपलब्धियों के परिप्रेक्ष्य में मापा जाता है।

16. प्रसार कार्यकर्त्ता जब कार्यक्रम का मूल्यांकन करता है तो उसे यह समझ आ जाता है कि उसकी क्षमताएँ क्या हैं तथा वास्तव में वह किन कार्यों को सही ढंग से करवा पाएगा।

17. प्रसार कार्यकर्त्ता के समक्ष कुछ लक्ष्य होते हैं जिनका निर्धारण वह स्वयं करता है। सम्पूर्ण कार्यक्रम के मूल्यांकन द्वारा उसे अपने कार्यकलापों की समीक्षा करने में सहायता मिलती है । वह जान जाता है कि वह अपने काम में कहाँ तक सफल हो पाया है।

13.6 मूल्यांकन के मानक

मूल्यांकन के मानक - कार्यक्रम के नियोजन व क्रियान्वयन का सही तरीके से मूल्यांकन किया जा सके इसके लिए निम्नांकित प्रमाणों/कसौटियों का आधार माना गया है।

1. प्रत्येक प्रमाण के निर्णय हेतु आवश्यक साक्ष्य की पहचान करना।
2. साक्ष्य प्राप्त करने हेतु उपयुक्त विधियों का चयन करना जैसे- व्यक्तिगत अवलोकन, साक्षत्कार, सर्वेक्षण, प्रश्नावली आदि।
3. जो साक्ष्य प्राप्त किए गए है, उसके आधार पर यह ज्ञात करना है कि कार्यक्रम नियोजन के क्रियाकलापों में प्रत्येक प्रमाण से वांछित संतुष्टि मिली है या नहीं।

13.7 मूल्यांकन की प्रकृति

मूल्यांकन की प्रकृति निम्नलिखित है-

1. **मूल्यांकन माप नहीं है (Evaluation is not Measurement) -** मूल्यांकन माप नहीं है इसका अर्थ यह नहीं कि इससे उपलब्धियों को मापा नहीं जा सकता। मूल्यांकन तो प्रसार कार्यक्रम का अभिन्न अंग है। प्रसार कार्यक्रमों के सभी पक्षों का मूल्यांकन किया जाना जरूरी है। कार्यक्रम को नियोजित करते समय, इसका आरम्भ करते समय, क्रियान्वित करते समय तथा कार्यक्रम समाप्ति के बाद मूल्यांकन किया जाता है, जिससे यह पता चल जाता है कि कार्यक्रम कहाँ तक सफल हो पाया है। कार्यक्रम के प्रबन्धन, कार्यक्रम में प्रयोग की जाने वाली शिक्षण विधियाँ, तकनीक, औजार, उपकरण आदि का मूल्यांकन भी आवश्यक है ताकि यह पता चल सके कि कार्यक्रम की सफलता में इनका कितना योगदान रहा

है। सारांश में, मूल्यांकन से कार्यक्रम की सफलता तथा असफलता का भी पता चल जाता है।

2. **मूल्यांकन वैज्ञानिक शोध जैसा नहीं है(Evaluation is not exactly like scientific Research)-** जब हम मूल्यांकन के संबंध में सोचते हैं तो यह पता चलता है कि यह आँकड़ों को एकत्रित करने, निर्णय लेने, सूचनाओं के संकलन तथा निष्कर्ष तक पहुँचने में ठीक वैज्ञानिक शोध की तरह ही है। क्योंकि हम दिन-प्रतिदिन का मूल्यांकन, स्वमूल्यांकन, हरेक वस्तु का मूल्यांकन करते हैं जिसमें किसी विशेष विधि या तकनीक का उपयोग नहीं किया जाता। पर हाँ, वैज्ञानिक शोध के लिय विशेष विधियाँ, तकनीक तथा स्केलिंग की जरूरत होती है। स्केलिंग में पाँच स्थितियाँ होती हैं जिसमें दिन-प्रतिदिन का मूल्यांकन स्केल का एक छोर पर होता है तो वैज्ञानिक शोध स्केल के दूसरे अन्तिम छोर पर, तथा इन सभी में स्पष्ट रूप से अन्तर कर पाना मुश्किल होता है।

13.8 मूल्यांकन के प्रकार

प्रसार कार्य का प्रमुख उद्देश्य सामाजिक तथा आर्थिक उन्नति करना है। विकास की प्रगति को जानने के लिए मूल्यांकन अत्यावश्यक है, जिससे यह पता चल सके कि जो कार्यक्रम चलाये गये हैं, उससे कितना लाभ पहुँचा है। मूल्यांकन का प्रकार अग्रानुसार है-

1. **दिन-प्रतिदिन मूल्यांकन (Casual Everyday Evaluation)**

दैनिक जीवन में हम सभी नित्यप्रति की क्रियाकलापों तथा घटित घटनाओं का मूल्यांकन करते हैं। ये मूल्यांकन पूर्णत: व्यक्तिगत होते हैं। जैसे- आज घर की सफाई अच्छे ढंग से हुई या नहीं। सभी सामग्री अपने स्थान पर है अथवा नहीं। घर में जो व्यंजन बनाये व परोसे गये वे आकर्षक ढंग से प्रस्तुत हो पाये या नहीं। घर के सदस्यों ने अपने-अपने कर्तव्यों व जिम्मेदारियों को ढंग से निभाया या नहीं। बाजार से जो कपड़े खरीदे गये वे पंसद आये या नहीं इन सभी का मूल्यांकन हम रोज ही करते रहते हैं। घर का बना हुआ खाना किसी सदस्य को बहुत अच्छा, तो किसी को अच्छा तथा किसी को

ठीक-ठीक लगता है। घर के कोई सदस्य ऐसे भी होते हैं जिन्हें घर का बना खाना बिल्कुल ही पसंद नहीं आता। अत: इस प्रकार के मूल्यांकन में किसी विशेष विधि या तकनीक का प्रयोग नहीं किया जाता है। अपितु सभी अपने-अपने मन व इच्छा से मूल्यांकन करते हैं। इस तरह के मूल्यांकन दिन भर में सैकड़ों बार किये जाते हैं।

दिन-प्रतिदिन मूल्यांकन की सीमाएँ (Limitations of Casual Everyday Evaluation)

1. मूल्यांकन पूर्णत: व्यक्तिगत होते हैं।
2. मूल्यांकन में कोई गंभीरता नहीं होती।
3. इसका कोई मानदंड नहीं होता।
4. मूल्यांकन पूर्वाग्रहों (Prejudices) से संबंधित हो सकता है। जैसे- जिस व्यक्ति से मूल्यांकनकर्ता का द्वेषपूर्ण व कटु संबंध हो तो उसे उस व्यक्ति के हरेक काम में खोट/कमी नजर आती है। परन्तु जिस व्यक्ति से आत्मिक संबंध है, अधिक लगाव व प्यार है, उसके कार्यों में खोट नजर नहीं आती अपितु उसके गलत कार्यों को भी सही मान लिया जाता है तथा यह कहा जाता है कि ''गलती से हो गई होगी।'' रामचरित मानस में तुलसीदास जी लिखते हैं-

''जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मुरत देखहि तिन तैसी''

5. अन्तिम निर्णय तक पहुँचने के लिए कोई क्रमबद्धता नहीं होती।
6. सूचनाएँ अधूरी हो सकती हैं। अत: सही-सही मूल्यांकन नहीं किया जा सकता।

2. **स्वमूल्यांकन (Self Evaluation)**

जब कोई भी व्यक्ति, गृहिणी, शिक्षार्थी, प्रसार कार्यकर्ता, ग्राम सेवक, शिक्षक, प्रबन्धक, विषय विशेषज्ञ आदि स्वयं का ही मूल्यांकन करे तथा स्वयं से ही यह प्रश्न पूछे कि मैं जो कार्य कर रहा हूँ वह सही है या नहीं। मैं ठीक प्रकार से, पूरी ईमानदारी से, नि:स्वार्थ भाव से, पूर्ण निष्ठा से कार्य कर रहा हूँ या नहीं। मेरा संबंध मेरे सहकर्मियों के साथ कैसा है? मैं दूसरों के साथ कैसा निर्णय से प्रभावित हो जाता हूँ? दूसरों के साथ बातचीत करते समय मेरा मूड कैसा रहता है? क्या मैं दूसरों के निर्णय

से प्रभावित हो जाता हूँ? क्या मैं दूसरों की बात यों ही बिना सोच-समझे मान लेता हूँ? आदि बातों का मनन-चिन्तन करना ही स्व-मूल्यांकन (आत्म-मूल्यांकन) कहलाता है।

पूर्वाग्रह अथवा अहम् भावना से ग्रसित व्यक्ति अपने लिए ही संकट उत्पन्न कर लेता है। वह अपने प्रगति का खुद ही बाधक होता है तथा विकास के राह में रोड़े खड़े कर देता है। वह हरेक व्यक्ति को संदेह (संशय) की दृष्टि से देखता है। परिणामत: वह अवसाद तथा मानसिक उद्वेग से ग्रसित हो जाता हैं वह सदैव तनावग्रस्त रहता हैं परन्तु यदि व्यक्ति पूर्वाग्रहों से ग्रसित होकर स्वमूल्यांकन नहीं करता है, तो उसमें सही-गलत के पहचान की क्षमता विकसित हो जाती है। वह अपने आप पर नियंत्रण करना तथा अनुशासन में रहना सीख जाता है। इसलिए हरेक व्यक्ति को प्रतिदिन स्वयं के लिए 5-10 मिनट समय निकालना चाहिए तथा स्वयं में झाँककर यह देखना चाहिए कि आज मैंने कौन-कौन से कार्य सही किये हैं तथा कौन-कौन से गलत। किन कार्यों से मुझे अधिक संतुष्टि मिली है तथा किनसे कम तथा किनसे बिल्कुल भी संतुष्टि नहीं मिली है। किन कार्यों को अधूरा छोड़ दिया है तथा किन कार्यों को ठीक ढंग से पूरा किया है। इस प्रकार स्वमूल्यांकन से व्यक्ति में अच्छे गुणों का विकास हो जाता है।

3. अपनी कार्यशैली का मूल्यांकन (Evaluation of Self–Work Performance) -

जब कोई भी व्यक्ति नित्य प्रति अपना स्व-मूल्यांकन करता है तो धीरे-धीरे उसमें सद्‌गुणों का विकास हो जाता है तथा दुर्गुणों का नाश हो जाता है। वह हर कार्य को समय पर सम्पन्न करता है तथा योजनाबद्ध ढंग से पूरा करता है। परिणामत: उसकी कार्यकुशलता, दक्षता, ज्ञान कौशल एवं कार्यक्षमता में वृद्धि होती है।

स्मरण रहे! इस प्रकार के मूल्यांकन की भी वही सीमाएँ हैं जो सीमाएँ स्वमूल्यांकन की हैं।

4. आंतरिक मूल्यांकन (Internal Evaluation)

किसी एजेन्सी या संस्था द्वारा जो कार्यक्रम चलाये जाते हैं उसका मूल्यांकन यदि उन्हीं संस्थाओं द्वारा किया जाता है तो उसे 'आंतरिक मूल्यांकन' कहते हैं। इस प्रकार के मूल्यांकन हेतु किन्हीं विशेष विधियों/तकनीकों का प्रयोग किया जाता है। इसके लिये दिन-प्रतिदिन के क्रियाकलापों को डायरी में नोट किया जाता है। स्टाफ के सदस्यों द्वारा कार्यस्थल पर जाकर अचानक ही निरीक्षण किया जाता है। प्रश्नावली, अनुसूची, अवलोकन, साक्षात्कार आदि विधियाँ मूल्यांकन के लिए प्रयुक्त की जाती है।

5. बाह्य मूल्यांकन(External Evaluation) -

जब कार्य-स्थल क्षेत्र से बाहर हो, तब किसी व्यक्ति, या संस्था द्वारा मूल्यांकन किया जाता है तो उसे 'बाह्य मूल्यांकन'(External Evaluation) कहते हैं। (Evaluation conducted by a person or a committee outside the area of operation is called external evaluation.)

भारत में सामुदायिक विकास कार्यक्रमों के शुरूआत के साथ ही, मूल्यांकन हेतु केन्द्र सरकार की ओर से ''कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन'' (Programme Evaluation Organisation) की भी स्थापना की गई है। यह संगठन एक स्वतंत्र एजेन्सी है जो समय-समय पर प्रसार कार्यक्रमों की प्रगति की सूचना सरकार को देती रहती है। उत्तर प्रदेश सरकार ने भी मूल्यांकन हेतु योजना एवं क्रियान्वयन संस्थान की स्थापना की है। इसके अलावा भी सरकार द्वारा कई अस्थायी समितियों का भी गठन किया जाता है जो मूल्यांकन का कार्य करती हैं तथा समय-समय पर प्रगति की रिपोर्ट सरकार को देती है इसमें **'बलवंत राय मेहता समिति'** विशेष उल्लेखनीय है।

6. प्रसार कार्य सम्बन्धी मूल्यांकन

प्रसार कार्यक्रमों की प्रगति को जाँचने के लिये मूल्यांकन किया जाता है। इसके अन्तर्गत दो प्रकार से मूल्यांकन किया जाता है।

1. **कार्यक्रम करते समय मूल्यांकन (On Going Evaluation)-**

इसे '**कार्यक्रमान्तर्गत मूल्यांकन**' भी कहते हैं। इस तरह के मूल्यांकन में पूरे कार्यक्रम पर मूल्यांकनकर्ता की नजर रहती है तथा

उसकी संलग्नता कार्यक्रम के साथ बनी रहती है। कार्यक्रम जिस उद्देश्य से बनाये गये हैं उसकी पूर्ति हो रही है या नहीं कार्यक्रम सही ढंग से निष्पादित हो रहा है या नहीं आदि अनेकानेक बातों की जानकारी इस प्रकार के मूल्यांकन से हो जाती है।

2. **कार्यक्रम समाप्ति के पश्चात् मूल्यांकन -** कार्यक्रम समाप्त होने के बाद जो मूल्यांकन किये जाते हैं, उसे **'कार्यक्रमोत्तर मूल्यांकन कहते हैं'** इससे कार्यक्रम की सफलता- असफलता का पता चल जाता है। लक्ष्य की पूर्ति कहाँ तक हो सकी है। इस तरह के मूल्यांकन से भविष्य में सम्पन्न होने वाले कार्यक्रमों के नियोजन तथा नीति निर्धारण में सहायता मिलती है।

7. विकासकालिक एवं समहारिक मूल्यांकन -

इस प्रकार के मूल्यांकन की प्रकृति काफी हद तक कार्यक्रमान्तर्गत तथा कार्यक्रमोत्तर मूल्यांकन से मिलती-जुलती है। हरेक कार्यक्रम का अपने विकास काल में एक अलग ही छोटा-सा स्वरूप होता है। कार्यक्रम संचालन एवं क्रियान्वयन में कई छोटी-मोटी समस्याएँ आती हैं जिसनका निराकरण कर लिया जाता है ताकि मूल्यांकन निर्बाध रूप से सम्पन्न हो सके।

कार्यक्रम समाप्ति के पश्चात् जो मूल्यांकन किये जाते हैं वे 'समाहारिक मूल्यांकन' कहलाते हैं।

8. वैज्ञानिक मूल्यांकन -

जब मूल्यांकन कार्यक्रम के औचित्य तथा उसके प्रभावों के पारस्परिक सम्बन्धों के निर्धारण हेतु वैज्ञानिक ढंग से, उपयुक्त विधियों व तकनीकों की सहायता से किया जाता है तो उसे वैज्ञानिक शोध कहते हैं। यह मूल्यांकन अधिक उद्देश्यपूर्ण, तथ्यपूर्ण, विश्लेषणात्मक तथा निष्पक्ष होता है। इसकी विश्वसनीयता सबसे अधिक होती है।

मूल्यांकन के प्रकार : मात्र एक नजर में
(Types of Evaluation: At a Glance)

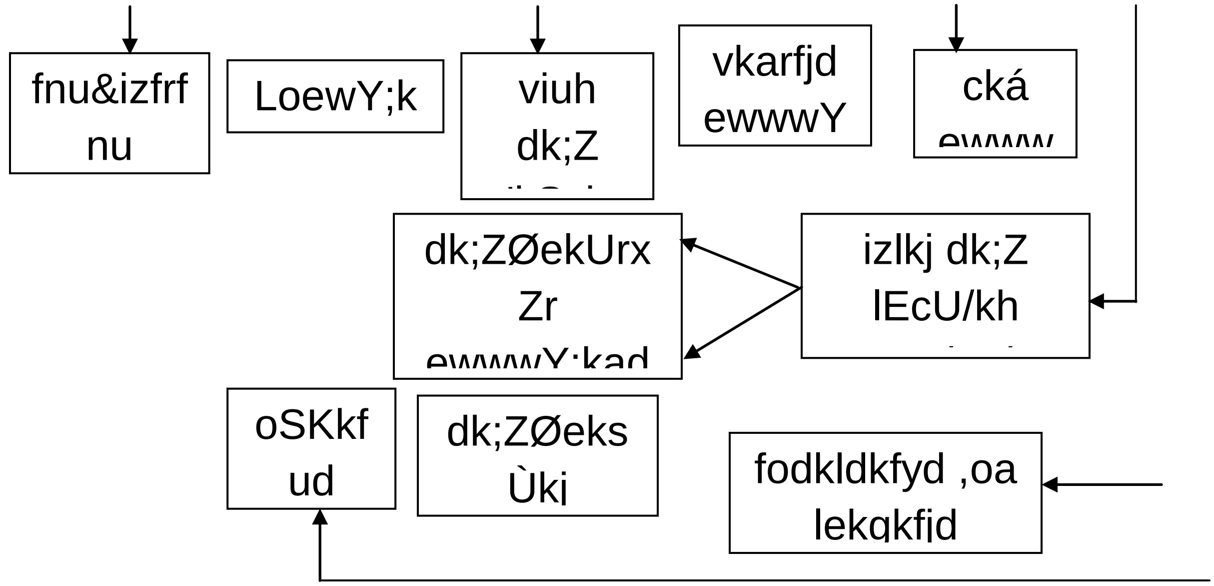

13.9 मूल्यांकन के चरण (Steps of Evaluation):-

प्रसार कार्यक्रम के संदर्भ में अगर मूल्यांकन पर दृष्टिपात करते हैं तो पता चलता है कि यह एक लचीली प्रक्रिया है क्योंकि प्रसार कार्यक्रम की प्रकृति भी लचीली होती है। अत: मूल्यांकन करते समय यदि कहीं कोई आवश्यकता हुई तो उसे सम्मिलित किया जा सकता है।

मूल्यांकन के चरण : मात्र एक नजर में

(Types of Evaluation : At a Glance)

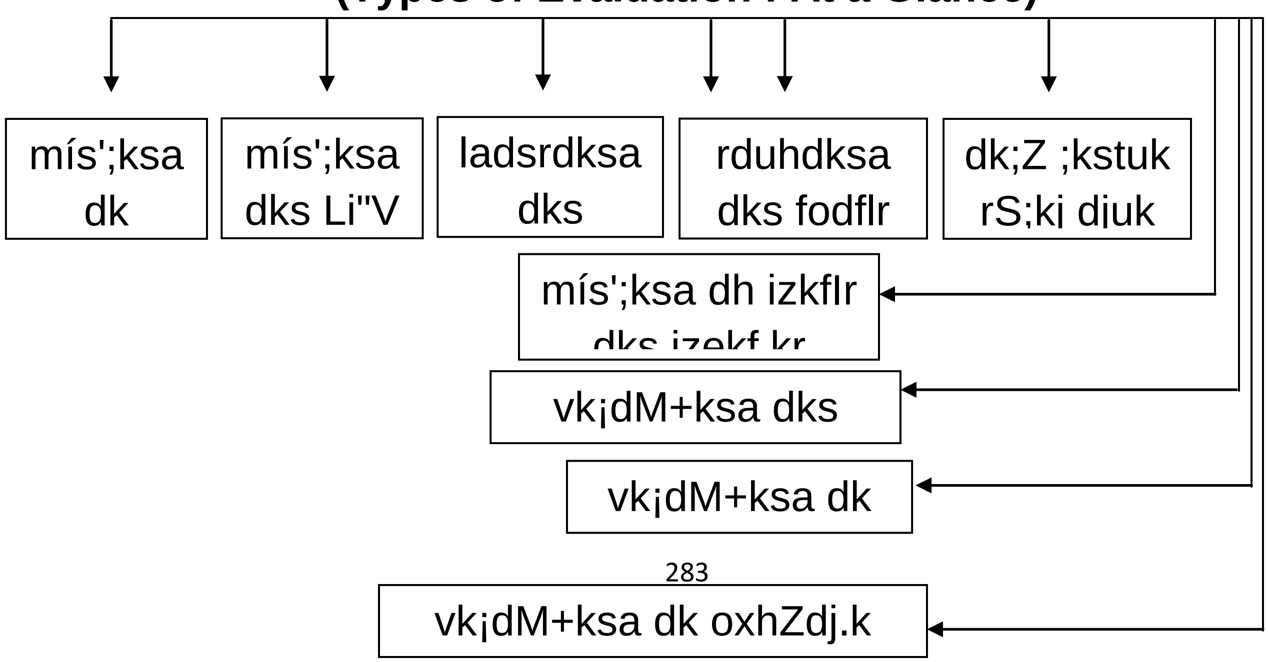

मूल्यांकन के प्रमुख चरण हैं -

- उद्देश्यों का निर्धारण करना(Formulate overall objectives)।
- उद्देश्यों को स्पष्ट करना तथा अधिक विशिष्ट बनाना (Clarity of objectives and make them specific)।
- संकेतकों को पहचानना (Identify Indicators)।
- संकेतकों को मापने हेतु उपयुक्त तकनीकों एवं विधियों को विकसित करना (Developing Appropriate Techniques and Methods for Measuring Accomplishements)
- कार्य योजना तैयार करना (Developing Plan of Work)।
- उद्देश्यों की प्राप्ति को प्रमाणित करना (Deciding upon what data are necessary for evidence of objectives)A
- आँकड़ों को एकत्रित करना (Collection of Data) ।
- आँकड़ों का वर्गीकरण (Classification of Data) ।
- आँकड़ों का विश्लेषण तथा परिणामों की व्याख्या (Analysis and Interpretation of Data) ।

मूल्यांकन के चरण : -

1. उद्देश्यों को निर्धारित करना (Decide Overall Objectives)- मूल्यांकन का पहला महत्त्वपूर्ण चरण है- ‘‘मुख्य उद्देश्यों का निर्धारण करना।’’ प्रसार कार्यक्रम को ध्यान में रखते हुए मूल्यांकन के उद्देश्य निर्धारित किये जाते हैं। कृषि अथवा पशुपालन सम्बन्धी कार्यक्रम तिमाही, छः माही, वार्षिक, द्विवार्षिक, त्रिवार्षिक अथवा इससे भी अधिक समय के लिए तैयार किये जाते हैं। अतः इन कार्यक्रमों के मूल्यांकन के लिए मुख्य उद्देश्यों का निर्धारण किया जाता है।

इसी प्रकार शिक्षण कार्यक्रमों के उद्देश्य भी शिक्षण सत्र के अनुसार निर्धारित किये जाते हैं। जब उद्देश्यों का निर्धारण कम समय के लिए किया जाता है तो उसे ‘अल्पकालिक उद्देश्य’ (Short Term

Objectives) कहते हैं तथा जब उद्देश्यों का निर्धारण लम्बे समय के लिये किया जाता है तो उसे 'दीर्घकालिक उद्देश्य' (Long Term Objectives) कहते हैं। ग्रामीण विकास हेतु दोनों ही प्रकार के उद्देश्यों का निर्धारण किया जाता है।

2. **उद्देश्यों को स्पष्ट करना तथा अधिक विशिष्ट बनाना (Clarity of Ojbectives and Make Them More Specific) -** जब मुख्य उद्देश्यों का निर्धारण हो जाता है तब उन उद्देश्यों को और भी अधिक स्पष्ट किया जाता है तथा विशिष्ट बनाया जाता है। दूसरे शब्दों में, इसे उद्देश्यों की व्याख्या करना भी कहा जा सकता है। इसके लिए पहले मुख्य उद्देश्यों को द्वितीयक उद्देश्यों (Secondary Objectivies) में बाँटा जाता है, तब उन्हें स्पष्ट करने के बाद विशिष्ट बनाया जाता है। तभी ये उद्देश्य मुख्य उद्देश्यों की पूर्ति कर सकते हैं। इसे निम्न उदाहरण से समझा जा सकता है-

मुख्य उद्देश्य- स्त्री शिक्षा को बढ़ावा देना

द्वितीय उद्देश्य- रात्रि पाठशाला की व्यवस्था करना, प्रौढ़ शिक्षा की व्यवस्था करना।

विशिष्ट उद्देश्य- घर-घर जाकर महिलाओं को पढ़ना-लिखना सिखाना।

3. **संकेतकों को पहचानना (Identify Indicators) -** प्रसार कार्यक्रम चलाने का मुख्य उद्देश्य है **''लोगों के जीवन स्तर एवं रहन-सहन के स्तर में सुधार लाना।'' उनका ज्ञान व्यवहार, कार्यकौशल तथा मनोवृत्ति में परिवर्तन लाना**। परन्तु उनके

रहन-सहन के स्तर तथा जीवन स्तर में सुधार हुआ या नहीं, उनके व्यवहार, कार्यकौशल, ज्ञान तथा मनोवृत्ति में परिवर्तन आया या नहीं, इसका पता मूल्यांकन से ही हो पाता है। अत: मूल्यांकन का तीसरा महत्त्वपूर्ण चरण है- ''संकेतकों को पहचानना'' इसके लिए कार्यक्रम प्रारम्भ करने से पहले लोगों के जीवन स्तर तथा रहन-

सहन के स्तर क्या थे, उनका ज्ञान, व्यवहार, कार्यकौशल, कैसा था इसकी जानकारी प्रश्नावली, साक्षात्कार, सर्वेक्षण आदि विधियों

से ज्ञात किया जाता है फिर प्रसार कार्यक्रम चलाया जाता है तथा कार्यक्रम समाप्ति के पश्चात् उनके जीवन स्तर व रहन-सहन के स्तर को जाना जाता है। फिर इन दोनों में तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है तथा उनमें हुए परिवर्तन को देखा जाता है। कार्यक्रम चलाये जाने से पहले उनकी स्थिति कैसी थी, और अब कार्यक्रम चलाये जाने के बाद उनकी स्थिति कैसी है, इनमें अन्तर संकेतकों के द्वारा ही होता है। अत: संकेतकों को पहचानने से मूल्यांकनकर्त्ता का कार्य आसान हो जाता है तथा उसे अपने लक्ष्य तक पहुँचने में आसानी रहती है। इसे निम्न उदाहरण से समझा जा सकता है- यदि हमारा उद्देश्य प्रति एकड़ धान की उपज को उन्नत बीज तथा खाद के प्रयोग से बढ़ाना है तो इसके लिए हमें पहले उन कृषकों द्वारा धान की उपज को नोट करना होगा जो पारम्परिक बीज तथा बिना खाद के प्रयोग से खेती करते हैं। फिर जिन कृषकों ने उन्नत बीज तथा खाद का प्रयोग किया है, उसे नोट करना होगा, तभी यह ज्ञात हो सकेगा कि उन्नत बीज तथा खाद के प्रयोग से धान की फसल में कितनी बढ़ोतरी हुई है। अत: यहाँ उन्नत बीज एवं खाद संकेत के रूप में प्रयोग किया जाता है।

4. उपलब्धियों को मापने हेतु उपयुक्त तकनीकों एवं विधियों को विकसित करना (Developing appropriate Techniques and Methods For Measuring Accomplishments) - संकेतेकों को पहचानने के बाद उचित

तकनीक एवं विधियों को विकसित करना मूल्यांकन का चौथा महत्त्वपूर्ण चरण है। जिस प्रकार शोधकर्त्ता किसी शोध के लिये प्रश्नावली, सूची, अवलोकन, सर्वेक्षण, साक्षात्कार आदि विधियों का चयन एवं विकास करता है। ठीक उसी प्रकार प्रसार कार्यकर्त्ता भी प्रसार कार्यक्रम के पश्चात् उपलब्धियों को मापने के लिए उचित तकनीकों एवं विधियों का विकास करता है। इसे अग्रांकित उदाहरण से समझा जा सकता है-

क्र.सं.	उद्देश्य (Objectives)	संकेतक (Indicators)	तकनीक/विधियाँ (Techniques/Methods)

1.	संक्रामक रोगों से बचाव हेतु लोगों को शिक्षित करना।	संक्रामक रोगों से बचाव हेतु लोगों के ज्ञान में वृद्धि होना।	प्रश्नावली, साक्षात्कार, अनुसूची
2.	ग्रामीण बालकों का स्वास्थ्य उत्तम होना।	कम वजन वाले बच्चों के वजन में वृद्धि होना।	कार्यक्रमान्तर्गत तथा कार्यक्रमोत्तर मूल्यांकन अर्थात कार्यक्रम चलाये जाने से पहले बच्चों का वजन नोट करना। फिर कार्यक्रम चलाये जाने के बाद बच्चों का वजन नोट करना।
3.	ग्रामीणों का रहन -सहन का स्तर ऊँचा उठाना।	फसल की पैदावार बढ़ाना, कुटीर उद्योग-धंधों की स्थापना करके रोजगार उपलब्ध करवाना।	कार्यक्रम चलाये जाने से पूर्व तथा कार्यक्रम चलाये जाने के बाद फसल के पैदावार को तोलना। कार्यक्रम चलाये जाने से पूर्व लोगों की आय को नोट करना।

5. **मूल्यांकन की रूपरेखा विकसित करना (Developing Outline of Evaluation)-** प्रसार कार्यक्रम का उद्देश्य होता है, **''लोगों के ज्ञान, कौशल, व्यवहार में वांछित परिवर्तन लाना''**। यद्यपि लोगों के विचार, व्यवहार, ज्ञान, कौशल में परिवर्तन अन्य कारणों से भी आ सकते हैं जैसे-टी.वी. देखकर, पड़ोसियों से पूछकर, किसी अन्य से जानकारी प्राप्त कर आदि। अत: यदि प्रसार कार्यकर्त्ता यह जानना चाहता है कि उसके द्वारा चलाये गये कार्यक्रम से लोगों के व्यवहार, विचार, ज्ञान, कौशल, अभिवृत्ति में क्या वृद्धि हुई है तो इसके लिए कार्ययोजना की रूपरेखातैयार करनी

चाहिए। वह जिस गाँव में कार्यक्रम चलाना चाहता है, उसमें दो समूह बनाना चाहिए। एक समूह को वह कार्यक्रम की सम्पूर्ण जानकारी दे तथा लोगों को प्रशिक्षित करे तथा दूसरे समूह को वह कुछ भी जानकारी नहीं दे और न ही उन्हें कार्यक्रम के संबंध में कुछ बताये। उन्हें अपने ढंग से कार्य करने दे। उसके पश्चात् इन दोनों में तुलनात्मक अध्ययन किया जाए। तब प्रसार कार्यकर्त्ता को यह पता चल जाता है कि कार्यक्रम चलाने से लोगों को कितना फायदा हुआ है । उनके विचार, मनोवृत्ति,ज्ञान, कार्य कौशल एवं व्यवहार में कौन-कौन से परिवर्तन आये हैं ।

6. **उद्देश्यों की प्राप्ति को प्रमाणित करने हेतु आवश्यक आँकड़ों का निर्णय लेना(Decide on Necessary data for the Evidence of Achievement of Objectives) -** प्रसार कार्यक्रम के उद्देश्यों की प्राप्ति को प्रमाणित करने वाले आवश्यक आँकड़ों के संबंध में निर्णय लेना मूल्यांकन का एक अति महत्त्वपूर्ण चरण है। इसमें यह निर्णय लिया जाता है कि जो कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं वे उद्देश्य प्राप्ति की दिशा में सही ढंग से चल रहे हैं या नहीं। उदाहरणार्थ- यदि हमारा उद्देश्य ग्रामीण बालकों का स्वास्थ्य स्तर ज्ञात करना है तथा उनके स्वास्थ्य में सुधार हेतु पोषण कार्यक्रम चलाये जाने हैं तो इसके लिए यह जरूरी है कि कार्यक्रम आरम्भ करने से पूर्व बालकों की स्वास्थ्य जाँच की जाए कि कितने बच्चे कुपोषित है, कितने बच्चे गंभीर रोग से पीड़ित हैं, उनका वजन कितना है, लम्बाई कितनी है उनका सिर तथा बाँह की परिधिकितनी है, बालों एवं त्वचा का रंग कैसा है, वे किन-किन पोषणन्यूनता जनित रोगों से ग्रसित है, शिशु मृत्यु दर कितना है, आदि बातों को नोट करें। इसके लिए प्रश्नावली या अनुसूची तैयार करें। इसके पश्चात् पोषण कार्यक्रम चलायें तथा कार्यक्रम समाप्ति के बाद बालकों के स्वास्थ्य स्तर की जाँच करें। पहले जिन प्रश्नों के उत्तर चाहे गये थे, वे ही प्रश्नों के उत्तर पुन: प्राप्त करें। जैसे- बालकों की लम्बाई, वजन, सिर-बाँह की परिधि आदि को नोट करें। शिशु-मृत्यु

दर को नोट करें। इस प्रकार हमारे पास तुलनात्मक अध्ययन के लिये आवश्यक आँकड़ों उपलब्ध हो जाएँगे, जिसके आधार पर बालकों के स्वास्थ्य स्तर में सुधार की जानकारी हो जाएगी। आँकड़ों का चयन कार्यक्रम की प्रकृति पर निर्भर करता है। प्रसार कार्यकर्त्ता को कार्यक्रम के उद्देश्य तथा प्रकृति को ध्यान में रखकर ही आँकड़ों का चयन करना चाहिए।

7. **आँकड़ों को एकत्र करना (Collection of Data) -** प्रसार कार्यक्रम के उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए आँकड़ें एकत्रित करना चाहिए। आँकड़ों को एकत्रित करने के लिए प्रतिदर्श (Sample) का चयन सावधानी पूर्वक किया जाना चाहिए।

मूल्यांकन हेतु आँकड़े सही होने चाहिए। यदि आँकड़े सही होंगे तभी परिणाम भी सही होगा। यदि आँकड़े गड़बड़ होंगे तब सही परिणाम की आशा नहीं की जा सकती है। इसलिये प्रसार कार्यकर्त्ता को आँकड़ों को एकत्रित करते समय पूर्ण सावधानी बरतनी चाहिए।

8. **आँकड़ों का वर्गीकरण (Classification of Data) -** एकत्रित आँकड़ों को सही प्रकार से उनके प्रकार को ध्यान में रखते हुए क्रमबद्ध तरीके से वर्गीकृत करना चाहिए। इससे आँकड़ों को विश्लेषण एवं व्याख्या में सहायता मिलती है। इसके लिये मुख्य रूप से संकेतीकरण तथा सारणीकरण का प्रयोग किया जाता है। संकेतीकरण अंकों तथा वर्णों के आधार पर किया जा सकता है। सारणी में कई कॉलम होते हैं। प्रत्येक प्रश्नों के उत्तर को उनके कॉलम में लिखे जाते हैं। इस प्रकार आँकड़ों का वर्गीकरण किया जाता है।

9. **आँकड़ों का विश्लेषण एवं व्याख्या (Analysis and Interpretation of Data) -** जब आँकड़े वर्गीकृत कर लिये जाते हैं तो उनका विश्लेषण कम्प्यूटर द्वारा किया जाता हैं। कम्प्यूटर से विश्लेषण आसानी से हो जाता है। जबकि हाथ से करने से काफी समय की बर्बादी होती है, तत्पश्चात् व्याख्या की जाती है कि जो कार्यक्रम ग्रामीण विकास के लिए चलाये गये हैं

तथा जिन उद्देश्यों का निर्धारण हुआ है उनकी पूर्ति हुई है या नहीं। परन्तु आँकड़ों की व्याख्या उचित तरीके से सोच-समझकर किया जाना चाहिए। क्योंकि कई बार इसके दुरूपयोग होने की संभावना भी रहती है। इसलिये पहले इसका ‘‘सामान्यीकरण’’किया जाना चाहिए। तब इसकी व्याख्या करने वाले लोगों, कार्यक्रम नियोजन के सदस्यों के समक्ष प्रस्तुत किया जाना चाहिए ताकि सही ढंग से इसकी व्याख्या की जाए। जब इसकी व्याख्या में एकरूपता हो तभी इसे विशिष्ट बनाना चाहिए । मूल्यांकन के परिणामों में प्राप्ति सफलताओं, असफलाताओं आदि का वर्णन होना चाहिए। अत: मूल्यांकन का रिपोर्ट लिखित में होना चाहिए। ताकि इसे सभी के समक्ष रखा जा सके।

13.10 मूल्यांकन के लाभ

मूल्यांकन : मात्र एक नजर में
(Evaluation : At a Glance)

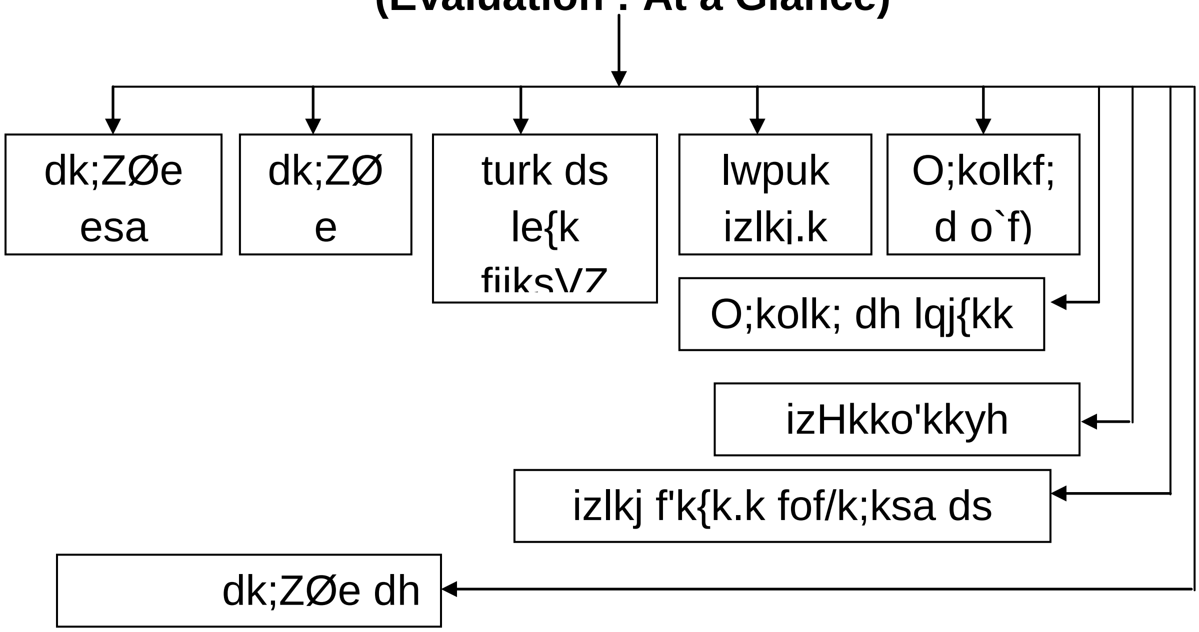

कार्यक्रम नियोजन में मूल्यांकन के लाभ निम्नानुसार है -

1. **कार्यक्रम में सुधार हेतु (Improvement in Programme)-** मूल्यांकन शैक्षिक प्रक्रिया का अभिन्न अंग है। यह कार्यक्रम की विधियों पर प्रकाश डालता है तथा उसे और भी अच्छा बनाने के लिए

प्रयासरत रहता है। प्रसार कार्यकर्त्ता के मन-मस्तिष्क में अनेक प्रश्न उठते रहते हैं जैसे- हम क्या करना चाहते हैं। हम क्या करने का प्रयत्न कर रहे है। हमें कितनी सफलता मिली है। हमें किस-किससे सहयोग मिला है। कार्यक्रम में क्या कमियाँ रह गई हैं? कौन-सी शिक्षण विधि अधिक प्रभावशाली रही है? कार्यक्रम कितने लोगों को लाभ हुआ है? भविष्य में इससे अच्छा कार्य कैसे कर सकते हैं? इन सभी प्रश्नों का उत्तर मूल्यांकन से प्राप्त हो जाता है। परिणामत: कार्यक्रम में सुधार होता है। इस प्रकार मूल्यांकन का उद्देश्य कार्यक्रम में निरंतर सुधार करना है।

2. **कार्यक्रम सम्पूर्णता (Programme Accomplishment) -** मूल्यांकन द्वारा किसी भी कार्य की प्रगति का पता लग जाता है। यह शैक्षिक प्रयासों के परिणामों को जानने में भी सहायक सिद्ध होता है। इसके माध्यम से कार्यक्रम में कमजोर तथा सबल पक्ष का ज्ञान हो जाता है। कमजोर तथा निर्बल पक्ष पर अधिक ध्यान देकर कार्यक्रम को और भी अधिक अच्छा बनाया जा सकता है।

3. **जनता के समक्ष रिपोर्ट करने में (Reporting to the Public)** मूल्यांकन से प्राप्त वास्तविक सूचनाओं तथा परिणामों को जनता, सांसद, विधानसभा के सदस्य, लोक सभा के सदस्य तथा स्थानीय नेताओं के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है। प्रसार कार्यक्रमों के बारे में समुदाय के संगठनों, व्यक्तियों तथा व्यावसायिक समूहों को निरंतर सूचित किया जाता है। जिससे उन्हें कार्यक्रम के हरेक चरण के बारे में निरंतर जानकारी मिलती रहती है। मूल्यांकन के आधार पर सरकार नवीन कार्यक्रमों का नियोजन कर सकती है।

4. **सूचना प्रसारण में (Extension Information) -** प्रसार कार्य से सम्बन्धित लोगों के लिए मूल्यांकन एक वरदान की तरह है। किसी भी क्षेत्र में हुए कार्यक्रम नियोजन की सफलता/असफलता का ज्ञान हो जाता है। कार्यक्रम के लाभ पक्ष का पता चल जाता है, जिसे समाचार-पत्रों, पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित किया जाता है।

5. **व्यावसायिक वृद्धि(Professional Growth) -** मूल्यांकन से हमारे ज्ञान, कार्यकुशलता एवं कौशल में वृद्धि होता है। यह हमें संकेत देता है कि हम किस प्रकार से अच्छे से अच्छा कार्य करके अधिक लाभ कमा सकते हैं। इससे हमारे कमियों के बारे में ज्ञात हो जाता है। जिसे दूर कर हम एक अच्छा व्यवसायी बन सकते हैं। इतना ही नहीं, यह लोगों के साथ मधूर संबंध स्थापित करने में भी सहायक होता है।

6. **व्यवसाय की सुरक्षा (Professional Success) -** मूल्यांकन से जो सूचनाएँ हमें मिलती हैं उससे हम संतुष्ट होते हैं। हमें सफलता का अहसास होता है तथा महसूस होता है कि हम सफलता की सीढ़ी पर चढ़ते हुए विकास का परचम लहरा रहे हैं। अत: इससे हमें व्यवसाय के प्रति विश्वास उपजता है। सुरक्षा मिलती है तथा मानसिक संतुष्टि मिलती है।

7. **प्रभावशाली कार्यकुशलता (Effective Workmanship) -** मूल्यांकन हमें मिल जुलकर कार्य करने की प्रेरणा देता हैं, जिससे हम सभी एक जुट होकर कार्य करते है तथा सफलता प्राप्त करते हैं। यह शैक्षिक कार्यक्रमों को अधिक प्रभावशाली बनाता है।

8. **प्रसार शिक्षण विधियों के परीक्षण में(Testing of Extension Teaching Mehtods)** - प्रसार कार्यक्रम के क्रियान्वयन में कौन-कौन सी शिक्षण विधियाँ अधिक प्रभावशाली रही हैं। किसका प्रभाव कम पड़ा है, आदि बातों की जानकारी भी मूल्यांकन से हो जाता है। अत: भविष्य में कार्यक्रम नियोजन करते समय समय उन प्रभावशाली शिक्षण विधियों का अधिक उपयोग किया जाता है।

9. **कार्यक्रम की विषयनिष्ठता (Objectivity of Programme) -** मूल्यांकन से कार्यक्रम की विषयनिष्ठता का ज्ञान हो जाता है कि कार्यक्रम जिस उद्देश्य के लिये बनाये गये थे उनकी पूर्ति किस सीमा तक हो पायी है। जब कार्यक्रम की उपलब्धियाँ उजागर होती हैं तो प्रसार कार्य से जुड़े लोगों का मनोबल ऊँचा होता है।

आत्मविश्वास उपजता है। कार्यक्षमता के प्रति विश्वास पैदा होता है। अत: मूल्यांकन से समस्त बातों की जानकारी हो जाती है।

13.11 मूल्यांकन के दोष व समस्याएँ

व्यवहारपरक विज्ञान में मूल्यांकन हेतु आँकड़ों का एकत्रीकरण तथा परिमाणन एक अत्यन्त ही चुनौती भरा कार्य होता है। मूल्यांकन करते समय विशेष सावधानी की आवश्यकता होती है। पूर्वाग्रहों, दुर्भावनापूर्ण, हीन भावनाओं तथा कुंठा से ग्रसित होकर जब मूल्यांकन किया जाता है तो उसका परिणाम सही नहीं रहता। अत: मूल्यांकन में गड़बड़ी हो जाती है। मूल्यांकन की प्रमुख समस्याएँ हैं-

1. किसी भी व्यक्ति के व्यवहार में आये परिवर्तनों को जाँचना एवं मूल्यांकन करना इतना सहज नहीं होता। ऊपर से वह भोलाभाला दिखता है परन्तु भीतर से अत्यंत ही छल- कपटपूर्ण। अत: जब ऐसे व्यक्ति को उसके समुदाय का प्रतिनिधि मानकर प्रतिदर्श के रूप में प्रयोग करता है तो मूल्यांकन में दोष आ जाता है।
2. प्रसार कार्यक्रम का प्रमुख उद्देश्य मानव व्यवहार में, वांछित परिवर्तन लाना है। मानव व्यवहार में अध्ययन के लिए प्रश्नावली, अनुसूची, साक्षात्कार, अवलोकन, स्कोर बोर्ड आदि का निर्णय स्वयं मूल्यांकन कर्त्ता द्वारा किया जाता है। अत: उसमें चूक होने की संभावना रहती है। जब मापन विधियाँ ही अशुद्ध होंगी तो परिणाम भी दोषपूर्ण होगा।
3. कुछ अशुद्धियाँ पूर्वाग्रहों, मनोवृत्ति परिवर्तन, (Change of Attitutdes) मनोदशा परिवर्तन, जैसे व्यक्तिगत कारणों से भी उत्पन्न होते हैं। अत: जब दो मूल्यांकनर्ता अपनी- अपनी दृष्टि से किसी एक व्यक्ति के व्यवहार का मूल्याकंन करते हैं तो उनका परिणाम भी भिन्न-भिन्न हो सकता है। किसी मूल्यांकनकर्त्ता में उस व्यक्ति की अच्छाई दिखाई देती है तो किसी में उसकी बुराई। दोनों के अध्ययन में उनका वैयक्तिक पूर्वाग्रह भी काम करता है। अत: यह मूल्यांकन कर्त्ता की मनोदशा पर निर्भर करता है।

4. तथ्यों का संकलन लोगों द्वारा दिये गये प्रत्युत्तरों पर आधारित होता है। यदि लोग सही सूचनाएँ नहीं देते हैं तो मूल्यांकन का परिणाम सही नहीं होता।

5. मानव व्यवहार में परिवर्तन के अनेक कारण होते हैं तथा उनमें निरंतर परिवर्तन होते रहता है। उसकी कार्यदक्षता, कार्य-निष्पादन शैली तथा जानकारियाँ आदि अनेक कारकों से प्रभावित होती हैं। इस पर नियंत्रण रखना मुश्किल होता है। अत: मानव व्यवहार का मूल्यांकन करते समय यह जानना कठिन हो जाता है कि व्यक्ति के व्यवहार में जो परिवर्तन आये हैं वे कार्यक्रम के कारण आये हैं अथवा अन्य किन्ही कारणों से।

6. तथ्यों के संकलन में कई समस्याएँ आती हैं, जैसे-लोगों को समय पर नहीं मिलना, पूछे गये प्रश्नों का जवाब नहीं देना, टाल देना, मना करना, कार्यक्रम में आदि से अंत तक भाग नहीं लेना, असहयोगात्मक रवैया अपनाना आदि बातें मूल्यांकन में समस्याएँ पैदा करती है।

7. परिमाणात्मक मापन परिमाणन (Quantification)कहलाता है। परिमाणन के लिए अंक-संकेतों, तथा संख्याओं का उपयोग करके यह जाना जाता है कि किसी वस्तु में उसके अच्छे गुणों की कितनी मात्रा उपलब्ध है। अत: जब गुणात्मक उपलब्धियों को संख्यात्मक सूचकांकों के रूप में प्रस्तुत किया जाता है तो त्रुटि होने की संभावना रहती है।

13.12 सारांश

मूल्यांकन अत्यंत ही आवश्यक प्रक्रिया है जिसके द्वारा हमारे कार्य की समीक्षा की जा सकती है। मूल्यांकन हमारे भविष्य में होने वाले कार्यकलापों को निर्धारित करने एवं दिशा प्रदान करने में सहयोग करता है। मूल्यांकन के बिना हम किसी भी प्रसार शिक्षण कार्यक्रम के क्रियान्वयन का विचार भी नहीं कर सकते हैं।

13.13 अभ्यास प्रश्न

प्र. 1 मूल्यांकन का शाब्दिक अर्थ बताते हुए दो परिभाषाएँ लिखें।

प्र. 2 मूल्यांकन के उद्देश्यों का संक्षिप्त में वर्णन करें।
प्र. 3 मूल्यांकन के लक्ष्य कौन से है?
प्र. 4 मूल्यांकन के चरणों को रेखाचित्र बनाकर समझाएँ।
प्र. 5 मूल्यांकन के दोष व समस्याओं का उल्लेख करें।
प्र. 6 मूल्यांकन के प्रकारों को रेखाचित्र से समझाते हुए, दिन-प्रतिदिन मूल्यांकन को विस्तार से समझाइए।

13.14 संदर्भ ग्रंथ

- प्रसार शिक्षा- डॉ. वृन्दा सिंह
- प्रसार शिक्षा- गीता पुष्प शॉ, जॉयस शीला शॉ तथा रॉबिन शॉ पुष्प
- प्रसार शिक्षा के नये आयाम- डॉ. पी.एन. कल्ला एवं डॉ. (श्रीमती) अचला गक्खड़

अध्याय14

जन एवं सामुदायिक संचार

14.0 उद्देश्य
14.1 प्रस्तावना
14.2 संचार की परिभाषा
14.3 संचार माध्यमों कि प्रकृति
14.4 संचार के माध्यम
14.5 दूरदर्शन
14.6 वी सी डी/डी.वी.डी.
14.7 टेप रिकार्डर
14.8 होम थियेटर
14.9 टेलीफोन
14.10 प्रश्न
14.11 सन्दर्भ ग्रन्थ

14.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययनोंपरांत विद्यार्थी-

1. संचार की परिभाषा को समझ सकेंगे
2. दूरदर्शन के बारे में जानकारी प्राप्त होगी
3. टेप रिकार्डर, होम थियेटर, टेलीफोन, वी सी डी के बारे में जान सकेंगे

14.1 प्रस्तावना

प्रगति के पथ पर मानव बहुत दूर चला आया है। जीवन के हर क्षेत्र में कई ऐसे मुकाम प्राप्त हो गये हैं जो हमें जीवन की सभी सुविधाएँ, सभी आराम प्रदान करते हैं। आज संसार मानव की मुट्ठी में समाया हुआ है। जीवन के क्षेत्रों में सबसे अधिक क्रांतिकारी कदम संचार क्षेत्र में उठाए गये हैं। अनेक नये स्रोत, नए साधन और नई सुविधाएँ प्राप्त कर ली गई हैं जो हमें आधुनिकता के दौर में काफ़ी ऊपर ले जाकर खड़ा करता है। वर्तमान काल के समाजों की जटिलता और जनमत को दिशा प्रदान करने में संचार माध्यमों की केंद्रीय भूमिका इस बात का कारण बनी है कि इन्हें सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनैतिक व सामरिक क्षेत्रों में पहले से अधिक प्रयोग किया जाए।

संचार माध्यमों से सकारात्मक और नकारात्मक दोनों प्रकार के काम लिए जा सकते हैं। अर्थात संचार माध्यमों से लाभ उठा कर जहां समाज में मज़बूत भावनाएं व गतिशीलता उत्पन्न की जा सकती है, सार्वजनिक संस्कृति का आधार रखा जा सकता है तथा जनमत को शिक्षित किया जा सकता है, वहीं संचार माध्यमों द्वारा समाज में असुरक्षा का झूठा वातावरण उत्पन्न किया जा सकता है, लोगों को मुख्य एवं ज़मीनी तथ्यों से दूर किया जा सकता है, वास्तविकताओं को उलट कर प्रस्तुत किया जा सकता है तथा समाज को बुराई व अनैतिकता में ग्रस्त किया जा सकता है। इस समय अधिकांश इलैक्ट्रानिक व प्रिंट मीडिया तथा उनके सांस्कृतिक उत्पाद, ऐसे लोगों के हाथ में है जिन्होंने इस क्षेत्र में भारी निवेश किया है और वे अपने आपको इस बात का अधिकार देते हैं कि अपने भौतिक व अभौतिक लक्ष्यों के अनुसार, मीडिया को प्रयोग

करें। वस्तुतः इस समय बहुत से संचार माध्यम व्यवहारिक रूप से वर्चस्ववादी व्यवस्था की सेवा में लगे हुए हैं।

संचार माध्यम

से आशय है संदेश के प्रवाह में प्रयुक्त किए जाने वाले माध्यम। संचार माध्यमों के विकास के पीछे मुख्य कारण मानव की जिज्ञासु प्रवृत्ति का होना है। वर्तमान समय में संचार माध्यम और समाज में गहरा संबन्ध एवं निकटता है। इसके द्वारा जन सामान्य की रूचि एवं हितों को स्पष्ट किया जाता है। संचार माध्यमों ने ही सूचना को सर्वसुलभ कराया है। तकनीकी विकास से संचार माध्यम भी विकसित हुए हैं तथा इससे संचार अब ग्लोबल फेनोमेनो बन गया है।

संचार माध्यम, अंग्रेजी के "मीडिया" (मिडियम का बहुवचन) से बना है, जिसका अभिप्राय होता है दो बिंदुओं को जोड़ने वाला। संचार माध्यम ही संप्रेषक और श्रोता को परस्पर जोड़ते हैं। हेराल्ड लॉसवेल के अनुसार, संचार माध्यम के मुख्य कार्य सूचना संग्रह एवं प्रसार, सूचना विश्लेषण, सामाजिक मूल्य एवं ज्ञान का संप्रेषण तथा लोगों का मनोरंजन करना है।

संचार माध्यम का प्रभाव समाज में अनादिकाल से ही रहा है। परंपरागत एवं आधुनिक संचार माध्यम समाज की विकास प्रक्रिया से ही जुड़े हुए हैं। संचार माध्यम का श्रोता अथवा लक्ष्य समूह बिखरा होता है। इसके संदेश भी अस्थिर स्वभाव वाले होते हैं। फिर संचार माध्यम ही संचार प्रक्रिया को अंजाम तक पहुँचाते हैं।

संचार शब्द अंग्रेजी के कम्युनिकेशन का हिन्दी रूपांतर है जो लैटिन शब्द कम्युनिस से बना है, जिसका अर्थ है सामान्य भागीदारी युक्त सूचना। चूंकि संचार समाज में ही घटित होता है, अत: हम समाज के परिप्रेक्ष्य से देखें तो पाते हैं कि सामाजिक संबन्धों को दिशा देने अथवा निरंतर प्रवाहमान बनाए रखने की प्रक्रिया ही संचार है। संचार समाज के आरंभ से लेकर अब तक के विकास से जुड़ा हुआ है।

14.2 संचार की परिभाषा

जिस तरह से प्राणवायु के बिना मनुष्य जिंदा नहीं रह सकता ठीक उसी तरह संचार के बिना जीवन संभव नहीं है। मनुष्य कुछ सोचता है वह भी संचार है। आदमी भोजन करना तभी पसंद करता है जब उसे भूख की अनुभूति होती है। भूख की अनुभूति भी संचार है। दरअसल मनुष्य रात को सपना देखता है या कुछ अपने में विचार करता है उस दौरान वह व्यक्ति खुद से संचार करता है।

जब दो या दो से अधिक व्यक्ति आपस में कुछ सार्थक चिह्नों, संकेतों या प्रतीकों के माध्यम से विचारों या भावनाओं का आदान-प्रदान करते हैं तो उसे संचार कहते हैं।

संचार का सामान्य अर्थ किसी सूचना या संदेश को एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक पहुंचाना या सम्प्रेषित करना है। शाब्दिक अर्थ की आगर बात करें तो संचार अंग्रेजी के Communication शब्द का हिन्दी अनुवाद है। जो लैटिन भाषा के Communis शब्द से बना है, इसका अर्थ होता है सामान्य (Commun).

संचार शब्द के तात्पर्य की बात करें तो सूचना देने वाले संचारक (Sender) और सूचना ग्रहण करने वाले प्राप्तक (Receiver) के मध्य उभयनिष्ठता स्थापित करने से है।

दूसरे शब्दों में संचार एक ऐसी कला है जिससे एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के विचारों, भावनाओं में सहभागी बनता है।

संचार को कई विशेषज्ञों ने परिभाषित करने की कोशिस की है, लेकिन किसी एक परिभाषा पर सर्वसम्मत नहीं बन सकी है। कुछ प्रचलित परिभाषाएं निम्न हैं-

ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी के अनुसार- विचारों, जानकारी वगैरह का विनिमय, किसी और तक पहुंचाना या बांटना, चाहे वह लिखित, मौखिक या सांकेतिक हो, संचार है।

चार्ल्स ई. ऑसगुड के अनुसार- आम तौर पर संचार तब होता है, जब एक सिस्टम या स्रोत किसी दूसरे या गंतव्य को विभिन्न प्रकार के संकेतों के माध्यम से प्रभावित करें ।

लुईस ए. एलेन के अनुसार- संचार उन सभी क्रियाओं का योग है जिनके द्वारा एक व्यक्ति दूसरे के साथ समझदारी स्थापित करना चाहता है। संचार अर्थों का एक पुल है। इसमें कहने, सुनने और समझने की एक व्यवस्थित तथा नियमित प्रक्रिया शामिल है।

कैथ डैविस के अनुसार- एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को सूचना भेजने तथा समझने की विधि है। यह आवश्यक तौर पर लोगों में अर्थ का एक पुल है। पुल का प्रयोग करके एक व्यक्ति आराम से गलत समझने की नदी को पार कर सकता है।

ऐलन के अनुसार- संचार से तात्पर्य उन समस्त तरीकों से है, जिनको एक व्यक्ति अपनी विचारधारा को दूसरे व्यक्ति की मस्तिष्क में डालने या समझाने के लिए अपनाता है। यह वास्तव में दो व्यक्तियों के मस्तिष्क के बीच की खाई को पाटने वाला सेतु है। इसके अंतर्गत् कहने, सुनने तथा समझने की एक वैज्ञानिक प्रक्रिया सदैव चालू रहती है।

मैकडेविड और हरारी के अनुसार- मनोवैज्ञानिक दृष्टि से संचार से तात्पर्य व्यक्तियों के बीच विचारों और अभिव्यक्तियों के आदान-प्रदान से है।

क्रच एवं साथियों के अनुसार- किसी वस्तु के विषय में समान या सहभागी ज्ञान की प्राप्ति के लिए प्रतीकों का उपयोग ही संचार है। यद्यपि मनुष्यों में संचार का महत्वपूर्ण माध्यम भाषा ही है, फिर भी अन्य प्रतीकों का प्रयोग हो सकता है।

प्रसिद्ध संचारवेत्ता डेनिस मैक्केल के अनुसार, " एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक अर्थपूर्ण संदेशों का आदान प्रदान है।

डॉ. मरी के मत में, "संचार सामाजिक उपकरण का सामंजस्य है।"

लीगैन्स की शब्दों में, " निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है। यह प्रक्रिया निरंतर अन्तक्रिया से चलती रहती है और इसमें अनुभवों की साझेदारी होती है।"

राजनीति शास्त्र विचारक लुकिव पाई के विचार में, " सामाजिक प्रक्रियाओं का विश्लेषण ही संचार है ।"

इस प्रकार संचार के संबन्ध में कह सकते हैं कि इसमें समाज मुख्य केन्द्र होता है जहाँ संचार की प्रक्रिया घटित होती है। संचार की प्रक्रिया को किसी दायरे में बांधा नहीं जा सकता। फिर संचार का लक्ष्य ही होता है- सूचनात्मक, प्रेरणात्मक, शिक्षात्मक व मनोरंजनात्मक।

संचार प्रक्रिया में शामिल लोगों की संख्या के आधार पर संचार मुख्यत: चार प्रकार का होता है :-

- अंत) वैयक्तिक संचार :Intrapersonal Communication)
- अंतर वैयक्तिक संचार)Interpersonal Communication)
- समूह संचार)Group communication)
- जनसंचार)Mass Communication)

1. अंत: वैयक्तिक संचार (Intrapersonal Communication):– यह संचार की वह प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति खुद से संचार करता है अथार्त इसकी परिधि में व्यक्ति स्वयं होता है। दरअसल यह एक मनोवैज्ञानिक क्रिया है जिसमें मानव व्यक्तिगत चिंतन-मनन करता है। इसमें संचारक और प्राप्तक दोनों की भूमिका एक ही व्यक्ति को निभानी पड़ती है। अगर कोई व्यक्ति स्वप्न देखता है या कुछ सोचता है तो वही भी अंत:वैयक्तिक संचार के अंतर्गत आता है। इसके अंतर्गत् मानव अपनी केंद्रीय स्नायु-तंत्र (Central Nervous System) तथा बाह्य स्नायु-तंत्र (Perpheral Nervous System) का प्रयोग करता है। केंद्रीय स्नायु-तंत्र में मस्तिष्क आता है, जबकि बाह्य स्नायु-तंत्र में शरीर के अन्य अंग। हम यह कह सकते हैं कि जो व्यक्ति अंत:वैयक्तिक संचार नहीं करता है वो पागल है।

विशेषताएं :

अंत: वैयक्तिक संचार की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं :-

1.इससे मानव स्वयं को संचालित करता है तथा अपने जीवन की योजनाओं को तैयार करता है।

मानव सुख-दुख का एहसास करता है।

2. अपने जीवन के लिए उपयोगी तथा आवश्यक आयामों का आविष्कार करता है,

3. दिल और दिमाग पर नियंत्रण रखता है, और

4. फीडबैक व्यक्त करता है।

2. अंतर वैयक्तिक संचार(Interpersonal Communication)

संचार की वह प्रक्रिया जिसमें 2 लोग शामिल होते हैं। जब 2 लोग आपस में भावनाओं और विचारों का आदान प्रदान करते हैं तो उसे अंतरवैयक्तिक संचार कहते हैं। यह आमने-सामने होता है। यह दो-तरफा (Two-way) प्रक्रिया है। यह कहीं भी स्वर, संकेत, शब्द, ध्वनि, संगीत, चित्र, नाटक इत्यादि के रूप में हो सकता है। इसमें फीडबैक तुरंत और सबसे बेहतर मिलता है। उदाहरण के तौर पर किसी मासूम बच्चा को ही ले लीजिए, जो नवजात से जैसे-जैसे बड़ा होता है, वैसे-वैसे समाज के सम्पर्क में आता है और अंतर वैयक्तिक संचार को अपनाने लगता है। माता-पिता के बुलाने पर उसका हंसना, बोलना या भागना अंतर वैयक्तिक संचार का प्रारंभिक उदाहरण है। इसके बाद वह ज्यों-ज्यों किशोरावस्था की ओर बढ़ता है, त्यों-त्यों भाषा, परम्परा, अभिवादन आदि अंतर वैयक्तिक संचार प्रक्रिया से सीखने लगता है। पास-पड़ोस के लोगों से जुडने में भी अंतर वैयक्तिक संचार की महत्वपूर्ण भूमिका होती हैं। साक्षात्कार, कार्यालयी वार्तालाप, समाचार संकलन इत्यादि अंतर वैयक्तिक संचार का उदाहरण है।

विशेषताएं : अंतर वैयक्तिक संचार बेहद आंतरिक संचार है, जिसके कारण

(1) फीडबैक तुरंत तथा बेहतर मिलता है।

(2) बाधा आने की संभावना कम रहती है।

(3) संचारक और प्राप्तक के मध्य सीधा सम्पर्क और सम्बन्ध स्थापित होता है।

(4) संचारक के पास प्राप्तक को प्रभावित करने के लिए पर्याप्त अवसर होता है।

(5) संचारक और प्राप्तक शारीरिक व भावनात्मक दृष्टि से एक-दूसरे के करीब होते हैं।

(6) किसी बात पर असहमति की स्थिति में प्राप्तक को हस्तक्षेप करने का मौका मिलता है।

(7) प्राप्तक के बारे में संचारक पहले से बहुत कुछ जानता है।

(8) संदेश भेजने के अनेक तरीके होते हैं। जैसे- भाषा, शब्द, चेहरे की प्रतिक्रिया, भावभंगिमा, हाथ पटकना, आगे-पीछे हटना, सिर झटकना इत्यादि।

3. समूह संचार (Group Communication)- नाम से ही स्पष्ट है कि वह संचार जो समूह में किया जाता है समूह संचार कहलाता है। समूह संचार को समझने के लिए आइए सबसे पहले आपको बताते हैं कि समूह क्या है? मनुष्य अपने जीवन में किसी समूह का सदस्य अवश्य होता है। अपनी आवश्यकतओं की पूर्ति के लिए नये समूहों का निर्माण भी करता है। समूहों से पृथक होकर मानव अलग-थलग पड़ जाता है। समूह में जहां व्यक्तित्व का विकास होता है, वहीं सामाजिक प्रतिष्ठा बनती है। समूह के माध्यम से एक पीढ़ी के विचार दूसरे पीढ़ी तक स्थानांतरित होता है। जब कुछ लोग किस उद्देश्य के लिए एक-दूसरे से पारस्परिक सम्पर्क बनाते हैं और एक दूसरे को जानते पहचानते हैं तो उसे एक समूहकहते हैं।
अत: जब 2 से अधिक व्यक्ति आपस में भावनाओं और विचारों का आदान प्रदान करते हैं तो उसे समूह संचार कहते हैं। उदाहरण के लिए क्लासरूम में पढ़ाई, एक साथ किसी बात पर हंसना, कवि सम्मेलन, भाषण यह सब समूह संचार का ही उदाहरण है।

विशेषताएं : समूह संचार में :-

1.प्राप्तकों की संख्या निश्चित होती है, सभी अपनी इच्छा व सामर्थ के अनुसार सहयोग करते हैं,
2. सदस्यों के बीच समान रूप से विचारों, भावनाओं का आदान-प्रदान होता है,
3. संचारक और प्राप्तक के बीच निकटता होती है,
4. विचार-विमर्श के माध्यम से समस्याओं का समाधान किया जाता है,
5. संचारक का उद्देश्य सदस्यों के बीच चेतना विकसित कर दायित्व बोध कराना होता है,
6. फीडबैक समय-समय पर सदस्यों से प्राप्त होता रहता है, और
7. समस्या के मूल उद्देश्यों के अनुरूप संदेश सम्प्रेषित किया जाता है।

जनसंचार (Mass Communication) - जनसंचार 2 शब्दों से मिलकर बना है। जन+संचार के योग से हुआ है। जन का अर्थ भीड़ होता है। समूह संचार का वृहद रूप है- जनसंचार। जिस तरह से न्यूज पेपर, रेडियो, टेलीविजन, केबल, इंटरनेट, वेब पोर्टल्स का प्रयोग बढ़ता गया, ठीक उसी तरह जनसंचार के क्षेत्र का विस्तार होता गया।

जनसंचार को अंग्रेजी भाषा Mass Communication कहते हैं, जिसका अभिप्राय बिखरी हुई जनता तक संचार माध्यमों की मदद से सूचना को पहुंचाना है। समाचार पत्र, टेलीविजन, रेडियो, सिनेमा, केबल, इंटरनेट, वेब पोर्टल्स इत्यादि अत्याधुनिक संचार माध्यम हैं। जनसंचार का अर्थ विशाल जनसमूह के साथ संचार करने से है। दूसरे शब्दों में, जनसंचार वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा बहुल रूप में प्रस्तुत किए गए संदेशों को जन माध्यमों के जरिए एक-दूसरे से अंजान तथा विषम जातीय जनसमूह तक सम्प्रेषित किया जाता है।

जनसंचार की निम्नलिखित विशेषताएं निम्नलिखित हैं :-

1. विशाल भू-भाग में रहने वाले प्राप्तकों से एक साथ सम्पर्क स्थापित होता है,
2. समस्त प्राप्तकों के लिए संदेश समान रूप से खुला होता है,
3. संचार माध्यम की मदद से संदेश का सम्प्रेषण किया जाता है,

4. सम्प्रेषण के लिए औपचारिक व व्यवस्थित संगठन होता है,
5. संदेश सम्प्रेषण के लिए सार्वजनिक संचार माध्यम का उपयोग किया जाता है,
6. प्राप्तकों के विजातीय होने के बावजूद एक ही समय में सम्पर्क स्थापित करना संभव होता है,
7. संदेश का यांत्रिक रूप से बहुल संख्या में प्रस्तुतिकरण या सम्प्रेषण होता है, तथा
8. फीडबैक संचारक के पास विलम्ब से या कई बार नहीं भी पहुंचता है।

14.3 संचार माध्यमों की प्रकृति

भारत में प्राचीन काल से ही संचार माध्यमों का अस्तित्व रहा है। यह अलग बात है कि उनका रूप अलग-अलग होता था। भारत में संचार सिद्धान्त काव्य परपंरा से जुड़ा हुआ है। साधारीकरण और स्थायीभाव संचार सिद्धान्त से ही जुड़े हुए हैं। संचार मुख्य रूप से संदेश की प्रकृति पर निर्भर करता है। फिर जहाँ तक संचार माध्यमों की प्रकृति का सवाल है तो वह संचार के उपयोगकर्ता के साथ-साथ समाज से भी जुड़ा होता है। चूंकि हम यह भी पाते हैं कि संचार माध्यम समाज की भीतर की प्रक्रियाओं को ही उभारते हैं। निवर्तमान शताब्दी में भारत के संचार माध्यमों की प्रकृति व चरित्र में बदलाव भी हुए हैं लेकिन प्रेस के चरित्र में मुख्यत: तीन-चार गुणात्मक परिवर्तन दिखाई देते हैं-

पहला : शताब्दी के पूर्वाद्ध में इसका चरित्र मूलत: मिशनवादी रहा, वजह थी स्वतंत्रता आंदोलन व औपनिवेशिक शासन से मुक्ति। इसके चरित्र के निर्माण में तिलक, गांधी, माखनलाल चतुर्वेदी, विष्णु पराडकर, माधवराव सप्रे जैसे व्यक्तित्व ने योगदान किया था।

दूसरा : 15 अगस्त 1947 के बाद राष्ट्र के एजेंडे पर नई प्राथमिकताओं का उभरना। यहाँ से राष्ट्र निर्माण काल आरंभ हुआ और प्रेस भी इसके संस्कारों से प्रभावित हुआ। यह दौर दो दशक तक चला।

तीसरा : सातवें दशक से विशुद्ध व्यावसायिकता की संस्कृति आरंभ हुई। वजह थी राजनीतिक महत्वाकांक्षाओं का विस्फोट।

चौथा : अन्तिम दो दशकों में प्रेस का आधुनिकीकरण हुआ, क्षेत्रीय प्रेस का एक `शक्ति` के रूप में उभरना और पत्र-पत्रिकाओं से संवेदनशीलता एवं दृष्टि का विलुप्त होना।

इसके इतर आज तो संचार माध्यमों की प्रकृति अस्थायी है। इसके अपने वाजिब कारण भी हैं हालांकि इसके अलावा अन्य मकसद से भी संचार माध्यम बेतुकी ख़बरें व सूचनाएं सनसनीखेज तरीके से परोसने लगे हैं।

14.4 संचार के माध्यम

संचार माध्यम को अंग्रेजी मे Communication Medium संचार माध्यम का प्रभाव समाज में अनादिकाल से ही रहा है। संचार माध्यम स्रोत एवं श्रोता के मध्य एक मध्य-स्थल दृश्य है जो मुख्यत: सूचना को संचारक से लेता है तथा प्राप्तक को देता है। प्रकृति के आधार पर संचार माध्यमों का वर्गीकरण निम्नलिखित है :-

- **परम्परागत माध्यम :** संचार के परम्परागत माध्यम का उद्भव अनादिकाल में ही हो गया था। तब मानव संचार का अर्थ तक नहीं जानता था। सभ्यता के विकास से मुद्रण के आविष्कार तक परम्परागत माध्यमों से ही संदेश का सम्प्रेषण (संचार) होता था। इन माध्यमों द्वारा सम्प्रेषित संदेश का प्रभाव समाज के साक्षर और निरक्षर दोनों तरह के लोगों पर होता था। इसके अंतर्गत धार्मिक प्रवचन, हरिकथा, सभा, पर्यटन, गारी, गीत, संगीत, लोक संगीत, नृत्य, रामलीला, रासलीला, कठपुतली, कहानी, कथा, किस्सा, मेला, उत्सव, चित्र, शीला-लेख, संकेत इत्यादि आते हैं। इस प्रकार के परम्परागत माध्यम अनादिकाल से ही संदेश सम्प्रेषण के साथ मनोरंजन का कार्य भी करते आ रहे हैं। दंगल (कुश्ती), खेलकूद, लोकगीत प्रतियोगिता के आयोजन के

पीछे प्रतिभाओं को प्रोत्साहन देने के साथ-साथ लोगों के समक्ष स्वस्थ्य मनोरंजन प्रस्तुत करना था।

- **मुद्रित माध्यम :** जर्मनी के जॉन गुटेनवर्ग ने टाइप का निर्माण किया, जो मुद्रण (प्रिंटिंग प्रेस) का आधार बना है। मुद्रण के आविष्कार के बाद संचार के क्षेत्र में क्रांति आ गयी। हालांकि इससे पूर्व हस्तलिखित पत्रों के माध्यम से सूचना सम्प्रेषण का कार्य प्रारंभ हो चुका था, लेकिन उसकी पहुंच कुछ सीमित लोगों तक ही थी। मुद्रित माध्यम के प्रचलन के बाद संचार को मानो पर लग गया। प्रारंभ में मुद्रित माध्यम के रूप में केवल पुस्तक को प्रचलन था, किन्तु बाद मंह समाचार पत्र, पत्रिका, पम्पलेट, पोस्टर इत्यादि मुद्रित माध्यम के रूप में संचार का कार्य करने लगे। वर्तमान समय में भी शिक्षित जनमानस के बीच मुद्रित माध्यमों का काफी प्रचलन है। मुद्रण तकनीकी के क्षेत्र में लगातार हो रहे विकास ने मुद्रित माध्यमों को पहले की अपेक्षा काफी अधिक प्रभावी बना दिया है। मुद्रित माध्यमों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इनके संदेश को कई बार पढ़ा, दूसरो को पढ़ाया तथा साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत करने के लिए सुरक्षित रखा जा सकता है।
- **इलेक्ट्रॉनिक माध्यम :** टेलीग्राफ के आविष्कार से संचार को इलेक्ट्रानिक माध्यम मिल गया। इसकी मदद से दूर-दराज के क्षेत्रों में त्वरित गति से सूचना का सम्प्रेषण संभव हो सकता। इसके बाद क्रमश: टेलीफोन, रेडियो, वापरलेस, सिनेमा, टेप रिकार्डर, टेलीविजन, वीडियो कैसेट रिकार्डर, कम्प्यूटर, मोडम, इंटरनेट, सीडी/डीवीडी प्लेपर, पॉडकास्टर इत्यादि के आविष्कार से संचार क्रांति आ गई। इलेक्ट्रॉनिक संचार माध्यमों को उनकी प्रकृति के आधार पर श्रव्य और दृश्य-श्रव्य माध्यमों में विभाजित किया जा सकता है। श्रव्य माध्यम के अंतर्गत टेलीफोन, रेडियो, वापरलेस, टेपरिकार्डर इत्यादि तथा दृश्य-श्रव्य माध्यम के अंतर्गत सिनेमा, टेलीविजन, वीडियो कैसेट प्लेपर,

सीडी/डीवीडी प्लेपर इत्यादि आते हैं। इलेक्ट्रॉनिक संचार माध्यम को द्रूतगति का संचार माध्यम भी कहते हैं। इनकी मदद से लाखों-करोड़ों की संख्या वाले तथा दूर-दूर तक बिखरे लोगों के पास सूचना का सम्प्रेषण संभव हो सका है।

संचार के उपरोक्त तीनों माध्यम मानव सभ्यता के विकास का परिचायक है। तीनों की अपनी- अपनी विशेषताएं है। संचार क्रांति के मौजूदा युग में भी परम्परागत माध्यम अपने अस्तित्व को बनाए रखने में सक्षम है, क्योंकि मुद्रित माध्यम माध्यम की केवल पढ़े-लिखे तथा इलेक्ट्रॉनिक की केवल साधन सम्पन्न समाज के बीच लोकप्रियता है। इसका सबसे बड़ा कारण यह है कि भारत गांवों का देश है, जहां की 70 फीसदी आबादी की अर्थव्यवस्था का प्रमुख साधन खेती-

किसानी है। गांवों की हालात 21वीं शताब्दी के दूसरे दशक में भी संतोष जनक नहीं है। कमोवेश यहीं स्थिति तीसरी दुनिया के अधिकांश देशों की है।

14.5 दूरदर्शन

दूरदर्शन एक ऐसी दूरसंचार प्रणाली है जिसके द्वारा चलचित्र व ध्वनि को दो स्थानों के बीच प्रसारित व प्राप्त किया जा सके। यह शब्द दूरदर्शन सेट, दूरदर्शन कार्यक्रम तथा प्रसारण के लिये भी प्रयुक्त होता है। दूरदर्शन का अंग्रेजी शब्द 'टेलीविजन' लैटिन तथा यूनानी शब्दों से बनाया गया है जिसका अर्थ होता है दूर दृष्टि (यूनानी - टेली = दूर, लैटिन - विज़न = दृष्टि)। दूरदर्शन सेट १९३० के उत्तरार्ध से उपलब्ध रहे हैं और समाचार व मनोरंजन के स्रोत के रूप में शीघ्र ही घरों व संस्थाओं में आम हो गये। १९७० के दशक से वीसीआर टेप और इसके वाद वीसीडी व डीवीडी जैसे अंकीय प्रणालियों के द्वारा रिकार्ड किये कार्यक्रम व सिनेमा देखना भी सम्भव हो गया।

भारत में दूरदर्शन प्रसारण का प्रारम्भ १५ सितंबर, १९५९ में हुआ जब एक प्रायोगिक परियोजना के रुप में दिल्ली में दूरदर्शन केन्द्र खोला गया तथा दूरदर्शन नाम से सरकारी दूरदर्शन चैनल की नींव पड़ी।

दूरदर्शन मेंउपग्रह तकनीक का प्रयोग १९७५-१९७६ में प्रारम्भ हुआ। दूरदर्शन की शुरुआत अत्यंत विनीत तरीके से, एक परीक्षण के तौर पर दिल्ली में 1959 में हुई थी। नियमित दैनिक प्रसारण की शुरुआत 1965 में आल इंडिया रेडियों के एक अंग के रूप में हुई थी। 1972 में सेवा मुम्बई (तत्कालीन बंबई) व अमृतसर तक विस्तारित की गई। 1975 तक यह सुविधा 7 शहरों मे शुरु हो गयी थी। राष्ट्रीय प्रसारण 1982, जिस वर्ष रंगीन दूरदर्शन का जन-जन से परिचय हुआ था, शुरु हुआ था।

दूरदर्शन भारत का सरकारी दूरदर्शन प्रणाली (चैनल) है। यह भारत सरकार द्वारा नामित प्रसार भारती के अंतर्गत चलाया जाता है। दूरदर्शन के प्रसारण की शुरूआत भारत में दिल्ली सितंबर, 1959 को हुई। प्रसार-कक्ष तथा प्रेषित्रो की आधारभूत सेवाओं के लिहाज़ से यह विश्व का दूसरा सबसे विशाल प्रसारक है। हाल ही मे इसने अंकीय पार्थिव प्रेषित्रो(डिजिटल स्थलचर संचारी (Digital Terrestrial Transmitters)) सेवा शुरु की। दूरदर्शन के राष्ट्री य नेटवर्क में 64 दूरदर्शन केन्द्र / निर्माण केन्द्रव, 24 क्षेत्रीय समाचार एकक, 126 दूरदर्शन रखरखाव केन्द्र, 202 उच्चु शक्ति ट्रांसमीटर, 828 लो पावर ट्रांसमीटर, 351 अल्प शक्ति ट्रांसमीटर, 18 ट्रांसपोंडर, 30 चैनल तथा डीटीएच सेवा भी शामिल है।

14.6 वी सी डी/ डी.वी.डी.

सीडी का हम काम्पैवक्टर डिस्कन के नाम से भी पुकारते हैं ये एक ऐसा ऑप्टिरकल मीडियम होता है जो हमारे डिजिटल डेटा का सेव करता है। एक समय था जब हम रील वाले कैसेट प्रयोग करते थी, सीडी के अर्विष्का र ने ही बाजार में कैसेटों को पूरी तरह से खत्म कर दिया। एक स्टैण्डर्ड सीडी में करीब 700 एमबी का डेटा सेव किया जा सकता है। सीडी में डेटा डॉट के फार्म में सेव होता है, दरअसल सीडी ड्राइव में लगा हुआ लेजर सेंसर सीडी के डॉट से रिफलेक्टड लाइट का पढ़ता है और हमारी डिवाइस में इमेज क्रिएट करता है।

डी.वी.डी.

डीवीडी यानी डिजिटल वर्सटाइल डिस्क, सीडी के बाद डीवीडी का आगाज हुआ वैसे तो देखने में दोनों सीडी और डीवीडी दोनों एक ही जैसे लगते है मगर इनकी डेटा कैपसेटी में अंतर होता है सीडी के मुकाबले डीवीडी में ज्यादा डेटा सेव किया जा सकता है। मतलब डीवीडी में यूजर करीब 4.7 जीबी से लेकर 17 जीबी तक डेटा सेव कर सकता है। डीवीडी के आने के बाद बाजार में सीडी की मांग में भारी कमी देखी गई।

14.7 टेप रिकार्डर

टेप रिकार्डर का सर्व प्रथम निर्माण कोपेन हेगेन के वाल्देमोर ने सन 1899 में किया था। इसमें दो डिब्बीयां होती है जिनके उपर स्टील का तार अथवा किट लिप्त रहता है । बोलने वाले के आवाज रिकॉर्ड करने के लिए माइक्रोफोन के सामने बोलना पड़ता है ।टेप रिकार्डर के इस प्रारम्भिक रूप को टेलिग्राफोंन कहा जाता था ।

जर्मनी के एक आविष्कारक फल्युमर ने सन 1929 में चुम्बकीय टेप का विकास करके इस क्षेत्र में एक नई क्रांति को जन्म दे दिया ।इसके बाद सन 1935 में जर्मनी में इसका व्यवसायिक रूप से निर्माण होने लगा जिसे मेग्नेटोफोन के नाम से जाना जाने लगा ।इसके बाद टेप रिकार्डर की दुनिया में एक से बढ़कर एक टेप रिकार्डर आने लगे जो धीमी से धीमी आवाज को भी साफ़ रिकार्ड कर लेते है ।

14.8 होम थियेटर

होम थिएटर के लिए ऑडियो और वीडियो सिस्टम का प्रस्ताव है कि असाधारण गुणवत्ता और उत्कृष्ट प्रदर्शन - संक्षेप में, यह अपने ही में एक फिल्म थियेटर जीवित करने जैसा है के हाल ही के विकास का वर्णन करते थे शब्द है कमरे में. [* बी.आर. *] [* बी.आर. *] मनोरंजन श्रव्य और दृश्य घटकों के संयोजन से प्राप्त एक व्यावसायिक फिल्म थियेटर का अनुभव पैदा करता है. सेट अप एक डीवीडी एक स्टीरियो

के माध्यम से तंग आ खिलाड़ी के रूप में के रूप में आसान हो सकता है प्रणाली और एक बड़े टेलीविजन सेट, या के रूप में एक पूरे पेशेवर कई वक्ताओं और एक प्रोजेक्शन स्क्रीन के साथ तार कमरे के रूप में विस्तार से बताएं. एक होम थिएटर प्रणाली भी थियेटर शैली की कुर्सियों और एक ऊंचा शामिल हो सकते है ।

14.9 टेलीफोन

1880 में, दो टेलीफोन कंपनियों द ओरिएंटल टेलीफोन कंपनी लिमिटेड और एंग्लो इंडियन टेलीफोन कंपनी लिमिटेड ने भारत में टेलीफोन एक्सचेंज की स्थापना करने के लिए भारत सरकार से संपर्क किया. इस अनुमति को इस आधार पर अस्वीकृत कर दिया गया कि टेलीफोन की स्थापना करना सरकार का एकाधिकार था और सरकार खुद यह काम शुरू करेगी. 1881 में, सरकार ने अपने पहले के फैसले के खिलाफ इंग्लैंड की ओरिएंटल टेलीफोन कंपनी लिमिटेड को कोलकाता, मुम्बई, चैन्नई (मद्रास) और अहमदाबाद में टेलीफोन एक्सचेंज खोलने के लिए एक लाइसेंस दिया, जिससे 1881 में देश में पहली औपचारिक टेलीफोन सेवा की स्थापना हुई. 28 जनवरी 1882, भारत के टेलीफोन के इतिहास में रेड लेटर डे है. इस दिन, भारत के गवर्नर जनरल काउंसिल के सदस्य मेजर ई. बैरिंग ने कोलकाता, चेन्नई और मुंबई में टेलीफोन एक्सचेंज खोलने की घोषणा की. कोलकाता के एक्सचेंज का नाम "केन्द्रीय एक्सचेंज" था जो 7, काउंसिल हाउस स्ट्रीट इमारत की तीसरी मंजिल पर खोला गया था. केन्द्रीय टेलीफोन एक्सचेंज के 93 ग्राहक थे. बॉम्बे में भी 1882 में टेलीफोन एक्सचेंज का उद्घाटन किया गया।

लैंडलाइन्स पर, इंट्रा सर्कल कॉल को स्थानीय कॉल और इंटर-सर्कल कॉल को लंबी दूरी का कॉल माना जाता है. वर्तमान में सरकार पूरे देश को एक दूरसंचार परिमंडल में एकीकृत करने पर काम कर रही है. लंबी दूरी का कॉल करने के लिए, उस क्षेत्र के कोड के पहले एक शून्य लगाया जाता है उसके बाद नंबर मिलाया जाता है(यानी दिल्ली कॉल

करने के लिए पहले 011 और उसके बाद फोन नंबर मिलाया जायेगा). अंतरराष्ट्रीय कॉल करने के लिए, पहले "00" मिलाना चाहिए उसके बाद देश का कोड, क्षेत्र का कोड और स्थानीय नंबर. भारत के लिए देश कोड 91 है।

मोबाइल टेलीफोन

650 मिलियन से अधिक के ग्राहकों के आधार वाली भारत की मोबाइल दूरसंचार प्रणाली दुनिया में दूसरे स्थान पर है और 1990 में इसे निजी खिलाड़ियों के हाथ में सौंपा गया था. देश कई क्षेत्रों में विभाजित है, सरकार और कई निजी कंपनियां स्थानीय और लंबी दूरी की टेलीफोन सेवाएं चलाती हैं। प्रतियोगिता के कारण कीमतें घटी हैं और भारत में दरें दुनिया में सबसे सस्ती हैं सूचना मंत्रालय के नए कदमों से दरों के और भी कम होने की उम्मीद की जा रही हैं। सितम्बर 2004 में, मोबाइल फोन कनेक्शन की संख्या फिक्स्ड लाइन कनेक्शन्स की संख्या पार कर गयी और वर्तमान में वापरलाइन खंड की तुलना में 20:01 का अनुपात है। मोबाइल ग्राहकों का आधार एक सौ तीस प्रतिशत तक, 2001 में 5 मिलियन ग्राहकों की तुलना में 2010 में 650 मिलियन तक बढ़ा है (9 साल से कम अवधि में)। भारत मुख्य रूप से 900 मेगाहर्ट्ज बैंड पर जीएसएम (GSM) मोबाइल प्रणाली का अनुसरण करता है। हाल में संचालक (ऑपरेटर) 1800 मेगाहर्ट्ज बैंड में भी संचालित करते हैं। प्रमुख खिलाड़ियों में एपरटेल, रिलायंस इन्फोकॉम, वोडाफोन, आइडिया सेलुलर और बीएसएनएल/एमटीएनएल शामिल है. कई छोटेअधिकतर संचालकों (ऑपरेटरों) और कई विदेशी वाहकों के बीच अंतरराष्ट्रीय रोमिंग समझौते हैं।

14.10 सारांश

चूँकि संचार समाज में ही घटित होता है अत: हम समाज के परिप्रेक्ष्य से देखे तो पाते हैं । की सामाजिक सम्बन्धों की दिशा देने ओर सतत् प्रवाध्यमान बनाए रखने की प्रक्रिया ही जन व सामुदायिक संचार हैं ।

संचार समाज के आरम्भ से लेकर अब तक के विकास से जुड़ा हैं । वर्तमान में संचार माध्यम और समाज में गहरा तालमेल है । (जिस की चर्चा इस इकाई में की गई है) ने सुचना को सर्वसुलभ व सार्वभौमिक बना दिया है ।

14.11 अभ्यास प्रश्न

1. संचार की परिभाषाएँ बताइए?

2. संचार किसे कहते है?

3. संचार के साधनों का वर्णन कीजिये?

4.निम्न पर टिप्पणी लिखिए

अ) दूरदर्शन

ब) वी सी डी

स) टेलीफोन

द) टेप रिकार्डर

14.12 संदर्भ ग्रन्थ

1. प्रसार शिक्षा डा पूनम कुमारी , वंदना जैन .डा–

2. प्रसार शिक्षा हरपलानी .डी .डा बी-

3. प्रसार शिक्षा डा वृंदा सिंह -

इकाई 15

कम्प्यूटर के उपयोग

15.0 उद्देश्य
15.1 प्रस्तावना
15.2 कम्प्यूटर क्या होता है।
15.3 आगम उपकरण (Input Devices)
15.4 कम्प्यूटर हार्डवेपर की परिवर्तनशीलता (Modularity of Computer Hardware)
15.5 पॉवर पाइंट – एक परिचय
15.6 प्रश्न
15.7 संदर्भ ग्रन्थ

15.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययनोंपरांत विद्यार्थी-

1. कम्प्यूटर क्या होता है के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे
2. कम्प्यूटर के घटक (Components of Computers) के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे
3. पॉवर पाइंट के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे

15.1 प्रस्तावना

आज **कम्प्यूटर (computer)** हम सब की एक प्रमुख आवश्यकता बन गई है। विद्यालयों में कम्प्यूटर के विषय में सिखाया जा रहा है। कार्यालयों में कम्प्यूटर के बिना काम हो पाना असम्भव-सा हो गया है। टायपिंग करना हो, सारणी बनाना हो, छायाचित्र का संपादन करना हो, उपलब्ध जानकारियों का विश्लेषण करना हो, काम कैसा भी क्यों न हो, हमें कम्प्यूटर की आवश्यकता होती ही है। चिप्स, तार आदि से बने इस यंत्र हम आदेश देते हैं**कंप्यूटर** (अन्य नाम - **संगणक**, **कंप्यूटर**, **परिकलक** वस्तुतः एक अभिकलक यंत्र (programmable machine) है जो दिये गये गणितीय तथा तार्किक संक्रियाओं को क्रम से स्वचालित रूप से करने में सक्षम है। इसे अंक गणितीय, तार्किक क्रियाओं व अन्य विभिन्न प्रकार की गणनाओं को सटीकता से पूर्ण करने के लिए योजनाबद्ध तरीके से निर्देशित किया जा सकता है. चूंकि किसी भी कार्य योजना को पूर्ण करने के लिए निर्देशो का क्रम बदला जा सकता है इसलिए संगणक एक से ज्यादा तरह की कार्यवाही को अंजाम दे सकता है। इस निर्देशन को ही कम्प्यूटर प्रोग्रामिंग कहते है और संगणक कम्प्यूटर प्रोग्रामिंग भाषा कि मदद से उपयोगकर्ता के निर्देशो को समझता है। यांत्रिक संगणक कई सदियों से मौजूद थे किंतु आजकल अभिकलित्र से आशय मुख्यतः बीसवीं सदी के मध्य में विकसित हुए विद्दुत चालित अभिकलित्र से है। तब से अबतक यह आकार में क्रमशः छोटा और संक्रिया की दृष्टि से अत्यधिक समर्थ होता गया हैं। अब अभिकलक घड़ी के अन्दर समा सकते हैं और विद्युत कोष (बैटरी) से चलाये जा सकते हैं। निजी अभिकलक के विभिन्न रूप जैसे कि सुवाह्य संगणक, टैबलेट आदि रोजमर्रा की जरूरत बन गए हैं।परंपरागत संगणकों में एक केंद्रीय सञ्चालन इकाई (सीपीयू) और सूचना भन्डारण के लिए स्मृति होती है। सञ्चालन इकाई अंकगडित व तार्किक गड़नाओ को अंजाम देती है और एक अनुक्रमण व नियंत्रण इकाई स्मृति में रखे निर्देशो के आधार पर सञ्चालन का क्रम बदल सकती है। परिधीय या सतह पे लगे

उपकरण किसी बाहरी स्रोत से सूचना ले सकते है व कार्यवाही के फल को स्मृति में सुरक्षित रख सकते है व जरूरत पड़ने पर पुन: प्राप्त कर सकते हैं।एकीकृत परिपथ पर आधारित आधुनिक संगणक पुराने जमाने के संगणकों के मुकबले करोडो अरबो गुना ज्यादा समर्थ है और बहुत ही कम जगह लेते है| सामान्य संगणक इतने छोटे होते है कि मोबाइल फ़ोन में भी समा सकते है और मोबाइल संगणक एक छोटी सी विद्युत कोष (बैटरी) से मिली ऊर्जा से भी काम कर सकते है। ज्यादातर लोग “संगणकों” के बारे मे यही राय रखते है की अपने विभिन्न स्वरूपों में व्यक्तिगत संगणक सूचना प्रौद्योगिकी युग के नायक है। हालाँकिसन्निहित संगणक जो की ज्यादातर उपकरणों जैसे कि एम.पी.३ वादक, वायुयान व खिलौनो से लेकर औद्योगिक मानव यन्त्र में पाये जाते है लोगो के बीच ज्यादा प्रचलित है। यह बुनियादी कम्प्यूटर शिक्षा (computer tutorial) उनके लिये है जिनका कम्पयूटर के विषय में आधारभूत ज्ञान बहुत कम है या फिर है ही नहीं। इसका उद्देश्य है कम्प्यूटर के प्रभावशाली तथा सुरक्षित रूप से प्रयोग करने में उनकी सहायता करना। इसे पढ़ कर वे आसानी से समझ पायेंगे कि सबसे पहले हम यह जान लें कि सैन्य (military) तथा वैज्ञानिक गणनाओं के लिये 1940 के दशक में कम्प्यूटर का निर्माण किया गया। अनेक वर्षों वर्षों तक कम्प्यूटर का स्वरूप बड़े भवन के बराबर विशाल रहा। आज का डेस्क टॉप (desktop) या पर्सनल कम्प्यूटर – पी.सी. (personal computer – P.C.) केवल 15 वर्ष पुराना है।

15.2 कम्प्यूटर क्या होता है

सारांश में उपलब्ध जानकारियों को छाँटने, क्रियान्वित करने तथा सुरक्षित रखने के इलेक्ट्रानिक विधि को ही कम्प्यूटर कहा जाता है। (Computers are essentially an electronic way to sort, process and store information.)

कम्प्यूटर के मुख्य रूप से चार घटक (components) हैं -

हार्डवेपर (Hardware)

- ऑपरेटिंग सिस्टम (Operating System)
- एप्लीकेशन प्रोग्राम या सॉफ्टवेयर (Application Programs or Software)
- यूजर्स (Users)

1. **हार्डवेयर (Hardware):** कम्प्यूटर के वे घटक होते हैं जिन्हें हम देख और छू सकते हैं। हार्डवेयर के अन्तर्गत सेन्ट्रल प्रोसेसिंग यूनिट – सीपीयू (Central Processing Unit – CPU), फ्लॉपी ड्राइव्ह (Floppy Drive), सीडी रोम ड्राइव्ह (CD ROM Drive), मानीटर (Monitor), कीपैड (Keypad), माउस (Mouse), स्पीकर्स (Speakers) आदि आते हैं।

2. **सॉफ्टवेयर (Software):** कम्प्यूटर के उन घटकों को कहा जाता है जिन्हें हम देख-छू नहीं सकते किन्तु उनकी सहायता से कम्प्यूटर के द्वारा वांछित परिणाम प्राप्त कर लेते हैं। ये निर्देशों के समुच्चय होते हैं जिनके द्वारा कम्प्यूटर एक या एक से अधिक कार्यों को सम्पन्न करता है। (A set of instructions that cause a computer to perform one or more tasks)

3. **ऑपरेटिंग सिस्टम (Operating System):** कम्प्यूटर सिस्टम के हार्डवेयर रिसोर्सेस जैसे-मैमोरी, प्रोसेसर तथा इनपुट-आउटपुट डिवाइसेस को व्यवस्थित करने के लिये बनाये गये सॉफ्टवेयर को ऑपरेटिंग सिस्टम कहते है।

4. **एप्लीकेशन प्रोग्राम (Application Programs):** उन

सॉफ्टवेपरस्
को एप्लीकेशन प्रोग्राम कहा जाता है जिनकी सहायता से हम कम्प्यूटर को दिये गये किसी
निश्चित आदेश का पालन करवाते हैं, उदाहरण के तौर पर वर्ड प्रोसेसर्स (Word
Processers) जैसे कि एमएस आफिस (MS Office), एकाउंटिंग सॉफ्टवेयर्स (Accounting Software) जैसे कि टैली (Tally) आदि।

5. **यूजर्स (Users):** कम्प्यूटर को प्रयोग करने वाले यूजर्स कहलाते
हैं।

15.3 आगम उपकरण

आगम उपकरणों से तात्पर्य ऐसे यंत्रो से होता है जो कि संगणक यंत्र में प्राथमिक समंको के निवेश हेतु प्रयुक्त किये जाते हैं । इनका विवरण निम्नलिखित है :-

1. **कुंजी पटल (Key Board)**

सूक्ष्म संगणना यंत्रो में छोटी-छोटी संगणनाओ के लिये आमतौर पर कुंजी पटल (Key Board) का उपयोग किया जाता है । ये कुंजी पटल सामान्य तौर पर एक टंकण यंत्र (Type Writer) के
कुंजीपटल ककि भांति होते है । जिनमे विभिन्न कुंजियो कि स्थिति भी ठीक टाइपराइटर कि समस्त कुंजियो के अतिरिक्त कुछ अधिक कुंजियाँ होती है जो संगणना के दौरान संगणक यंत्र को
विभिन्न निर्देश सेने के काम आती है । जैसे: एन्टर (Enter) अथवा प्रवेश कुंजी । ये कम्प्यूटर के कुंजी पटल में अतिरिक्त रूप में पाई जाती है एवं कई महत्वपूर्ण कार्य संपन्न कटी है । कुंजीपटल कि सहायता से हम आंकडो को सीधे ही कम्प्यूटर कि मुख्य स्मृति में पहुंचा देते हैं । जहाँ कि यह अस्थाई तौर पर संग्रहित कर लिये जाते हैं । इन्हें संग्रहण के दौरान ही द्दष्य प्रदर्शन इकाई पर देखा जा सकता

है । जिससे कि आंकडो को गलती होने कि दशा में पुन: सुधार भी जा सकता है । बाद में इन आंकडो को हम सीधे ही संगणना हेतु प्रयोग कर सकते हैं अथवा इन्हें फ्लॉफी डिस्क अथवा विंचेस्टर डिस्क पर भविष्य में प्रयोग कर सकते हैं अथवा फ्लोफी डिस्क अथवा विंचेस्टर डिस्क पर भविष्य में प्रयोग हेतु सुरक्षित (Save) करके भी रख सकते हैं ।

2. माउस (Mouse)- यह इकाई का मुख्यत: द्दष्य प्रदर्शन इकाई कि कि स्क्रीन पर कर्सर (Cursor) के परिचालन पर नियंत्रण हेतु प्रयुक्त कि जाती है । इसका उपयोग विशेषत: ग्राफिक संगणना के दौरान किया जाता है ।यह एक छोटा प्लास्टिक का डिब्बेनुमा यंत्र होता है जिसके ऊपर दो पुश बटन लगे होते है । इस प्लास्टिक के डिब्बे के नीचे दो गोल पहिये लगे होते हैं जो कि दूसरे से समकोण बनाते हैं । ये दोनों पहिये एक धातु की छड से जुड़े होते हैं जिसे हम "शाफ्ट एनकोडर" (Shaft Encoder) कहते हैं । पहिये को घुमाने पर यह शाफ्ट एनकोडर विद्‌युत तरंगे उत्पन्न करते हैं । जब इस माउस यंत्र को एक सपाट सतह जिसे की हम माउस पैड (Mouse Pad) के नाम से पुकारते हैं, पर घुमाया जाता है तों पर दोनों पहिये जो की एक दूसरे के समकोण पर हैं, दोनों में ही शाफ्ट एनकोडर के द्वारा विद्‌युत तरंगे उत्पन्न होती हैं जिनकी गिनती दो अलग- अलग रजिस्टरों में दर्ज होती रहती हैं । अर्थात यह माउस यंत्र जिस दिशा में जितनी दुरी तय करता है उतनी विद्‌युत तरंगों की गिनती रजिस्टरों में एकत्र होती रहती है । समय-समय पर द्दश्य प्रदर्शन इकाई में लगा प्रोसेसर इन रजिस्टरों की जाँच करता रहता है एवं इनके द्वारा दर्शायी गयी स्थिति के अनुसार स्क्रीन पर कर्सर का परिचालन करता रहता है ।

जब यह माउस, माउस पैड पर घुमाया जाता है जब इसके बटनों को दबाकर हम कर्सर की वांछित स्थिति संगणक यंत्र तक पहुचा सकते हैं तथा माउस पैड को आगे पीछे कर एवं पुन: बटनों को दबाकर परिवर्तित किया जाता है ।

दृश्य प्रदर्शन इकाई की स्क्रीन पर कर्सर पर कर्सर के परिचालन हेतु यह एक सस्ती एवं सरल विधि है इससे समय की भी काफी बचत होती है क्योंकि यदि हम कर्सर को कुंजी पटल द्वारा परिचालन करेंगे तों उनमे काफी समय लगता है । यह तन्त्र ग्राफिक उपयोग के अतिरिक्त विस्तार पत्र (Spread Sheet) एवं शब्द संगणक (Word Processor) इत्यादि उपयोंगो हेतु भी प्रयुक्त किये जाते हैं । क्योंकी यह कुंजी पटल की तुलना में विस्तार पत्र के किसी भी प्रकोष्ट को अधिक जल्दी एवं आसानी से ढूंढ़ सकते हैं ।

3. सी.डी. रोम डिस्क (Compact Disk Read Only Memory)

प्रकाश लेजर डिस्कों की यह प्रथम श्रेणी है एवं यही सर्वाधिक प्रचलित है एवं विभिन्न प्रकार के आँकड़े जैसे की अक्षर, शब्द, दृश्य, आकृति, रेखाचित्र, इत्यादि को संग्रहित करने में सक्षम होती है सकी एक सतह पर आंकडो का लेखन/पाठन किया जाता है । एवं दूसरी सतह समतल एवं अनुपयोगी होती है। यह लेखन/पाठन में चुम्बकीय फिते के समान क्रमिक पहुंच वाली **(Random Access/Direct Access)** का अनुसरण करती है अर्थात हम अपनी

आवश्यकता के अनुसार संग्रहित दस्तावेजों अथवा आकृतियों को किसी भी वांछित क्रम में प्राप्त कर सकते हैं । संग्रहण क्षमता के हिसाब से एक कॉम्पेक्ट डिस्क की क्षमता 650MB मेगाबाइट होती है जिसमें की लगभग 450 फ्लॉफी डिस्कों (1.44MB वाली) के समतुल्य आँकड़े भरे जा सकते हैं जो की लगभग 25000 मुद्रित पृष्ठों के बराबर होते हैं । अत्यधिक संग्रहण क्षमता के कारण इनका उपयोग ज्यादातर मल्टीमीडिया प्रस्तुतिकरण हेतु किया जाता है

जिसमें की प्रस्तुतीकरण में आंकडो एवं तालिकाओं के साथ-साथ दृश्यों एवं ध्वनि निर्गमों का भी आसानी के साथ समावेश किया जा सकता है ।इनका उपयोग सामान्यतः विभिन्न प्रकार के पूर्वनिर्मित अनुप्रयोग कार्यक्रमों एवं प्रणाली सोफ्टवेयरों के वितरण में किया जाता है । निर्माता इन कार्यक्रमों को एक सी. डी. में लेखबद्ध करके

इनकी मूल प्रति तैयार कर लेता है एवं फिर इस मूल प्रति की कई आकृतियाँ बना कर इनका पूर्वलिखित रूप में ही विक्रय/वितरण किया जाता है ।

चूँकि यह पुन: लेखनीय नहीं होती है इसलिये इन्हें "केवल पठनीय स्मृति" **(Rrad Only Memory)** का नाम दिया गया है । वर्तमान में इनकी एक नई पीढ़ी भी उपलब्द है जो की इन्हें लेखबद्ध करने की सुविधा प्रदान करती हैं । इनका निर्माण सर्वप्रथम हेलेट पैकार्ड (H.P.) द्वारा किया गया था इन्हें "पुन: लेखनीय कॉम्पेक्ट डिस्क ड्राइव" **(CD-RW/CD Rewwritable Drive)** के नाम से जाना जाता है । सर्वप्रथम जिस सी. डी. ड्राइव का उदभव हुआ था वह केवल पूर्व-लिखित डिस्को के पाठन हेतु इस्तेमाल की जाती थी परन्तु अब वर्तमान में ऐसी सी. डी. ड्राइव भी उपलब्द हैं जो की पूर्व लिखित डिस्कों को पढ़ने के साथ-साथ आंकडो को खाली डिस्कों में लेखबद्ध करने की सुविधा भी प्रदान करती हैं एवं इनका उपयोग विभिन्न व्यवसायिक फाइलों, बड़ी-बड़ी वितीय लेखा फाइलों, ऐतिहासिक फाइलों, पारिवारिक चित्रों, इत्यादि के भंडारण हेतु किया जाता हैं । ये आकार में छोटी एवं वजन में काफी हलकी होती हैं जिससे की इन्हें एक स्थान से दूसरे स्थान पर आसानी से भेजा जा सकता है ।

4. मुद्रण यंत्र (Printers)- मुद्रण यंत्रो से तात्पर्य एक ऐसी प्रणाली से हैं जिसमें की कम्प्यूटर द्वारा प्राप्त परिणामों को कागज के ऊपर चाप कर स्थायी रूप से उपयोगकर्ता को प्रस्तुत किया जाता हैं । इस पद्धति द्वारा प्राप्त परिणाम कागज पर मुद्रित होने के कारण स्थायी रूप से प्राप्त होते हैं जो की मानव द्वारा पठनीय होते हैं एवं जिन्हें सुरक्षित रखकर भविष्य में भी आवश्यकता पड़ने पर इनका प्रयोग किया जा सकता हैं । मुद्रण यंत्र कम्प्यूटर से परिणामों को विद्युत तरंगों के रूप में प्राप्त करता हैं एवं उन्हें कूट संकेत के अनुसार अक्षरों में परिवर्तित करके कागज पर चाप देते

हैं । यह छापने की प्रक्रिया मुद्रण यंत्र के प्रकार एवं उअसमे प्रयोग की जाने वाली तकनीक के अनुसार संपन्न होता है ।

15.4 कम्प्यूटर हार्डवेपर की परिवर्तनशीलता

हार्डवेपर की परिवर्तनशीलता से आशय उसकी इस विशेषता से होता हैं की आवश्यकता होने पर एक सम्पूर्ण कम्प्यूटर प्रणाली के किसी भी अवयव को बदला जा सके एवं बदलाव से अन्य अवयव अथवा उपकरण प्रभावित न हों ।

प्रारम्भिक कम्प्यूटर प्रणाली की प्रकृति इस प्रकार की होती हैं की यदि उपयोगकर्ता को कुछ समय बाद ऐसा महसूस हो की यह प्रणाली आवश्यकताओं के अनुरूप नहीं है अथवा किसी भी दृष्टि से प्रणाली की क्षमता अथवा गति इत्यादि इसकी आवश्यकता से छोटी होई हैं तों इन परिस्थितियों में उपयोगकर्ता को अपनी पूरी प्रणाली को बदलना पड़ता था अर्थात उसे अपनी आवश्यकता के अनुरूप अधिक क्षमताओं वाला दूसरा यंत्र खरीदना पड़ता था एवं पुराने यंत्र को अन्यंत्र उपयोग अथवा बेचने की व्यवस्था करनी पड़ती थी, जिसमे आर्थिक रुप से काफी हानी होती थी । इसके अतिरिक्त एक अन्य परेशानी और भी उत्पन्न हो जाती थी जिसमें की आर्थिक क्षति के अलावा समय ई बरबादी होती थी, ये परेशानी होती थी कम्प्यूटर कार्यक्रम को बदलने की । क्योंकी उस समय में अधिकांश कम्प्यूटर कार्यक्रम मशीनी भाषा में लिखे जाते थे, जो की जिस विशिष्ट कम्प्यूटर हेतु लिखे गये हैं केवल उसी मशीन पर चल सकते थे । परिणामस्वरूप कम्प्यूटर के बदल जाने की दशा में इसके कार्यक्रम को भी दोबारा से नये यंत्र के अनुसार लिखना पड़ता था जिसमें की समय एवं धन दोनों ही व्यर्थ होते थे ।

कम्प्यूटर हार्डवेपर में परिवर्तनशीलता के सिद्धांत ने उपरोक्त होने वाली परेशानियों को दूर कर दिया हैं । इस सिद्धांत के अनुसार वर्तमान में निर्मित होने वाले उपकरण इस प्रकार से बनाये जाते हैं की बाद में आवश्यकता पड़ने पर इनके किसी भी अनुभाग अथवा उपकरण को बदल सकते हैं । यह परिवर्तन कई अवयवों में सम्भव है, जैसे की यदि मुख्य स्मृति की भण्डारण क्षमता काम पड़ रही हैं तों इसे अतिरिक्त

चिप लगाकर बढ़ाया जा सकता है । यदि सहायक स्मृति छोटी पड़ रही है तो संगणक यंत्र में स्थित विनचेस्टर डिस्क को बदला जा सकता है । यदि अन्य अतिरिक्त उपकरणों की आवश्यकता है तो वे भी जोड़े जा सकते हैं, दृश्य प्रदर्शन इकाई यदि मोनोक्रोम है एवं अब यदि हम रंगीन लगाना चाहते हैं तो इसे भी परिवर्तित किया जा सकता है । मुख्य संगणक यंत्र की संगणना क्षमता एवं गति भी अतिरिक्त सूक्ष्म प्रोसेसर लगाकर बढ़ाई जा सकती है अर्थात बिना विद्यमान केन्द्रीय संगणना इकाई (C.P.U.) को परिवर्तित किये,संगणना प्रणाली को आवश्यकतानुसार परिवर्तित किया जा सकता है ।

15.5 पॉवर पाइंट – एक परिचय

पावर प्वाइंट (Power Point): पॉवर पाइंट के द्वारा आप आँकड़ों (data) का ग्राफिकल ढाँचे (graphical formats) में मल्टीमीडिया प्रस्तुतीकरण (multimedia presentation) किया जाता है। जाहिर है कि आप लोगों को प्रभावित करने के लिये अपने आँकड़ों को अत्यन्त आकर्षक तरीके से दिखाना चाहेंगे। तो इसके लिये आपको पॉवर पाइंट का सहारा लेना होगा।

पॉवर पाइंट में कार्य आरम्भ करना (Getting Started)

पॉवर पाइंट को खोलते ही नीचे दर्शाये गये चित्र जैसा एक डॉयलाग बॉक्स खुलता है। इस पृष्ठ में हम इस डॉयलाग बॉक्स के प्रत्येक विकल्प के विषय में चर्चा करेंगे। यदि पॉवर पाइंट पहले से ही खुला है और आपको डॉयलाग बॉक्स दिखाई नहीं पड़ रहा है तो उसे लाने के लिये मेनूबार में फाइल|नया (File/New) का चयन करें।

स्वतः सामग्री विजार्ड (AutoContent Wizard)

सीखने के लिये स्वतः सामग्री विजार्ड सबसे आसान तरीका है। यह विजार्ड आपके लिये अनेकों प्रकार के टेम्प्लेट्स प्रस्तुत करता है और उन्हें प्रयोग करने की विधियाँ भी सुझाते जाता है। तो स्वतः सामग्री विजार्ड की सहायता से अपना पहला प्रस्तुतीकरण (presentation) बनाने के लिये अगला (Next) बटन को क्लिक कर

दीजिये।

डिजाइन टेम्प्लेट (Design Template)

पॉवर पाइंट में आपके प्रस्तुतीकरण के लिये विभिन्न प्रकार के बैकग्राउंड वाले अनेकोंटेम्प्लेट्स पहले से ही बने होते हैं। एक एक कर करके सभी टेम्प्लेट्स को देखिये और अपनी पसंद के टेम्प्लेट का चयन करके OK बटन को दबा दीजिये।

रिक्त प्रस्तुतीकरण (Blank Presentation)

यदि आप पूर्वनिश्चित ग्राफिक्स तथा फॉर्मेटिंग वाले डिजाइन टेम्प्लेट्स को पसंद न करके अपनी आवश्यकतानुसार अपने स्वयं के बनाये ग्राफिक्स तथा फॉर्मेटिंग वाला प्रस्तुतीकरण बनाना चाहते हैं तो रिक्त प्रस्तुतीकरण (Blank Presentation) का चयन करें ।

पूर्व निर्मित प्रस्तुतीकरण को खोलना (Open an Existing Presentation)

किसी पूर्व निर्मित प्रस्तुतीकरण को खोलने के लिये इस विकल्प का प्रयोग करें। 'में देखें': (Look in:) ड्रॉप डाउन मेनू से उस फोल्डर को चुनें जिसमें पूर्व निर्मित प्रस्तुतीकरण सुरक्षित है, और लिस्ट में उसे सेलेक्ट कर के ओपन (Open) बटन दबा दें।

आटो लेआउट (AutoLayout)

किसी प्रस्तुतीकरण का चुनाव कर लेने के बाद पॉवर पाइंट आपको आपकी सुविधानुसारअनेकों प्रकार के लेआउट्स सुझाता है जिनमें से अपनी आवश्कतानुसार लेआउट का चयन करके OK बटन को क्लिक कर दें।

पॉवर पाइंट स्क्रीन (Power Point Screen)

पावर प्वाइंट (Power Point): पॉवर पाइंट के द्वारा आप आँकड़ों (data) का ग्राफिकल ढाँचे (graphical formats) में मल्टीमीडिया प्रस्तुतीकरण (multimedia presentation) किया जाता है। जाहिर है कि आप लोगों को प्रभावित करने के लिये अपने आँकड़ों को अत्यन्त आकर्षक तरीके से दिखाना चाहेंगे। तो इसके लिये आपको पॉवर

पाइंट का सहारा लेना होगा ।
स्क्रीन लेआउट (ScreenLayout) नार्मल व्हियु (NormalView) में पॉवर पाइंट लेआउट:

1. व्हियुज (Views)

पॉवर पाइंट में आपके प्रस्तुतीकरण (Presentation) के निर्माण के लिये स्लाइड शो के साथ ही साथ चार स्क्रीन लेआउट्स भी उपलब्ध हैं। आपका पृष्ठ कैसा दिखाई पड़े यह चुनने के लिये स्क्रीन व्हियुज (Screen views) बटनों का प्रयोग करना पड़ता है।

2. नार्मल व्हियु (Normal View)

नार्मल व्हियु (normal view) में स्क्रीन तीन भागों में विभक्त हो जाता है। बायीं (left) ओर का भाग प्रेजेन्टेशन आउटलाइन (presentation outline), के लिये होता है, मध्य के भाग में, जो कि मुख्य विन्डो होता है, स्लाइड (slide) दिखाई देता है और नीचे के भाग में टिप्पणियाँ (notes) लिखी जा सकती हैं। स्लाइड व्हियु (Slide View) स्लाइड व्हियु (slide view) में प्रत्येक स्लाइड दिखते रहता है ताकि उसमें चित्र जोड़ने,टैक्स्ट की फॉर्मेटिंग करने और बैकग्राउंड स्टाइल जोड़ने में आसानी हो सके।

3. आउटलाइन व्हियु (Outline View)

आउटलाइन व्हियु (outline view) स्क्रीन के अधिकतर भाग में प्रेजेन्टेशन आउटलाइन (presentation outline) ही दिखाई देता है ताकि टैक्स्ट का संपादन किया जा सके। इसमें स्लाइड और नोट्स एक छोट विन्डो में होते हैं। स्लाइड सॉर्टर व्हियु Slide Sorter View

स्लाइड सॉर्टर व्हियु (slide sorter view) प्रत्येक स्लाइड के छोटे छोटे चित्र दिखाई पड़ते रहते हैं ताकि स्लाइड्स को मनपसंद तरतीब दिये जा सकें।
पूरे स्क्रीन में स्लाइड्स को देखने के लिये स्लाइड शो (Slide Show) बटन को क्लिक करें या F5 कुंजी दबायें।

4. स्लाइड्स के साथ काम करना (working with slides)

नया स्लाइड डालना (Insert a New Slide)
अपने प्रस्तुतीकरण (presentation) में नया स्लाइड डालने के लिये निम्न विधि अपनायें:

1. स्लाइट संख्या (slide's number) पर क्लिक करने के बाद आउटलाइन विन्डो से एक नया स्लाइट चुनें।
2. मेनूबार से इन्सर्ट/न्यू स्लाइड (Insert/New Slide) का चयन कर लें या टूलबार में न्यू स्लाइड बटन को क्लिक करें ।
3. खुलने वाले विन्डो में मनपसन्द लेआउट का चुनाव कर के OK बटन दबा दें।

डिजाइन टेम्पलेट लागू करना (Applying a Design Template)

डिजाइन टेम्प्लेट लागू करने के लिये मेनूबार से फॉर्मेट/डिजाइन टेम्प्लेट(Format/Design Template) का चयन करें। मनपसंद टेम्प्लेट को चुन कर अप्लाय(Apply) बटन को क्लिक कर दें ।

3. स्लाइड्स के लेआउट में परिवर्तन करना (Changing Slide Layouts)

किसी स्लाइड के लेआउट को बदलने के लिये मेनूबार में फॉर्मेट|स्लाइड लेआउट(Format/Slide Layout) का चयन करे. उपलब्ध थम्भनेल्स में से वांछित लेआउट का चुनाव करके अप्लाय (Apply) बटन को क्लिक कर दें।

स्लाइड्स का स्थान परिवर्तित करना (Reordering Slides)

स्लाइड सॉर्टर व्हियु (Slide Sorter View), में किसी स्लाइड का स्थान बदलने के लिये केवल उसे क्लिक कर के माउस के द्वारा वांछित स्थान तक ड्रैग करना पड़ता है किन्तु नार्मल

(Normal) या आउटलाइन व्हियु (Outline View), में स्लाइड के बाजू में बने आइकान को ड्रैग कर के स्लाइड का स्थान परिवर्तन किया जाता है।

स्लाइड को छिपाना (Hide Slides)

यदि आप स्लाइड शो के दौरान किसी स्लाइट को दिखाना नहीं चाहते किन्तु उस स्लाइड को मिटाना भी नहीं चाहते ताकि वह

अन्य समय में काम आये तो मेनूबार में स्लाइडशो|हाइड स्लाइड (Slide Show/Hide Slide) का चयन करके ऐसा कर सकते हैं। छिपे हुये स्लाइड को वापस लाकर पुनः दिखाने के लिये मेनूबार में स्लाइड शो/हाइड स्लाइड (Slide Show/Hide Slide) को फिर से क्लिक करें।

विशिष्ट स्लाइड शो बनाना (Create a Custom Slide Show)

यदि आप अपने स्लाइड शो में सभी स्लाइड्स को न दिखा कर केवल चुने हये स्लाइड्स को ही दिखाना चाहते हैं तो कस्टम स्लाइड शो (Custom Slide Show) आपको यह सुविधा प्रदान करती है।

4. मेनूबार में स्लाइड शो/कस्टम स्लाइड शो (Slide Show/Custom Slide Show) का चयन करें।

5. कस्टम शो विन्डो (Custom Shows) में न्यू…..(New…) बटन को क्लिक करें।

6. कस्टम शो परिभाषित करें (Define Custom Show) में स्लाइड शो का नाम (Slide show name) वाले सफेद बॉक्स में अपने कस्टम स्लाइड शो का नाम टाइप करें।

7. स्लाइड्स इन प्रेजेन्टेशन (Slides in presentation) विन्डो में जिन स्लाइड्स को आप दिखाना चाहते हैं उन्हें हाईलाइट कर के जोड़ें (Add) >> बटन की सहायता से स्लाइड्स इन कस्टम शो (Slides in custom show) विन्डो में डालते जायें।

8. किसी स्लाइड को वापस लाने के लिये उपरोक्त क्रिया के विपरीत क्रिया अपनायें अर्थात् स्लाइड्स इन कस्टम शो (Slides in custom show) विन्डो से जिन स्लाइड्स को आप हटाना चाहते हैं उन्हें हाईलाइट कर के रीमूव्ह (Remove) बटन की सहायता से स्लाइड्स इन प्रेजेन्टेशन (Slides in presentation) विन्डो में वापस डाल दें।

9. कस्टम शो में स्थित स्लाइड्स को मनपसंद तरतीब देने के लिये स्लाइड्स को हाईलाइट कर के ऊपर नीचे किया जा सकता है।

10. कार्य सम्पन्न हो जाने पर OK बटन दबा दें।
11. अपने शो के पूर्व-प्रदर्शन (preview) के लिये दिखायें (Show) तथा कस्टम शो विन्डो को बंद करने के लिये बंद (Close) बटन का प्रयोग किया जाता है

कस्टम स्लाइड शो का संपादन करना (Edit a Custom Slide Show)

12. मेनूबार में स्लाइड शो|कस्टम स्लाइड शो (Slide Show/Custom Slide Show) का चयन करें।
13. कस्टम शोज (Custom shows) बॉक्स में स्थित स्लाइड्स को हाईलाइट करके संपादित करें.... (Edit...) बटन की सहायता से वांछित संपादन कर लें।
14. किसी स्लाइड को हटाने या मिटाने के लिये उसे हाईलाइट करके हटायें (Remove)बटन दबायें।
15. अपने कस्टम स्लाइड शो की प्रतिलिपि (copy) बनाने के लिये कॉपी (Copy) बटन को क्लिक करें। संपादन.... (Edit...) बटन को प्रयोग कर के बनाई गई प्रतिलिपि को मिटाया भी जा सकता है।
16. अपने शो के पूर्व-प्रदर्शन (preview) के लिये दिखायें (Show) तथा बाहर आने के लिये बंद (Close) बटन का प्रयोग किया जाता है

पाठ्य समग्री जोड़ना (Add Content)

डिजाइन टेम्प्लेट्स में बुलेटेड लिस्ट (Bulleted Lists on Design Templates)

अपने पाठ्य सामग्री (content) के के मुख्य बिंदुओं को डिजाइन टेम्प्लेट में आकर्षक तथा स्पष्ट रूप से दर्शाने के लिये बुलेटेड लिस्ट का प्रयोग किया जाता है। डिजाइन टेम्प्लेट्स (Design Templates) के टैक्स्ट बॉक्सेस में पूर्व निर्मित बुलेट्स होते हैं जिन पर क्लिक करके पाठ्य सामग्री को टाइप किया जा सकता है। नया बुलेट बनाने के लिये एंटर (Enter) कुंजी दबायें। यदि आप अगली पंक्ति में बुलेट नहीं चाहते तो शिफ्ट+एंटर (Shift+Enter) कुंजी का प्रयोग करें।

नया बुलेटेड लिस्ट बनाना (Design new Bulleted List)

नया बुलेटेड लिस्ट (Bulleted List) बनाने के लिये निम्न विधि अपनायें:

17. स्लाइड व्हियु में मेनूबार से इन्सर्ट/टैक्स्ट बॉक्स (Insert/Text Box) का चयन करें।
18. माउस का बायाँ (left) बटन दबाये हुये ड्रैग करके वांछित आकार का टैक्स्ट बॉक्स बनायें।
19. मेनूबार से फॉर्मेट/बुलेट्स और नम्बरिंग (Format/Bullets and Numbering) को चुनें।
20. अपनी सामग्री के अनुरूप बुलेट्स में परिवर्तन करने के लिये साइज (Size) बॉक्स में प्रतिशत का मान बदलें ।
21. कलर Color मेनू से मनपसंद रंग चुन लें।
22. वांछित बुलेट को हाईलाइट करके OK बटन को क्लिक कर दें।
23. यदि आप चित्र वाला बुलेट बनाना चाहते हैं तो चित्रों को देखने के लिये पिक्चर (Picture) बटन को क्लिक करें।

या यदि आप अपने बुलेट को किसी संकेत (symbol) का रूप देना चाहते

हैं तो बुलेट्स फ्रॉम (Bullets from) ड्रॉप डाउन मेनू को क्लिक करके वांछित संकेताक्षर चुन कर OK बटन दबा दें।

24. अब बुलेट्स और नम्बरिंग (Bullets and Numbering) विन्डो में OK को क्लिक कर दें।

नंबर वाली लिस्ट बनाना (Numbered List)

25. नया टैक्स्ट बॉक्स बनायें।
26. मेनूबार से फॉर्मेट|बुलेट्स एण्ड नंबरिग (Format/Bullets and Numbering) का चयन करें।
27. बुलेट् एण्ड नंबरिंग डॉयलाग बॉक्स में नंबर्ड (Numbered) टैब को क्लिक करें।
28. नंबर्स को अपने टैक्स्ट के उपयुक्त आकार देने के लिये साइज बॉक्स में प्रतिशत को बदलें।

29. मनपसंद रंग के लिये कलर (Color) बॉक्स को क्लिक कर के अपने पसंद का रंग चुन लीजिये।

30. यदि आप 1 नंबर से शुरू न कर के किसी अन्य नंबर से (जैसे कि 5 से) शुरू करना चाहते हैं तो स्टार्ट एट (Start at) बॉक्स में 1 के स्थान पर वांछित नंबर (जैसे कि 5 से) टाइप करें।

31. दिये गये 7 प्रकार में से अपने पसंद के प्रकार के लिस्ट को हाईलाइट कर के OK को क्लिक कर दें।

टैक्स्ट का काम करना (Working with Text)

टैक्स्ट जोड़ना

यदि आपके स्लाइड में पहले से ही टैक्स्ट बॉक्स उपलब्ध है तो सिर्फ आपको उसे क्लिक करना है और अपने हिसाब से टैक्स्ट जोड़ते जाना है पर यदि आपने बिना टैक्स्ट बॉक्स वाले स्लाइड का चुनाव किया है तो आपको उस स्लाइड में टैक्स्ट बॉक्स बनाना होगा जिसके लिये मेनूबार से इन्सर्ट/टैक्स्ट बॉक्स (Insert/Text Box) का चयन करें और माउस से ड्रैग करके टैक्स्ट बॉक्स बना लें। अपनी पसंद के अनुसार टैक्स्ट का संपादन करने के लिये मेनूबार से टूल्स|आप्शन्स (Tools/Options) का चयन करें तथा Edit को क्लिक कर के उसके चेक बॉक्सेस को चेक या अनचेक कर लें।

टैक्स्ट का संपादन करना (Formatting Text)

जिन टैक्स्ट्स का संपादन करना हो उन्हें हाईलाइट कर लें और मेनूबार से फॉर्मेट/फांट (Format/Font) का चयन करें या हाईलाइटेड टैक्स्ट पर दायाँ (right) क्लिक करके पॉपअप शार्टकट मे फांट (Font) को चुनें। फांट (Font) डॉयलाग बॉक्स की सहायता से अपनी पसंद का फेस, साइज, स्टाइल, इफैक्ट, कलर आदि बना लें। परिवर्तनों को देखने के लिये प्रिव्हयु (Preview) बटन का प्रयोग करें।

फांट बदलना (Replace Fonts)

स्वाभाविक है कि डिजाइन टैम्प्लेट के पूर्व उपलब्ध फांट्स को आप अपनी पसंद के अनुसार बदलना चाहेंगे। इसके लिये मेनूबार से फॉर्मेट|रिप्लेस फांट (Format/Replace Font) का चयन करें। ऊपर

वाले ड्रॉप डाउन मेनू से जिन फांट्स में परिवर्तन करना है उनका चयन कर के नीचे वाले वाले ड्रॉप डाउन मेनू में परिवर्तित विकल्प को चुनें और रिप्लेस (Replace) बटन दबा दें।

लाइन स्पेसिंग (Line Spacing)

दो पंक्तियों के मध्य दूरी को बदलने के लिये मेनूबार में फॉर्मेट/लाइन स्पेसिंग (Format/Line Spacing) का चयन करें।

टैक्स्ट का संपादन करना (Formatting Text)

जिन टैक्स्ट्स का संपादन करना हो उन्हें हाईलाइट कर लें और मेनूबार से फॉर्मेट|फांट (Format/Font) का चयन करें या हाईलाइटेड टैक्स्ट पर दायाँ (right) क्लिक करके पॉपअप शार्टकट मे फांट (Font) को चुनें। फांट (Font) डॉयलाग बॉक्स की सहायता से अपनी पसंद का फेस, साइज, स्टाइल, इफैक्ट, कलर आदि बना लें। परिवर्तनों को देखने के लिये प्रिव्हयु (Preview) बटन का प्रयोग करें।

फांट बदलना (Replace Fonts)

स्वाभाविक है कि डिजाइन टैम्प्लेट के पूर्व उपलब्ध फांट्स को आप अपनी पसंद के अनुसार बदलना चाहेंगे। इसके लिये मेनूबार से फॉर्मेट|रिप्लेस फांट (Format/Replace Fon)t का चयन करें। ऊपर वाले ड्रॉप डाउन मेनू से जिन फांट्स में परिवर्तन करना है उनका चयन कर के नीचे वाले वाले ड्रॉप डाउन मेनू में परिवर्तित विकल्प को चुनें और रिप्लेस (Replace) बटन दबा दें।

• **लाइन स्पेसिंग (Line spacing) –** दो पंक्तियों के मध्य सिंगल स्पेस के लिये “1” और डबल स्पेस के लिये “2” का चयन करें।

• **दो पैराग्राफ्स के मध्य दूरी (Before paragraph and After paragraph) –** दो पैराग्राफ्स के बीच जितने लाइन की दूरी रखनी हो उसे यथोचित बॉक्स में टाइप करें।

केस बदलना (Change Case)

किसी पैराग्राफ में फांट्स का केस बदलने के लिये मेनूबार से फॉर्मेट|चेंज केस (Format/Change Case) का चयन करें।

• **सेंटेंस केस (Sentence case) –** प्रत्येक वाक्य के प्रथम अक्षर को

कैपिटल (Capital)बना देता है।

• **लोवरकेस (Lowercase) और अपरकेस (Uppercase) –** समस्त अक्षरों के केस को बदल देता है ।

• **टाइटिल केस (Title case) –** प्रत्येक शब्द के प्रथम अक्षर को कैपिटल (Capital) बना देता है।

• **टोगल केस (Toggle case) –** यह टाइटिल के का ठीक उल्टा है अर्थात् प्रत्येक शब्द के प्रथम अक्षर को लोवरकेस (lowercase) में कर के शेष अक्षरों को कैपिटल (Capital)बना देता है।

स्पेल चेक (Spell Check)

प्रस्तुतीकरन (Presentation) के स्पेलिंग की गलतियों को, यदि कोई हो तो, चेक करने के लिये मेनूबार से टूल्स/स्पेलिंग (Tools/Spelling) का चयन करें या F7 कुंजी दबायें।

• स्पेल चेकर प्रस्तुतीकरण के प्रथम गलत स्पेलिंग वाले शब्द सही स्पेलिंग वाले शब्द या शब्दों की सूची के साथ प्रदर्शित करेगा

• यदि आपका स्पेलिंग सही है (जैसा कि व्यक्तिवाचक संज्ञा के साथ प्रायः होता है) तो इग्नोर (Ignore) या यदि वही शब्द एक से अधिक बार आया हो तो (Ignore All) को क्लिक करें। यदि उस शब्द का प्रयोग और भी प्रस्तुतीकरन में हुआ हो तो एड (Add)बटन दबा कर उस शब्द को स्पेल चेक में जोड़ लें। ताकि स्पेल चेक बार बार उस शब्द को गलत न ठहराये।

• यदि शब्द की स्पेलिंग वास्तव में गलत हो तो सजेशन्स (Suggestions) बॉक्स में सुझाये गये शब्दों में से सही शब्द को हाईलाइट करके या फिर शब्द की स्पेलिंग को सुधार कर चेंज (Change) या यदि वह शब्द एक से अधिक बार आया हो तो चेंज आल (Change All) को क्लिक करें।

• स्पेल चेकर बंद करने के लिये क्लोज (Close) बटन दबायें।

• स्पेलिंग चेक करने की प्रक्रिया पूर्ण हो जाने पर प्रक्रिया पूर्ण वाली नई विन्डो खुलेगी जिसे OK बटन दबा कर बंद कर दें।

स्पेलिंग आप्शन्स (Spelling Options)

मेनूबार से टूल्स|आप्शन्स (Tools/Options) का चयन करके स्पेलिंग एण्ड स्टाइल (Spelling and Style) टैब को क्लिक करें

• **चेक स्पेलिंग एज यू टाइप (Check spelling as you type) –** इस बॉक्स को चेक करने पर जैसे जैसे आप टाइप करते हैं, पॉवर पाइंट उसकी स्पेलिंग चेक करते जाता है और गलत स्पेलिंग वाले शब्द को लाल रंग से अन्डरलाइन कर देता है।

• हाइड स्पेलिंग एरर्स इन दिस डाकुमेंट (Hide spelling errors in this document) – इस बॉक्स को चेक करने गलत स्पेलिंग वाले शब्दों का लाल रंग से अन्डरलाइन होना बंद हो जाता है

• आल्वेज सजेस्ट करेक्शन्स (Always suggest corrections) – गलत स्पेलिंग वाले शब्दों के लिय सही शब्द सुझाने के लिये इस बॉक्स को चेक किया जाता है।

• **इग्नोर वर्ड्स इन अपरकेस (Ignore words in UPPERCASE) –** अपरकेस में टाइप किये गये शब्दों के लिये हमेशा पॉवर पाइंट टोकता है, इससे बचने के लिये इस बॉक्स को चेक कर दें।

• इग्नोर वर्ड्स विथ नंबर्स (Ignore words with numbers) – उपरोक्तानुसार, यदि शब्द और संख्या दोनों को मिश्रित किया गया हो।

कलर स्कीम्स (Color Schemes)

• मेनूबार से फॉर्मेट/स्लाइड कलर स्कीम (Format/Slide Color Scheme) का चयन करें।

• कलर स्कीम डॉयलाग बॉक्स में किसी पूर्व निर्मित कलर स्कीम Color schemesथम्भनेल पर क्लिक करें।

• चयनित कलर स्कीम कैसा दिखेगा जानने के लिये प्रिव्हियु (Preview) बटन को क्लिक करें।

• कलर स्कीम में परिवर्तन करने के लिये कस्टम (Custom) टैब पर क्लिक करें।

• स्लाइड के विभिन्न अवयवों जैसे कि बैकग्राउंड, टैक्स्ट/लाइन आदि के रंगों में परिवर्तन के लिये दिये गये बॉक्स में मनमाफिक रंगों का

चुनाव करके चेंज कलर (Change colorबटन दबायें।

• टैक्स्ट एण्ड लाइन कलर (Text and Line Color) डॉयलाग बॉक्स में वांछित रंग को हाईलाइट करें या और अधिक रंग देखने के लिये Custom टैब का चुनाव करें। अपनी पसंद का रंग चुन लेने के बाद OK बटन दबा दें।

• फॉर्मेटिंग पूर्ण कर लेने पर कलर स्कीम को प्रस्तुतीकरन के सभी स्लाइड्स पर लागू करने के लिये अप्लाय टू आल (Apply to All) या यदि कलर स्कीम को केवल एक स्लाइड पर लागू करना हो तो अप्लाय (Apply) बटन को क्लिक करें।

बैकग्राउंड्स (Backgrounds)

अपने प्रस्तुतीकरन के बैकग्राउंड में रंग तथा पैटर्न्स जोड़ने के लिये निम्न विधि अपनायें:

• मेनूबार से फॉर्मेट|बैकग्राउंड (Format/Background) का चयन करें।

• बैकग्राउंड फिल (Background fill) ड्रॉप डाउन मेनू से वांछित रंग का चुनाव करें या और अधिक रंगों को देखने के लिये मोर कलर्स (More Colors…) बटन दबायें।

• बैकग्राउंड में ग्रैडियेंट, टैक्स्चर, पैटर्न्स या पिक्चर डालने के लिये ड्रॉप डाउन मेनू से फिल इफैक्ट्स (Fill Effects) को क्लिक करें।

• ग्रैडियेंट टैब (Gradient tab)

फीका बैकग्राउंड देने के लिये वन कलर (One color) का चयन करें तथा कलर1 (Color 1) ड्रॉप डाउन मेनू से रंगो को मनपसंद ढंग से फीका गाढ़ा कर लें। मध्यम बैकग्राउंड देने के लिये टू कलर्स (Two colors) को चुनें तथा फीका गाढ़ा करने के लिये कलर1 (Color 1) और कलर2 (Color 2) दोनों ही का प्रयोग करें। प्रीसेट (Preset) में आपकी सुविधा के लिये विभिन्न आकर्षक पूर्व निर्मितPreset colors रंग संयोजन (color combinations)उपलब्ध हैं।

• शेडिंग स्टाइल (Shading styles) से मनपसंद स्टाइल चुन लें।

• **टैक्स्चर टैब (Gradient tab)**
• बैकग्राउंड में टैक्स्चर देने के लिये वांछित टैक्स्चर का चुनाव करें या इनके अलावा कोई अलग टैक्स्चर देना हो तो अदर टैक्स्चर (Other Texture…) को क्लिक करें।
• **पैटर्न टैब (Pattern tab)**
• पैटर्न डालने के लिये वांछित पैटर्न का चुनाव कर लें। पैटर्न के फोरग्राउंड (Foreground) तथा बैकग्राउंड (Background) के रंगों में परिवर्तन के लिये नीचे केबॉक्सेस का प्रयोग करें।
• **पिक्चर टैब (Picture tab)**
इसका प्रयोग करके आप अपने प्रस्तुतीकरन के बैकग्राउंड में अपनी पसंद का चित्र बना सकते हैं।
ग्राफिक्स (Graphics)
ड्राइंग टूलबार की सहायता से आप विभिन्न प्रकार ग्राफिक्स बना सकते हैं तथा उनका संपादन भी कर सकते हैं। यह टूलबार पॉवर पाइंट स्क्रीन में नीचे में स्थित होता है। यदि आपके पॉवर पाइंट स्क्रीन में ड्राइंग टूलबार दिखाई न दे राह हो तो मेनू बार से व्हियु/टूलबार/ड्राइंग (View/Toolbars/Drawing) का चयन करें।
• **मेनू (Menu) -**
o **ग्रुपिंग (Grouping) –** एक से अधिक चित्रों को ग्रुपिंग कर के एक साथ हटाने के लिये शिफ्ट (SHIFT) कुंजी दबाये हुये उन चित्रों को क्लिक करें। फिर ड्रा (Draw) मेनू से ग्रुप(Group) को चुन लें। ग्रुपिंग का उदाहरण नीचे चित्र में प्रस्तुत किया जा रहा है। अनग्रुप करने के लिये ड्रा (Draw) से ही अनग्रुप (Ungroup) का चयन करें।
o **आर्डर (Order) –** इस अवयव की सहायता से चित्रों के ऊपर नीचे का क्रम बदला जा सकता है। प्रस्तुत उदाहरण में ऊपर के नीले रंग वाले चित्र को सेंड बैकवर्ड (Send Backward) निर्देश (command) द्वारा नीचे भेज दिया गया है। इसे फिर से ऊपर लाने के लिये ब्रिंग फारवर्ड (Bring Forward) निर्देश का प्रयोग करना होगा।
o **नुड्गे (Nudge) –** विषयवस्तु (object) किसी एक दिशा में जरा सा

हटाने के लिये नुड्गे का प्रयोग किया जाता है।
o **अलाइन या डिस्ट्रिब्यूट (Align or Distribute) –** इन अवयवों का प्रयोग ग्रुपिंग के विषय वस्तुओं के एक दूसरे का स्थान परिवर्तन के लिये किया जाता है।
o **रोटेट या फ्लिप (Rotate or Flip) –** विषय वस्तु को 90 अंश से घुमाने के लिये रोटेट एक अक्ष (axis) से दूसरे अक्ष में ले जाने के लिये फ्लिप का प्रयोग किया जाता है।
• **फ्री रोटेट (Free rotate) –** इस बटन से विषयवस्तु पर हरे रंग के हैंडल्स बन जाते हैं जिनकी सहायता से आप उसे अपनी पसंद के अनुसार घुमा सकते हैं।

क्लिप आर्ट जोड़ना

अपने डाकुमेंट में माइक्रोसॉफ्ट लाइब्रेरी से क्लिप आर्ट लगाने के लिये निम्नलिखित विधि अपनायें:
• मेनूबार में इन्सर्ट|पिक्चर|क्लिप आर्ट (Insert/Picture/Clip Art) का चयन करें।

• वांछित चित्र खोजने के लिये सर्च फॉर क्लिप (Search for clips) के बाजू वाले सफेद बॉक्स में अपनी पसंद के चित्र से सम्बंधित एक या एक से अधिक 'कीवर्ड' टाइप करें और एंटर दबायें।याकिसी केटेगरी (category) आइकान को क्लिक करें।
• जिस चित्र को आप अपने डाकुमेंट में लगाना चाहते हैं उसे एक बार क्लिक करें। क्लिक करने पर नीचे दिये गये चित्र के अनुसार पॉपअप बॉक्स खुलेगा।
• चित्र लगाना (Insert Clip): अब चित्र को लगाने के लिये इन्सर्ट क्लिप को क्लिक करें।
• चित्र लगाने के पहले उसे देखना (Preview Clip): चित्र लगाने के पहले उसे देखने लिये प्रीव्हियु क्लिप को क्लिक करें।
• क्लिप को अपने फेव्हरिट्स में जोड़ना (Add Clip to Favorites): इसके द्वारा आप किसी भी क्लिप को अपने फेव्हरिट

डायरेक्टरी में जोड़ सकते हैं।
किसी फाइल से चित्र लगाना:
• मेनूबार में इन्सर्ट|पिक्चर|फ्रॉम फाइल (Insert/Picture/From File) का चयन करें।
• लुक इन (Look in) विन्डो से चित्र प्राप्त करें।
• चित्र वाले फाइल को हाईलाइट करें और इन्सर्ट बटन को क्लिक कर दें।

इड इफैक्ट्स (Slide Effects)

एक्शन बटन्स (Action Buttons)

अपने प्रस्तुतीकरण में विभिन्न कार्यों के लिये बटन जोड़ने हेतु एक्शन बटन्स टूलबार का प्रयोग करें।
• मेनूबार से स्लाईड शो/एक्शन बटन्स (Slide Show/Action Buttons) का चुनाव करें तथा उसे ड्रैग करके मेनूबार से बाहर ले आयें ताकि वह फ्लोटिंग टूलबार (floating toolbar) में परिणित हो जाये।
• टूल बार में अपने पसंद के बटन को क्लिक करें जिससे कि एक्शन सेटिंग्स (Action Settings) मेनू खुल जाय।
• माउस क्लिक (Mouse Click) या माउस ओव्हर (Mouse Over) टैब में से किसी एक में चाहे गये एक्शन्स को सेट कर लें। यदि आप माउस क्लिक टैब में एक्शन्स को सेट करते हैं तो बटन को क्लिक करने पर एक्शन होगा और यदि आप माउस ओव्हर टैब में एक्शन्स को सेट करते हैं तो बटन पर केवल माउस एरो ले जाने पर ही एक्शन होगा।
• एक्शन होने पर किस स्लाइड में जाना है तय करने के लिये हाइपरलिंक टू (Hyperlink to बाक्स में डेस्टिनेशन का चुनाव कर लीजिये।
• यदि आपको अपने प्रस्तुतीकरन में साउंड इफैक्ट का प्रयोग करना है तो प्ले साउंड (Play sound बॉक्स को चेक करें तथा ड्रॉप डाउन मेनू से वांछित साउंड का चुनाव कर लें।

• अब OK को क्लिक कर दें।
• स्लाइड पर लगाये गये बटन के आकार में परिवर्तन करने के लिये उसके हैंडल्स का प्रयोग करें तथा उसके डेफ्थ में परिवर्तन करने के लिये यलो डॉयमन्ड का प्रयोग करें।

स्लाइड एनीमेशन (Slide Animation)

प्रस्तुतीकरन के जिन टैक्स्ट या ग्राफिक्स में एनीमेशन देना हो उन्हें हाईलाइट कर के मेनूबार से स्लाइड शो|प्रिसेट एनीमेशन (Slide Show/Preset Animation) का चयन करें और उपलब्ध विकल्पों में से किसी एक विकल्प को चुन लें। और अधिक विकल्पों केलिये नीचे बताये गये विधि का प्रयोग करें।

• मेनूबार से स्लाइड शो/कस्टम एनीमेशन (Slide Show/Custom Animation) का चयन करें।
• चेक टू एनीमेट स्लाइड आब्जेक्ट (Check to animate slide objects) के लिस्ट में से उस/उन आब्जेक्ट को चेक करें जिसे/जिन्हें एनीमेट करना है।
• इफैक्ट टैब (Effects tab), से एनीमेशन के प्रकार का चुनाव कर लें या यदि किसी आब्जेक्ट के लिये एनीमेशन बंद करना हो तो "नो इफैक्ट (No Effect)" को चुनें। ड्रॉप डाउन मेनू से एनीमेश की दिशा का चुनाव कर लें और यदि साउंड इफैक्ट देना हो तो वांछित साउंड का भी चुनाव करें।
• एनीमेशन वाले आब्जेक्ट्स का आफ्टर एनीमेशन (After animation) इफैक्ट का चुनाव करें।
• कलर पैलेट (Color palette) – उपलब्ध रंगों में से किसी एक रंग का चुनाव करें या अधिक रंग देखने के लिये मोर कलर्स (More Colors) को क्लिक करें। आप जिस रंग का चुनाव करेंगे, स्लाइड शो के समय आपका आब्जेक्ट उसी रंग में एनीमेट करेगा।
• **डोन्ट डिम (Don't Dim) –** यह विकल्प एनीमेशन के बाद सभी इफैक्ट्स को मिटा देता है।
• हाइड आफ्टर एनीमेशन (Hide After Animation) – एनीमेशन

समाप्त होने पर सभी टैक्स्ट मिट जाते हैं।

• **हाइड आन नैक्स्ट माउस क्लिक (Hide on Next Mouse click) –** एनीमेशन के बाद क्लिक करने पर टैक्स्ट मिट जाते हैं।

• स्लाइड शो के दौरान टैक्स्ट किस प्रकार से दिखेंगे का चुनाव इंट्रोड्यूस टैक्स्ट (Introduce text) सेक्शन से करें। यदि आप “आल एट वन्स (All at once)” को चुनेंगे तो पूरे टैक्स्ट एक बार में ही दिखेंगे, “बाय वर्ड (by Word)” चुनने से स्लाइड शो में एक एक करके शब्द दिखाई पड़ेंगे और “बाय लेटर (by Letter)” का चुनाव करने पर एक एक अक्षर दिखाई पड़ेंगे जैसा कि टाइप करते समय दिखता है।

• आब्जेक्ट्स का क्रम बदलने के लिये आर्डर (Order) & टाइमिंग (Timing) टैब को क्लिक कर के जिस आब्जेक्ट का क्रम बदलना हो उसे हाईलाइट करके मूव्ह (Move) एरो से वांछित स्थान में पहुँचा दे।

• एनीमेशन को देखने के लिये प्रिव्हियु (Preview) बटन को क्लिक करें और संतुष्ट हो जाने पर OK बटन दबा दें।

मास्टर स्लाइड्स (Master Slides)

स्लाइड मास्टर (Slide Master)

प्रस्तुतीकरण के सभी स्लाइड्स के स्टाइल में एक साथ परिवर्तन करने के लिये स्लाइड मास्टर (Slide Master) का प्रयोग किया जाता है। प्रत्येक डिजाइन टेम्प्लेट का अपना अलग मास्टर स्लाइड होता है जिसमें वांछित परिवर्तन करने पर प्रस्तुतीकरण के सभी स्लाइड्स में वैसा ही परिवर्तन हो जाता है। यदि आप डिजाइन टेम्प्लेट्स का प्रयोग न करके अपना स्वयं का डिजाइन बनाते हैं तो उसमें भी आप मास्टर स्लाइड जोड़ सकते हैं जिसके लिये निम्न विधि अपनायें।

• मेनू बार से व्हियु/स्लाइड मास्टर (View/Master/Slide Master) का चयन करें।

• जिस प्रकार से साधारण स्लाइड को आप फॉर्मेट करते हैं उसी प्रकार से मास्टर स्लाइड के टैक्स्ट, लिस्ट आदि को अपनी पसंद के अनुसार फॉर्मेट करें। वांछित बैकग्राउंड पैटर्न्स तथा इफैक्ट्स, फूटर सेटिंग्स

आदि भी कर लें।

• कार्य सम्पन्न हो जाने के बाद मास्टर टूलबार (Master toolbar) में क्लोज (Close)बटन को क्लिक कर दें।

हेडर्स व फूटर्स (Headers and Footers)

अपने प्रस्तुतीकरण में दिनांक, समय, स्लाइड क्रमांक आदि दर्शाने के लिये हेडर्स व फूटर्स का प्रयोग करें।

• मेनूबार से हेडर एण्ड फूटर… (View/Header and Footer…) का चयन करें।

• दिनांक व समय दर्शाने के लिये डेट एण्ड टाइम (Date and time) बॉक्स को चेक करें। अपडेट आटोमेटिकली (Update automatically) को सेलेक्ट करने पर पॉवर पाइंट स्वतः ही वर्तमान दिनांक व समय को दर्शाने लगता है, यदि आपको वर्तमान दिनांक व समय नहीं दर्शाना है तो फिक्स्ड (Fixed) को क्लिक करके वांछित दिनांक की प्रविष्टि कर दें।

• स्लाइड क्रमांक दर्शाने के लिये स्लाइड नंबर (Slide number) बॉक्स को चेक करें।

• यदि आप और कुछ टैक्स्ट दर्शाना चाहते हैं तोफूटर (Footer) बॉक्स को क्लिक कर के वांछित टैक्स्ट की प्रविष्टि करें।

• उपरोक्त सभी चीजों को छिपाने के लिये डोन्ट शो आन टाइटल स्लाइड (Don’t show on title slide) बॉक्स को चेक करें।

• नोट्स तथा हैंडआउट्स पृष्ठों मे बदलाव के लिये नोट्स व हैंडआउट्स (Notes and Handouts) टैब को क्लिक कर के वांछित परिवर्तन कर लें।

• इन परिवर्तनों को सभी स्लाइड्स में लागू करने के लिये अप्लाय टू आल (Apply to All) को क्लिक करें या फिर यदि परिवर्तनों को सिर्फ वर्तमान स्लाइड में ही दिखाना है तो अप्लाय (Apply) को क्लिक करें।

स्लाइड क्रमांक (Slide Numbers)

यदि आप स्लाइड क्रमांक को हेडर या फूटर में न दर्शा कर स्लाइई के किसी अन्य स्थान पर दिखाना चाहते हैं तो मेनूबार से इन्सर्ट/स्लाइड

नंबर (Insert/Slide Number) का चयन करें।

दिनांक व समय (Date and Time)

दिनांक व समय को भी हेडर या फूटर में न दर्शा कर स्लाइड में किसी अन्य नियतस्थान पर दिखाया जा सकता है। इसके लिये मेनूबार से इन्सर्ट/डेट एण्ड टाइम(Insert/Date and Time) का चयन करें। उपलब्ध फॉर्मेट्स (Available formats) बॉक्स से मनपसंद फॉर्मेट का चुनाव कर लें। और यदि दिनांक व समय में पॉवर पाइंट के द्वारा स्वतः परिवर्तन कराना हो तो अपडेट आटोमेटिकली (Update automatically) को भी सेलेक्ट कर लें। कार्य सम्पन्न होने पर OK को क्लिक कर दें।

सुरक्षित करना तथा छपाई करना (Saving and Printing)

सेव्ह ऐज वेब पेज (Save as Web Page)

किसी भी प्रस्तुतीकरण को मेनूबार से फाइल/सेव्ह (File/Save) का चयन करके सुरक्षित किया जा सकता है। किन्तु यदि आप अपने प्रस्तुतीकरण को अन्तर्जाल में प्रदर्शित करना चाहते हों तो उसे वेब पेज के जैसे सुरक्षित करना होगा। वेब पेज जैसे सुरक्षित करने से आपके प्रस्तुतीकरण को वे लोग भी देख पायेंगे जिन्होंने अपने कम्प्यूटर में पॉवर पॉइंट को इंस्टाल नहीं किया है। प्रस्तुतीकरण को वेब पेज के जैसे सुरक्षित करने के लिये मेनूबार से फाइल|सेव्ह ऐज वेब पेज (File/Save As Web Page) का चुनाव करें। लुक इन: (Look in:) ड्रॉप डाउन मेनू से अपने वेब पेज डायरेक्टरी को चुन कर फाइल नेम: (File name:) बॉक्स में प्रस्तुतीकरण के नाम की प्रविष्टि कर लें और सेव्ह (Save) बटन को क्लिक कर के प्रस्तुतीकरण को वेब पेज के रूप में सुरक्षित कर लें।

पेज सेटअप (Page Setup)

प्रस्तुतीकरण के छपाई के विकल्पों को देखने के लिये मेनूबार से फाइल|पेज सेटअप (File/Page Setup) का चयन करें। स्लाइड्स साइज्ड फॉर (Slides sized for) ड्रॉप डाउन मेनू से पूर्वनिश्चित साइज को चुनें या अपने हिसाब से विड्थ (Width) और

हाइट(Height) बॉक्सेस में प्रविष्टि कर लें। पृष्ठ को लंबाई में रखने के लिये ओरिएन्टेशन (Orientation) सेक्शन में पोर्ट्रेट को चुनें या फिर पृष्ठ को चौड़ाई में रखने के लिये लैंडस्केप को चुनें।

छपाई (Print)

प्रस्तुतीकरण की छपाई करने के लिये मेनूबार से फाइल|प्रिंट (File/Print) का चयन करें।

प्रिंट रेंज (Print range) – पूरे प्रस्तुतीकरण की छपाई के लिये आल (All) को चुनें, सिर्फ वर्तमान स्लाइट की छपाई के लिये करेंट स्लाइड (Current slide) को चुने या किसी अन्य स्लाइड की छपाई के लिये स्लाइड्स (Slides) फील्ड में स्लाइड क्रमांक की प्रविष्टि करें।

प्रतियाँ (Copies) – जितनी प्रतियाँ छापनी हो उसकी संख्या की प्रविष्टि कोलेट (Collate)बॉक्स में करें।

क्या छापना है (Print What) –

• **स्लाइड्स (Slides)** इससे पूरे पृष्ठ में एक स्लाइड की छपाई होती है।

• **हैंडआउट्स (Handouts)** प्रत्येक पृष्ठ में मनचाही संख्या में स्लाइड्स को छापें

• **नोट्स पेझ (Notes Page)** इसके द्वारा एक पृष्ठ में एक स्लाइड और उसकी टिप्पणियों को एक साथ छापें।

• **आउटलाइन व्हियु (Outline view)** इससे प्रस्तुतीकरण के सिर्फ आउटलाइन की छपाई होती है।

छपाई के सही विकल्प को चुनने के पश्चात् OK बटन को क्लिक कर दें।

15.6 प्रश्न

1.कम्प्यूटर क्या होता है।

2. कम्प्यूटर के घटक कौन कौन से है

3.पॉवर पाइंट पर काम कैसे किया जाता है

15.7 संदर्भ ग्रन्थ

प्रसार शिक्षा –डा. वंदना जैन , डा पूनम कुमारी

प्रसार शिक्षा-डा बी. डी. हरपलानी

प्रसार शिक्षा- डा वृंदा सिंह